सम्पादक:

परमानन्द रस्तोगी

●

देश दर्शन अंक

(प्रथम खण्ड)

प्रकाशक:

भारतीय प्रकाशन

१९८, ताजीखाना

लखनऊ-१

फोन: २२८३०

मूल्य: २.५० रुपया

कहाँ क्या

अपनी बात

'देश दर्शन' का प्रथम खण्ड आप के हाथ में है। हमें अत्यन्त खेद है कि हम उसे समय पर प्रकाशित करने में असमर्थ रहे। अल्प पूंजी से चलने वाले पत्र-पत्रिकाओं को जिन अकथनीय कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, 'भारतीय जगत' भी उनका अपवाद नहीं रहा। निरन्तर संघर्ष करते रहने पर भी अन्ततः उसके पिछले कुछ अंक प्रकाशित नहीं हो सके।

उसके बाद कागज का भीषण अकाल और आकाश को छूने वाली मूल्य वृद्धि ने उसे एक धक्का और दिया। प्रेस वालों का सहयोग पत्र-पत्रिकाओं को कितना मिलता है यह सभी भुक्तभोगी जानते हैं। समय पर अंक निकाल पाना बिना अपने प्रेस के सर्वथा असम्भव है।

सरकारी सहयोग भी लघु पत्र-पत्रिकाओं के लिये जितना कुछ है वह शोचनीय ही है। कागज का कोटा प्राप्त करने की जो सीढ़ियाँ हैं वह किसी भी असमर्थ व्यक्ति के लिये दुर्गम हैं। सरकारी विज्ञापन उन्हीं पत्र-पत्रिकाओं को अधिक मिलते हैं जो समर्थ हैं, सम्पन्न हैं। जो कुछ थोड़े बहुत विज्ञापन लघु पत्रों आदि को बँटते हैं वे अधिकतर उन्हें ही प्राप्त हो पाते हैं जिनकी शासन के कुछ प्रमुख व्यक्तियों तक पहुंच है।

'देशद र्शन' के प्रकाशन में इन आर्थिक पक्षों के अतिरिक्त अंक की सामग्री जुटाने में भी किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा उसकी चर्चा न करना भी अनुचित ही होगा। 'देश दर्शन अंक' भारत में पर्यटन तथा तीर्थयात्रा पर आधारित है। स्वभावतः उसकी सामग्री हमें पर्यटन विभागों तथा सभी राज्यों के सूचना निदेशालयों से प्राप्त हो जाना चाहिये थी। हमने इसी आशा से सभी राज्यों के पर्यटन निदेशक तथा

सूचना निदेशकों से लिखा-पढ़ी की। अपने-अपने राज्यों के दर्शनीय स्थलों पर ज्ञानवर्धक लेख तथा तत्संबंधी चित्र माँगे। केन्द्रीय पर्यटन विभाग को भी लिखा। किन्तु खेद ही नहीं दुख के साथ कहना पड़ता है कि केवल पांच प्रदेशों (जिसमें हमारा ही राज्य उत्तर प्रदेश नहीं है) को छोड़कर किसी ने हमारे पत्रों का उत्तर तक देना आवश्यक नहीं समझा। जिन प्रदेशों ने सामग्री भेजी भी तो वह वे बुकलेटें थीं जो पर्यटकों को दी जाती हैं। कहीं से भी कोई फोटो चित्र नहीं आया।

हर प्रदेश के इतने बड़े-बड़े पर्यटन तथा सूचना विभाग जिनमें हजारों आफिसर और लाखों बाबू काम करते हैं और जिन पर करोड़ों रुपया खर्च होता है आखिर किस लिये खोले गये हैं ? यदि सामान्य जन को छोटी सी जानकारी भी नहीं दे सकते तो इन सूचना विभागों की क्या आवश्यकता ? यदि एक पर्यटक या तीर्थयात्री को मार्ग दर्शन संबंधी बात नहीं बता सकते तो इन पर्यटन विभागों से क्या लाभ ?

सूचना विभागों में दर्शनीय स्थलों, महत्वपूर्ण कार्यों आदि से संबंधित ब्लाक भी पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने के लिये तैयार कराये जाते हैं जिन पर सरकार की एक बड़ी रकम खर्च होती है किन्तु लाल फीता-शाही में उनका मिलना भी असम्भव है। कभी इस अधिकारी कभी उस अधिकारी के पास की भागदौड़ में शक्ति समाप्त हो जाती है और निराश हो ब्लाक पाने की आशा छोड़कर बैठ जाना पड़ता है।

'देश दर्शन' अंक को यह सभी कठिनाइयाँ झेलना पड़ी हैं। फिर भी, हमने हिम्मत नहीं हारी और येन केन प्रकारेण 'देश दर्शन' को दो खण्डों में नकालने का निश्चय किया। प्रथम खण्ड आपको समर्पित है। आशानुकूल सामग्री, चित्र आदि न दे पाने पर भी अगले खण्ड में उन सभी कमियों को पूरी करने के प्रयास में हम अभी से जुटे हैं। आशा है हमारे कृपाल पाठक हमसे सहयोग करेंगे।

भारत :

आदिकाल से पर्यटकों का स्वप्नदेश

पी० आनन्द

शताब्दियों पूर्व से ही भारत विदेशियों के लिये स्वप्न देश रहा है। लोग अपने बच्चों को भारत के महान ऐश्वर्य और वैभव की ऐसी रोचक कहानियां सुनाया करते थे कि उनमें बचपन से ही भारत को देखने की उत्कट आकाँक्षा उत्पन्न हो जाती थी और हर एक बड़ा होकर भारत आने के मन्सूबे बनाने लगता था। तब किसी दूर के दूसरे देश में पहुंच पाना सरल नहीं था। दुर्गम वनों, पर्वतों और रेगिस्तानों को पार कर कहीं पहुंचना विरले ही साहसियों का कार्य था। फिर भी इन विषम परिस्थितियों में भी अनेक विदेशी यात्री भारत आते रहते थे।

प्राचीनतम संस्कृति के चार प्रमुख देशों— भारत, मिश्र, मेसोपटामिया और चीन में भारत की भौगोलिक स्थिति मध्य में है। इस लिये उसका इन देशों से सुगम सम्पर्क था और ईसा पूर्व से ही उसका विदेशों से व्यापारिक सम्बन्ध भी था। भारत का कला कौशल अपने चरम उत्कर्ष पर था और यहाँ के बने हुये वस्त्र एवं कलात्मक वस्तुयें विदेशों के बाजारों में छाई रहती थीं और बड़े ऊंचे दामों पर वहाँ बिकतीं थीं। रोम की स्त्रियाँ भारतीय वस्त्रों-विशेषकर यहाँ की

मलमल के लिये कैसी दीवानी रहती थीं इसका बड़ा ही रोचक वर्णन यूनानी पर्यटकों के यात्रा विवरणों में मिलता है। मिश्र और अरब देशों में भारत को सोने की चिड़िया ही कहा जाता था और उसी सोने की चिड़िया को देखने इब्नबतूता जैसे कितने ही यात्री यहाँ आये थे।

इन लोगों ने जहाँ अपने भारत दर्शन का सुन्दर वर्णन किया है वहाँ यहां के वैभव को दिखाने के लिये कुछ विचित्र बातें भी लिखी हैं। इब्नबतूता ने यहाँ भूमि से सोना खोदकर लाने वाली चीटियों की चर्चा की है।

भारत आने वाले विदेशी यात्रियों में अधिकाँश आर्थिक दृष्टि से व्यापार आदि के लिये ही आते थे। पर कुछ लोग धार्मिक जिज्ञासा एवं भारत दर्शन के लिये भी आते थे। चीन के अनेक यात्री धार्मिक दृष्टि से ही यहाँ आये पर उन्होंने अपने भारत प्रवास में यहाँ के प्रमुख स्थानों की यात्रायें भी की। ह्वेन्सांग बौद्ध धर्म के अध्ययन के लिये यहाँ आया था, पर वह बौद्ध तीर्थों के अतिरिक्त कन्नौज और कुरुक्षेत्र आदि भी गया। फाह्यान ने दक्षिण भारत की भी यात्रा की थी।

भारत का वैभव और धन की चकाचौंध तो विदेशियों को मुग्ध करती ही थी, पर यहां का प्राकृतिक सौंदर्य भी उन्हें कम आकृष्ट नहीं करता था। यहाँ की दुग्ध-धवल पर्वत मालायें, मुक्तमाल से सुन्दर झरने, इठलाती नदियों से आवेष्ठित शस्य-श्यामल विस्तृत मैदान, फूलों और फलों से लदे वन और उद्यान और उन सबके इर्द-गिर्द ऊंची-ऊंची अट्टालिकाओं, विशाल मंदिरों, और बड़ी-बड़ी बाजारों वाले नगर भी पर्यटकों के विशेष आकर्षण केन्द्र थे।

चौथी-पाँचवीं शताब्दी के बाद से स्थापत्य कला का काफी विकास हुआ और उसके बाद से एक से एक सुन्दर भवन, मंदिर और अन्य कला कृतियां सामने आईं। उनमें से अनेक आज भी अपने गौरव का प्रदर्शन करती खड़ी हैं किन्तु दुर्भाग्यवश अधिकांश आततायियों के अत्याचार का शिकार हो गई या काल के आघात में समाप्त हो गईं। मुस्लिम शासन काल में कई धर्मांध शासकों ने अनगिनत प्रवीण शिल्पियों की वर्षों की साधना से निर्मित सुन्दर मंदिरों

एवं अद्वितीय मूर्तियों को तोड़-फोड़ कर वर्बाद कर दिया फिर भी उनके टूटे-फूटे खण्डों को देखने आज कितने ही विदेशी पर्यटक आते हैं। मुस्लिम शासकों ने भी अपनी शान कायम रखने के लिये कई सुन्दर भवनों का निर्माण किया। कुछ शासक वस्तुत: कलाप्रेमी थे। ताज-महल जैसी कृतियां उनके सौंदर्यबोध और कला-प्रेम की परिचायक हैं। इस युग के कुछ भवन और उद्यान आदि वस्तुत: दर्शनीय हैं और पर्यटकों को भारत आने का आमंत्रण देते हैं।

ब्रिटिश शासन काल में भवन निर्माण कला में यद्यपि बहुत कुछ परिवर्तन आ चुका था। महीन कला के स्थान पर विशालता एवं सादगी को महत्व दिया जाने लगा था, पर अंग्रेज शासकों ने भारत में बहुत सी ऐसी इमारतें बनवाई जिनमें भारतीय कला तथा शैली का पुट था। यही कारण है कि अँग्रेजों द्वारा बनवाये हुये कई भवन दर्शनीय हैं। कलकत्ता का विक्टोरिया मेमोरियल भवन तथा दिल्ली के सेक्रेटेरियट भवन आदि इसके उदाहरण हैं।

अंग्रेज़ शासकों ने सबसे वड़ा प्रशंसनीय कार्य इस क्षेत्र में जो किया वह यह कि उन्होंने पहले के बने किसी भी मंदिर, मस्जिद या अन्य भवन को कोई नुकसान नहीं पहुंचाया अपितु उसकी रक्षा और मरम्मत की पूरी-पूरी व्यवस्था की। हिन्दू शासन काल के बाद मुस्लिम काल में मंदिरों और भवनों की जैसी बेरहम तोड़-फोड़ हुई वैसी ही यदि अँग्रेजों ने भी की होती तो आज भारत मात्र खंडहरों का देश होता और पर्यटक यहाँ मोहन जोदड़ो और हड़प्पा की कड़ी जोड़ने के लिये आता। सौभाग्य से तोड़-फोड़ की क्रूर परम्परा मुस्लिम शासकों तक ही सीमित रही और युग-युग से विदेशी पर्यटकों को आकृष्ट करने वाला भारत आज भी अपने सुरम्य प्राकृतिक स्थलों, कलात्मक मंदिरों और भवनों के वैभव से पर्यटकों को आकर्षित करता है।

तीर्थयात्रा :

पर्यटन का आदि स्वरूप

पर्यटन शब्द का प्रचलन भारत में भले ही आधुनिक हो पर पर्यटन का स्वरूप भारत के लिये नया नहीं है। अत्यन्त प्राचीनकाल से ही भारतीय अपने देश को देखने समझने के लिये प्रयत्नशील रहे हैं। वैदिक काल से लेकर पुराण युग तक देश की तत्कालीन भौगोलिक जानकारी के कितने ही पुष्ट प्रमाण मिलते हैं। इन सब विवरणों से सहज ही कल्पना होती है कि उन दिनों भी लोग देश दर्शन के लिये देश के सुदूर तथा दुर्गम स्थानों की यात्रायें करते थे।

देश के कोने-कोने में तीर्थों की स्थापना और प्रतिष्ठा के पीछे भी देशदर्शन की भावना छिपी है। यह भावना केवल देशदर्शन ही नहीं पूरे भारत में एक्य-भाव-स्थापन को भी बल देती थी। हमारे प्राचीन मनीषियों ने बड़ी दूरदर्शिता से काम लेकर तीर्थों की स्थापना की तथा उन्हें अखिल भारतीय मान्यता दी।

भारत जैसे हजारों मील लम्बे-चौड़े विशल देश के लोग एक दूसरे से सम्बद्ध रहें तथा उनमें राष्ट्रीय एकता बनी रहे इसके लिये एक ऐसे सूत्र की आवश्यकता थी जो उन्हें जोड़े रहे। वह युग धार्मिक युग था। धर्म ही समस्त देश के भारतीयों को एक सूत्र में जोड़ रख सकता था। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर भारत की चारों दिशाओं में चार धामों की स्थापना की। धुर उत्तर में बदरीनाथ, धुर दक्षिण में रामेश्वरम, पूर्व में जगन्नाथ पुरी तथा पश्चिम में द्वारिकापुरी।

इतना ही नहीं एक स्थान के लोग दूसरे स्थान में जायें, इसके लिये उन्होंने कुछ अनिवार्य नियम भी बना दिये जैसे गंगोत्री का जल लेकर रामेश्वरम में चढ़ाये बिना तीर्थ

यात्रा का पुण्य अधूरा रहेगा। दक्षिण के लोग काशी में जब तक गंगा स्नान कर पिंड न नहीं करेंगे तथा काशी विश्वनाथ के दर्शन नहीं करेंगे तब तक उनके पूर्व पितरों का उद्धार नहीं होगा और न ही उन्हें स्वर्ग प्राप्ति होगी।

इसी प्रकार देश के अन्य बहुत से तीर्थों के संबंध में भी भिन्न-भिन्न धारणायें और मान्यतायें प्रचलित हुई। जैसे गया में मृत सबंधियों का पिंडदान तथा श्राद्ध करने से मृत आत्माओं को मुक्ति मिलेगी तथा स्वर्ग प्राप्ति होगी आदि।

जिन दिनों तीर्थ परम्परा का उदय हुआ उन दिनों यातायात के साधन बहुत ही सीमित एवं अविकसित थे। दुर्गम वनों, दुर्लंघ्य पर्वतों तथा मरुस्थलों और विशाल नदी-नालों को पार करने के लिये न तो आज कल जैसे रेल हवाई जहाज थे न मोटर-बसें। उन दिनों यात्रिओं को अधिकतर पैदल, घोड़ों या बैल गाड़ियों से ही यात्रायें करना पड़तीं थीं। ऊपर से मार्ग में हिंस्र पशुओं, चोर-डाकुओं आदि का भय भी रहता था। कितने ही लोग इन यात्राओं में अपनी जान से हाथ धोते थे। इसी लिये उन दिनों तीर्थ यात्रा पर जाने वाले व्यक्ति को उसके स्वजन-बन्धु गांव या नगर की सीमा तक बाजे-गाजे के साथ पहुंचाने जाते थे। यदि धर्म की उत्कट भावना तीर्थों के साथ न जुड़ी होती तो इतनी जोखिम उठा कर और कष्ट झेल कर कौन इतनी-इतनी दूर की यात्रायें करता। फिर देश की एकता अखण्डता और धार्मिक समानता का रूप ही दूसरा होता। उत्तराखण्ड के रहने वाले जानते ही नहीं कि विन्ध्याचल के दक्षिण में क्या है और केरलवासी को पता ही नहीं होता कि मरुभूमि कैसी होती है या हिमाच्छादित पर्वत चोटियों का सौंदर्य कैसा होता है।

जैसे-जैसे लोग धार्मिक भावनावश तीर्थ यात्रा को जाने लगे वैसे-वैसे उनमें अपने देश के विभिन्न सौंदर्य-स्थलों को देखने का कौतूहल भी बढ़ता गया। कालान्तर में यातायात के मार्गों का भी विकास हुआ। पक्के राजपथों के निर्माण ने यात्रा सरल कर दी। मध्य युग और उसके बाद यातायात के साधनों में भी विकास हुआ। स्थल मार्ग के साथ-साथ जल मार्ग भी विकसित हुये। लोगो में अपने सुन्दर देश को देखने की उत्कंठा बढ़ी और तीर्थ यात्रा के बहाने देशदर्शन की भावना

को बल मिला।

अभी तक यात्रा की कठिनाइयों के कारण केवल पुरुष ही तीर्थयात्रा पर जाते थे किन्तु यात्रा की सुविधा बढ़ने पर स्त्रियां भी तीर्थयात्रा पर जाने लगीं।

आधुनिक युग में यातायात के विकसित साधनों के कारण यात्रा करना अत्यन्त सुगम हो गया है। उत्तर भारत का रहने वाला व्यक्ति हवाई जहाज को अलग रेल द्वारा भी रामेश्वरम या कन्याकुमारी तीन चार दिन में पहुंच सकता है। फिर भी इस निर्धन देश के लोग देश दर्शन के नाम पर कितना देख पाते हैं? आज भी जो लोग ऐसी यात्रायें करते हैं उनमें अधिकाँश तीर्थ यात्रा की भावना लेकर ही जाते हैं। यह सही है कि उनमें से अब अधिक लोगों में धार्मिक भावना कम रहती है देश दर्शन एवं पर्यटन की भावना अधिक। पर पर्यटन के लिये भी वे घर से निकल पाते हैं तीर्थयात्रा के बहाने ही।

मध्य युग में वास्तु कला और मूर्तिकला का भी बड़ा विकास हुआ। उस काल के हिंदू राजाओं ने बड़े ही भव्य, विशाल एवं कलात्मक मंदिर बनवाये जिनकी कला की ख्याति देश भर में फैलती गयी और उन्हें देखने की लालसा लोगों में बलवती होती गयी। आज तो अनेक तीर्थयात्री इन अद्वितीय मंदिरों को देखने आते है। भारतीय पर्यटन की प्रेरक आज भी वस्तुत: तीर्थ यात्रा ही है। ●

जन्म पर्वत की रानी का

● सुन्दर एस० पैंत्रिहा

शिकार के लिये गये हुये कर्नल हंट की आंखें दूर हिमाच्छादित पर्वतमालाओं के बीच से धीरे-धीरे ऊपर उठते हुये सूर्य पर गड़ी हुई थीं। लाल सूरज का सिंदूर श्वेत श्रृंगों पर झड़ रहा था और उन्हें उस शर्माई हुई नई दुल्हन सा रूप प्रदान कर रहा था जिसके गौरवर्ण कपोल अपने प्रियतम के प्रथम स्पर्श से लजाकर आरक्त हो उठे हों। प्रकृति के इस अभिजात सौंदर्य ने हंट पर जैसे जादू कर दिया और वह उस रूप माधुरी में ऐसा खो गया कि यह भी भूल गया कि वह सारी रात शिकार की खोज में मचान पर जम्हाइयां लेता रहा है और थकान से उसका अंग-अंग टूट रहा है। उसका साथी लायड कब का कैम्प तक पहुंच चुका होगा और बैरा उसके सामने चाय की ट्रे रख कर प्याले में गर्म चाय उँडेल रहा होगा।

'वेरी लवली' (बहुत सुन्दर) उसके मुख से निकला और वह प्रकृति के उस अनूठे सौंदर्य में डूबा, उस रूप-माधुरी को निहारता अनिच्छा से कैम्प की ओर धीरे-धीरे बढ़ा।

तभी एक खड़खड़ाहट !

'अरे, यह तो कोई साहब है।' खेत में काम करते हुये वृद्ध ने दौड़ कर उसे उठाते हुये कहा। तभी उसकी पन्द्रह वर्षीय पुत्री ने किसी विशेषज्ञ के समान उसके हाथ-पाँव और सीने की धड़कनों की जांच पड़ताल करके प्रसन्नता से कहा—'पर बाबा, अभी यह जिन्दा है। देखो न, साँस चल रही है। जल्दी करो बाबा, नहीं तो मर जायेगा।'

दोनो उसे उठा कर पहाड़ी के ऊपर अपनी झोपड़ी में ले गये। लड़की दौड़ कर पानी ले आई और घावों को धोने लगी। वृद्ध तो जैसे धन्वन्तरि का वंशज ही था। न जाने कौन-कौन सी पत्तियां तोड़ कर ले आया और उन्हें कुचल कर रस निकाला। घावों को उससे तर

किया, फिर कुचली हुई पत्तियों को घावों पर रखकर अपने मैले-कुचैले कपड़ों की पट्टियां बांध दीं।

हंट बेहोश था, बेहोश रहा और मौत कुटिया के द्वार को घेरे खड़ी रही वृद्ध और उसकी पुत्री मौन थे, मौन रहे। उनकी आँखें उस अभागे घायल अतिथि की बुझती श्वासों पर लगी हुई थीं।

सिंदूरी सूर्य शिशिर के सिकुड़े पर्वतांचल पर कोमल रश्मियों की अँगुलियों से गुदगुदाता हुआ आगे बढ़ता गया और जड़-चेतन में हलकी उष्णता भरता गया, पर वृद्ध की ठंडी कुटिया का ठंडा चूल्हा आज ठंडा ही पड़ा रहा।

रात का अंधकार श्मशान की मनहूसियत सा छा गया। कुटिया के नन्हें प्रदीप के क्षीण आलोक में हंट का निश्चल शरीर वीराने की उस कब्र सा चमक रहा था जो अपनी सफेदी के कारण अंधकार में भी एक रेखा सी दिखाई पड़ती है।

'ज़रा कोयला जला दे। ठंड बढ़ने लगी है।' वृद्ध ने कहा।

कोने में रखी हुई हांडी में से कोयले निकाल कर उसने अंगीठी जलाई। वृद्ध ने घावों को फिर पत्तियों के रस से तर किया। उसके हाथों-पाँवों के तलवों में रस मला और आँच से धीरे-धीरे सेंका।

लड़की ने एक बार निराशा से देखा और उसके नेत्रों ने जैसे वृद्ध से कहा कि अब कुछ करना व्यर्थ है। तभी वृद्ध ने हंट की नब्ज देखी और उसके मुख पर प्रसन्नता की आभा चमक उठी।

'नाड़ी अब ठीक है, बच जायेगा।'

हंट की श्वांस की गति तेज होने लगी।

रात ऊँघ रही थी और दिन जाग रहा था। हंट ने धीरे-धीरे आँखें खोलीं। कष्ट से कराहा। चारों ओर दृष्टि दौड़ाई। पास बैठे हुये बुढ़ापे और जवानी को अपनी और देखकर संतोष से मुस्कराते पाया। उठने की चेष्टा की, पर उठ न सका। तभी वृद्ध ने नम्रता से कहा—'अभी उठिये नहीं, आराम से लेटे रहिये।

'लेकिन मैं... यहाँ कैसे... मेरे चोट...?'

'सब बताऊँगा हुजूर ! आप अभी आराम करिये ।'

हंट ने परिस्थिति को समझा । अपनी विवशता को समझ कर चुपचाप जीर्ण कुटिया के मैले बिस्तर पर पड़ा रहा ।

लड़की ने गर्म दूध का गिलास आगे बढ़ा दिया ।

'यहाँ चाय तो है नहीं हुजूर ।' वृद्ध ने सकुचाते हुये कहा ।

'कोई बात नहीं ।' दूध पीते हुये उसने पूछा—'लेकिन हम यहाँ कैसे आया ?'

वृद्ध ने सारी घटना कह सुनाई ।

'तुमने हमारा जान बचाया, हम तुम्हारा एहसान नहीं भूलेगा ।'

'हमने कुछ नहीं किया हुजूर, सब भगवान ने किया ।'

'हमारा एक काम कर दो बाबा ! यहाँ नीचे थोड़ी दूर पर हमारा कैम्प लगा है । हमारा आदमी लोग वहां है । उन्हें बोलो हमको चोट लगा है ।'

'बहुत अच्छा साब ।'

वृद्ध चला गया । हंट के अंग अंग में पीड़ा थीं । कष्ट से वह कराह उठता । उसे कराहते देख लड़की उसके पास दौड़ जाती और जब वह शान्त हो जाता तो फिर अपने दैनिक कार्य में लग जाती ।

हंट ने उसे पास बुलाया, पूछा 'क्या नाम है तुम्हारा ?'

'मोती !' उसने अल्हड़पन से मुस्कराते हुये जवाब दिया ।

'अच्छा नाम है और तुम भी बहुत अच्छा है ।'

लड़की लजा गई । हंट कहता गया-'तुम लोग बहुत अच्छा आदमी है । कल तुम लोग न बचाता तो मैं मर जाता ।'

वह भोलेपन से आँखों को फैलाकर बोली—हाँ साब, उस ऊँचे पहाड़ से गिरकर कोई नहीं बचता । पिछले बरस एक साहब गिरा था और फट मर गया । वह तो मैंने तुरन्त आप को देख लिया और वह दवा लगाई, वह दवा लगाई कि बस......!'

उसके कहने के ढंग पर हंट अपनी असह्य वेदना में भी हंसे बिना न रह सका ।

'हुजूर, वह लोग तो आपको कल इधर-उधर ढूँढ कर चले गये।' वृद्ध ने प्रवेश करते हुये कहा।

'चले गये ? फिर...अब ?'

'घबड़ाइये नहीं, जरा सा ठीक होते ही मैं आपको पहुंचा आऊँगा।

विवशता, कर ही क्या सकता था।

× × ×

घाव भर गये थे। भारतीय जड़ी-बूटियों की चिकित्सा पद्धति को हेय समझने वाला अगरेज बिना चीड़-फाड़ के जंगली पत्तियों और जड़ों के सहारे स्वस्थ हो रहा था। पैरों में भीतरी चोट के कारण खड़े होने की शक्ति अभी नहीं आ पाई थी। मोनी का हाथ पकड़ कर उसके कधे का सहारा लेकर वह खुली चट्टानों पर आकर बैठ जाता। दूर-दूर तक बिखरी हुई ऊँची-नीची पर्वत मालायें एक ओर श्याम दूसरी ओर श्वेत रंग की पत्तियों वाली सदाबहार वृक्ष-राजि, छोटे-छोटे झरनों के पास ऊँची नीची पहाड़ियों पर दूर-दूर बसी हुई चार-छः झोपड़ियाँ, उन्हीं से संलग्न सीढ़ीनुमा भूमि पर धान के छोटे-छोटे खेत ! वह घंटों प्रकृति के उस अपूर्ण सौंदर्य को देखता रहता और रात को जब देहरादून के प्रदीपों की बारात सजने लगती तो वह उस दीपावली के मनोरम दृश्य में खो जाता। कभी-कभी वह मोनी से भी पूछ बैठता—'देखो मोनी, वह क्या है ?' मोनी का सीधा सा उत्तर होता—'शहर,।

'हाँ शहर, लेकिन यहाँ से कितना खूबसूरत लगता है।' और वह कीटस या शेली का कोई मधुर गीत गुनगुनाने लगता जिसे सुनकर मोनी केवल इतना ही समझ पाती कि उसका गोरा अतिथि इस समय बहुत प्रसन्न हैं और उसकी सेवा-सुश्रूषा और साधना सफल हो गयी है।

उस दिन जब हंट ने नीचे पहाड़ियों में बहने वाले विशाल झरने के अनुपम सौंदर्य के विषय में सुना तो उसी दिन से उसके मन में उसे देखने की उत्कंठा प्रबल हो उठी।

पैर ठीक होते न होते वह झरना देखने गया और जब उसने उस अलौकिक स्थल को देखा तो उसके मुख से अनायास निकल पड़ा—'रियली इट इज हैवन (सचमुच यह स्वर्ग है)' और स्वर्गपुरी की कल्पना

उसके मस्तष्क में तेजी से घूम गई।

× × ×

'बाबा, आज फिर वही गोरा, अरे वही न अपना मेहमान, वही फिर आया है। उसके साथ और भी बहुत से लोग हैं।' जल्दी में दौड़ती हुई आकर मोनी ने वृद्ध से कहा—'आओ, चलो न बाबा उससे मिलने।' कहते-कहते उसने वृद्ध का हाथ पकड़ कर उसे खड़ा भी कर दिया।

'सलाम साब! आप अच्छे न हैं?'

हंट ने अपने साथियों की ओर से दृष्टि घुमाकर वृद्ध को देखा, बोला—'ओह तुम है। तुम अच्छा है? तुम्हारी लड़की किधर है?'

'इधर हूं साब!' कहकर भीड़ के पीछे खड़ी हुई मोनी अल्हड़पन से उछलकर सामने आ गई।

बगल में खड़ी अपनी पत्नी से हंट ने अँग्रेजी में कहा—'इन्हीं लोगों ने मेरी जान बचाई थी।'

'ओ, आई सी।' उसकी पत्नी ने मोनी को थपथपाते हुये पर्स से निकाल कर दो रुपये उसकी ओर बढ़ाये।

'उसने हाथ पीछे खींचते हुये कहा 'रुपया? नहीं साब, हम रुपया लेने नहीं साहब को देखने आये हैं। उनका हाल पूछने आये हैं।'

'हम तुमको बख्शीश दिया।' मेमसाहब ने स्वभाव के अनुसार कहा।

'हमें बख्शीश नहीं चाहिये मेम साब, साहब अच्छे हो गये, हमारे लिये यही खुशी है। वृद्ध ने नम्रता से कहा।

'ओह, ठीक है ठीक है।' हंट ने बात टालने के लिये कहा—'उस दिन हमने तुमसे बोला था बाबा कि हम यहां स्वर्ग बसायेगा। याद है न? उसी के लिये हम लोग आया है। छोटे से जंगली गाँव को हम खूबसूरत शहर बना देगा। हम इसे पहाड़ों की रानी बनायेगा।'

'सच? तब तो हमें यहीं शहर देखने को मिल जायेगा। मैंने कभी शहर नहीं देखा।' कहते-कहते मोनी जैसे नाच उठी।

× × ×

कार्य आरम्भ हो गया। नगराज के वृक्ष पर कुदाल और फावड़े चलने लगे। सदाबहार वृक्षों के सिर कट-कट कर गिरने लगे। नक्शे बनने

लगे, मार्ग तैयार होने लगे। ऊँची-नीची पहाड़ियों पर कोठियां खड़ीं होनें लगीं, झोपड़ियां ढहने लगीं।

तभी एक दिन जब भोनी और उसका बृद्ध पिता धरती माता के गीत गाते हुए अपने पके धान के खेत से चिड़ियों और कौओं को उड़ा रहे थे और दूर बनती हुई कोठियो पर कारीगरों को काम करते हुये देख कर प्रसन्न हो रहे थे, मजदूरों और इंजीनियरों के दल ने आकर खेत को घेर लिया। नाप-जोख आरम्भ हो गयी। वृद्ध और मोनी भौचक से पास आकर देखने लगे। वृद्ध ने साहस करके पूछा—'क्या नाप रहे हैं सरकार ?'

'यहाँ पर पार्क बनेगी।' एक काली चमड़ी के हिन्दुस्तानी साहब बहादुर ने बड़े रोब से कहा।

'पार्क, यह क्या होता है साहब ?'

'तुम नहीं समझोगे। पार्क बस पार्क होता है यानी बगीचा।' बड़े लहज़े से वे बोले।

'लेकिन हुजूर, यह तो मेरा खेत है। इसी से हमारे बाप दादे पलते आये हैं। बगीचा कहीं और बना लीजिये हुजूर।'

'वह यहीं बनेगा। क्लब के सामने ही पार्क का रहना जरूरी है। सामने की पहाड़ी पर क्लब घर बनेगा।'

'सामने की पहाड़ी पर ? यह आप क्या कर रहे हैं यहाँ मेरा घर है ? नहीं-नहीं यह नहीं हो सकता। मैं अभी साहब को बुलाकर लाता हूं।'

काले साहब बहादुर ने मुँह बिचका दिया।

कर्नल हंट अपने कैम्प के बाहर बैठा हुआ अपनी पत्नी से बातें करता हुआ चाय पी रहा था। वृद्ध लग-भग भागता सा उसके सामने आकर फूट पड़ा हुजूर जल्दी चलिये, आपके आदमी मेरा खेत और घर सब बर्बाद किये डाल रहे हैं।" प्रत्युत्तर की आशा में ताकती हुई मोनी भी उसके बगल में सटी खड़ी थी।

हंट ने चाय का घूंट आराम से गले से उतारते हुये कहा—'वह लोग नक्शे के हिसाब से काम कर रहा है बाबा. जिस जगह जो चीज बनना है वहाँ बनाना ही पड़ेगा।

'लेकिन हुजूर बगीचा और क्लब कहीं और भीं बनाये जा सकते हैं।'

(शेष पृष्ठ १६६ पर)

उत्तर प्रदेश की राजधानी :

लखनऊ

उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ अपनी शानोशौकत के लिये प्रसिद्ध रहा है। इसका प्राचीन नाम लक्ष्मणपुरी था। कहते हैं इसे लक्ष्मण जी ने बसाया था। आज भी विद्यमान लक्ष्मण टीला इस तथ्य की पुष्टि करता है।

लखनऊ के प्राचीन इतिसहास पर कोई ठोस प्रकाश नहीं पड़ता। मुस्लिम शासन काल से ही लखनऊ संबंधी जानकारी प्राप्त होती है।

अकबर के समय से इसकी विशेष चर्चा मिलती है। उस समय यह अवध प्रान्त की राजधानी था और अकबर द्वारा नियुक्त सूबेदार यहाँ रहा करता था। उसके समय में लखनऊ का काफी विकास हुआ और लखनऊ में चौक के आस-पास के कई मुहल्ले उसने बसाये। अकबरी दरवाजा आज भी लखनऊ का प्रमुख स्थान है।

जहाँगीर के शासन काल में भी यहाँ कई मुहल्ले तथा खूबसूरत भवन आदि बने। स्वयं जहांगीर लखनऊ आया था और कई सुन्दर बाग लगवाये थे। उसी की अनुमति पर एक योरोपीय व्यापारी ने यहाँ व्यापार करके एक वर्ष में ही इतना धन कमा लिया कि उसने एक शानदार महल बनवाया जिसे फिरंगी महल कहते हैं।

औरंगज़ेब ने अपने अयोध्या के मुहर्रम से लौटते समय यहाँ के प्रसिद्ध लक्ष्मण टीले पर बने हुये भव्य मंदिर को तुड़वा दिया और उसके स्थान पर मस्जिद बनवादी। उसके बाद से हिन्दू युग का चिन्ह लखनऊ से मिट गया और लोग बाद को भूल गये कि मुस्लमानों के आने से पहले भी लखनऊ में कुछ था। लोगों में यह भ्रम बल पकड़ गया कि नवाबों से पहले यहां एक छोटा सा गाँव था और नवाबों ने उसे विकसित करके एक भव्य नगर का रूप दिया।

लखनऊ के आधुनिक स्वरूप

और हिंदू युग के नष्ट भ्रष्ट वैभव को पुनर्स्थापित करने का श्रेय १८ वीं शताब्दी के अवध के नवाबों को है। अवध के नवाब मुगल साम्राज्य के वजीर होते थे और अवध के शासक तथा सूबेदार की हैसियत से शासन करते थे। पहले यह नवाब फैजाबाद और लखनऊ दोनों स्थानों में रह कर शासन चलाते थे पर नवाब शुजाउद्दौला का पुत्र मिर्जा अमानी आसफुद्दौला (१७७५-१७९७) जब गद्दी पर बैठा तो उसने फैजाबाद से हटाकर लखनऊ को स्थायी राजधानी बनाया।

आसफुद्दौला कला प्रेमी था और शान-शौकत से रहने वाला था। उसने अनेक भव्य और विशाल विशाल इमारतें बनवाईं और सुन्दर बाग-बगीचें लगवाये। आसफुद्दौला का इमामबाड़ा जहां उसके कलाप्रेम का द्योतक है वहीं उसकी उदारता और दानशीलता का प्रमाण भी है। उसके सम्बन्ध में प्रसिद्ध था—

जिसको न दे मौला,
उसको दे आसफुद्दौला।

जब सन १७८४ ई० में लखनऊ में भीषण अकाल पड़ा था तो अकाल पीड़ितों की सहायता के लिये उसने इस आलीशान इमामबाड़े का निर्माण कार्य शुरू करवा दिया और लाखों लोग उसमें कार्य करके अनाज पाने लगे।

इस सुप्रसिद्ध इमामबाड़े अतिरिक्त आसफुद्दौला ने आसफ कोठी, मच्छी भवन, दौलतखाना, चारबाग, तथा ऐशबाग आदि बनवाये। उसने लखनऊ नगर का विकास भी किया और वजीर गंज, फतेहगंज, रकाबगंज तथा नक्खास आदि मुहल्ले बसाये। राजाबाजार छावनी, हुसैनगंज, काश्मीरी मुहल्ला आदि की नींव भी उसी समय पड़ी। उसके एक मंत्री टिकैतराय ने टिकैतगंज बसाया तथा टिकैतराय का प्रसिद्ध तालाब तथा मंदिर बनवाया।

सन् १८१४ में जब नवाब गजीउद्दीन हैदर गद्दी पर बैठा तो उसने भी लखनऊ के विकास की ओर विशेष ध्यान दिया। उसके शासनकाल में कला और साहित्य की विशेष उन्नति हुई। उसने कई सुन्दर इमारतें बनवाईं जिनमें मोती-महल, मुबारक मंजिल, शाह मंजिल तथा विलायती बाग प्रसिद्ध हैं। गाजीउद्दीन हैदर ने गंगा और गोमती को मिलाने के लिये एक नहर का निर्माण भी शुरू किया था जो आज भी बनारसीबाग, सदर और नाका-

हिंडोला से गुजरती है। उस नहर का निर्माण बाद को बन्दकर दिया गया था।

गाजीउद्दीन हैदर के बाद नासिरुद्दीन हैदर गद्दी पर बैठा। उसके शासन काल में गणेशगंज, चाँदगंज आदि मुहल्ले बसे और उसके मंत्री रोशनुद्दौला ने अपने नाम से एक भवन बनवाया जिसमें अभी कुछ काल पूर्व तक लखनऊ की कचहरी थी।

उसके बाद मुहम्मदअली शाह को गद्दी मिली वह भी कला प्रेमी बादशाह था। हुसेनाबाद का प्रसिद्ध इमामबाड़ा उसी ने बनवाया था। उसी ने लाल बारादरी भी बनवाई जो आजकल पिक्चर गैलरी के नाम से प्रसिद्ध है।

मुहम्मदअलीशाह के बाद अमजद अली शाह गद्दी पर बैठा। उसका वजीर इमाम हुसेन उसका कृपापात्र था इसलिये उसने उसे अमीनुद्दौला की उपाधि दी थी। उसके नाम पर अमीनाबाद बनवाया गया। हजरतगंज का निर्माण भी उसी ने कराया। इसी के शासनकाल में लखनऊ कानपुर की पक्की सड़क का भी निर्माण हुआ।

लखनऊ के अन्तिम नवाब वाजिदअली शाह हुये जिनकी विलासिता के चर्चे अब भी सर्वत्र होते हैं। उनके हरम में ३६० बेगमें थीं जिनके साथ वह कैसरबाग के उद्यान और भवनों में रंगरेलियां मनाया करता था। कैसरबाग बारादरी आदि उसकी विलासिता के कुछ चिन्ह अभी भी विद्यमान हैं।

दर्शनीय स्थान

आसफुद्दौला का इमामबाड़ा:—इसे बड़ा इमामबाड़ा भी कहते हैं। गोमती के किनारे मेडिकल कालेज के पिछवाड़े यह एक बड़ी शानदार इमारत है। इसका निर्माण नवाब आसफुद्दौला ने करवाया था जो उसने सन् १७८४ के अकालपीड़ितों की सहायतार्थ बनवाया था।

पाँच मंजिली यह आलीशान इमारत स्थापत्य कला का सुन्दर नमूना है। इसके बड़े-बड़े विशाल हाल और कक्षों की छतें बिना किसी खम्भे के सम्भे लोहे के गार्डरों या लकड़ी की धरनियों के केवल ईंट और मसालों से बनी हुई हैं। इसके ऊपरी मंजिलों में भूलभुलैयां भी हैं जो उस समय के इंजीनियरिंग ज्ञान का अदभुत नमूना है। कहते हैं कि इससे भी भयानक भूलभुलैयां तहखाने

में हैं जिन्हें बाद को अंग्रेजों ने बन्द करवा दिया।

इमामबाड़े से लगी हुई एक विशाल मस्जिद है जिसे जामा मस्जिद कहते हैं। इसके दोनो पार्श्व में दो मीनारे हैं।

इमामबाड़े के एक पार्श्व में प्राचीन बावली है जिसके भीतर ग्रीष्मकाल में रहने लायक कमरे तथा गैलरियाँ बनी हुई है और नीचे जल तक जाने का मार्ग है।

हुसैनाबाद का इमामबाड़ा:— बड़े इमामबाड़े से पश्चिम की ओर थोड़ी ही दूरी पर यह छोटी परन्तु बड़ी सुन्दर इमारत है। इसे १८२४ में मुहम्मद अली शाह ने बनवाया था। बाहर से यद्यपि यह इमारत सादे ढंग की है पर भीतर इसकी सजावट देखने ही लायक है। बड़े-बड़े झाड़फानुस, चित्र तथा कलात्मक वस्तुयें बड़ी आकर्षक हैं। इसके सामने पानी के सुन्दर हौज हैं। मुहर्रम के दिनों में यहाँ होने वाली रोशनी देखने हजारों लोग आते है।

रूमी दरवाजा:-यह दरवाजा बड़े इमाम बाड़े के पश्चिम में स्थित है। इसका निर्माण इस्तम्बूल (तुर्की) में बने एक दरवाजे के अनुकरण पर तुर्की शैली में किया गया है। यह इतना ऊँचा है कि इसमें मय हौदे के हाथी आसानी से निकल सकता है।

रेजीडेन्सी भवन:—इसे सन् १८०० ई० में नवाब सआदत अली खाँ ने ब्रटिश रेजीडेन्ट के लिये बनवाया था। सन् १८५७ के विद्रोह के दिनों में रेजीडेन्सी में ही अँग्रेजों ने शरण ली थी जिसे विद्रोहियों ने चारों ओर से घेर कर भीषण गोलाबारी की थीं। भवन अब खंडहरों के रूप में ही एक उद्यान में है।

(शेष पृष्ठ १११ पर)

यह मेरा शहर या अजायबघर !

के० पी० सक्सेना

हमारी घी-दूध से संपन्न इस दुनिया में इंसान और जानवर ने अपने-अपने कल्चर यानी संस्कृति के अलग-अलग अड्डे बना रखे हैं !... इंसानों के कल्चर का अड्डा है म्यूजियम यानी मुर्दा अजायबघर ! ...इस अड्डे पर पुराने इंसान के पाजामे, तलवारें, अंगूठियाँ, घड़े, दालान के टूटे खम्भे वगैरह सजा कर रखे जाते हैं। ताकि हम कह सकें कि फलां बादशाह इतने घेर का कुर्ता पहनता था और फलां बादशाह इतने नम्बर की जूती पांव में डालता था !—जानवरों के कल्चर का अड्डा है जिन्दा अजायबघर या 'जू'। लोगबाग इसे 'चिड़ियाघर' भी कहते हैं !...मेरी समझ में आज तक एक मोटी सी बात नहीं आई कि अगर यह चिड़ियाघर है तो फिर चिड़िया के घर में हाथी कैसे रह लेता है ?...खैर होगा...हम भारतवासी हाथियों के शौकीन हैं !... हमने एक से एक तगड़ा सफेद हाथी पाल रखा है और उसकी मोटर के पेट्रोल का खर्च झेल रहे हैं !...इन दोनों अड्डों के बाहर भी इंसान और जानवर का कल्चर घूमता—फिरता नजर आता है !... मुर्गे, तोते, गधे आदि चिड़ियाघर में भी हैं और चिड़ियाघर के बाहर भी!... ठीक इसी तरह मेरे इस शहर लखनऊ में इंसानी कल्चर का जितना माल मुर्दा अजायबघर में है, उससे कहीं अधिक सड़कों पर घूमता—

फिरता नजर आता है।...कभी-कभी तो अपने इस शहर के इंसानी माडल देख कर मुझे ऐसा लगता है जैसे हमारा सदियों पुराना इतिहास अल्मारियों से निकल कर सड़कों पर घूम कर हवा ले रहा है ताकि फफूंदी न लगने पाए !...कभी-कभी अपना महकदार हजरतगंज मुझे मोहनजोदड़ो नजर आता है कभी हड़प्पा !...यहाँ घूमते हुए कुछेक ऐतिहासिक माडिलों को देखकर जी करता है कि उनसे पूंछूं कि कहीं मैगस्थनीज या फाहियान तो नहीं है ?...अच्छे भले चेहरों पर दाढ़ियाँ उगाए, जटा-जूट बढ़ाए कलमें फुलाए, बड़े-बड़े गन्डे ताबीज धारे ऐतिहासिक विभूतियों को देखता हूं तो लगता है जैसे बलबन या महमूद गजनवी आ रहे हों... एक साहब की पाजामेनुमा, चीथड़े टंकी, झावड़-झोल पतलून देखकर मुझे वास्को-डीगामा की याद आ गयी...वह भी हिस्ट्री किताब वाली तस्वीर में ऐसी ही पहने था !...एक दूसरे सज्जन दाढ़ी ऐंठे हुए कुछ यों टहल रहे हैं। अगर वे मुँह में सिग्रेट न दबाये होते तो मैं उन्हें 'छत्रपति शिवाजी" कहकर सीने से लगालेता ...एक अन्य भले मानुष इतने ताबीज गले में लटकाए थे कि मुगल पीरियड के पीर फकीर लग रहे थे अगर उनकी बगल मेंउनकी रोमांस न चल रही होती तो सचमुच मैं उन्हें फकीर समझकर बच्चे के ताबीज के लिए दाढ़ी का एक बाल माँग लेता, इसी तरह एक दिन लालबाग में मुझे मिर्जा गालिब मिल गये !...बाद में पता लगा कि वे एक दफ्तर के नये-नये क्लर्क हैं !...कुछेक महीने पहले सैंडिलों में पीतल के भारी भरकम बक्सुए और झालरें देखकर मैं डर गया कि शायद रोमन सम्राट दौरे पर निकले हैं !... लखनऊ वाले भाग्यशाली हैं कि हमारी सड़कों पर ऐतिहासिक अजायब घर चल फिर रहे हैं !...किसी बाहर वाले को जरूरत हो तो एक आध नमूना हमसे मांग ले जाए !...

छोटी से छोटी कंचुकियां धारे और सूक्ष्मतम आवरणों से कंचन काया ढके कितनी ही शकुन्तलाएं अपने दुष्यन्त बिरह में व्याकुल हमारे 'गंज' रूपी वन में विचर रही हैं। खोपड़ी घुटाए कितने ही कालिदास इनकी बिरह वेदना निरख रहे हैं। हाय !—हमारा सारा इतिहास सड़कों पर आ गया है !—मैं ही एक अकेला 'ईश्वरी प्रसाद' हूं जो इस इतिहास का महत्व जानता है, अल्बूकर्क, अलबरूनी और तातार सैनिकों के ऐतिहा-

सिक चश्मोटे (बड़े चश्मे) फुट पाथ पर बिक रहे हैं।...कुछेक चेहरों पर ये चश्मोटे चढ़े देखता हूं तो पुरानी कहावत याद आती है कि 'आंखी एकी नाहीं, कजरौटा नौ नौ"—अजायबघर की अल्मारी में हर्ष-वर्धन और बिम्बसार के घोड़ों की जो लगामें मैंने टंगी देखी थीं वे अब पेटियों के रूप में पतलून पर बंधी नजर आती हैं !—कहीं-कहीं तो पेटी की चौड़ाई कमर की टोटल चौड़ाई से भी ज्यादा होती है!—तुगलक और नादिरशाह के गुलामों की छींटदार लुंगिया अब बेबियां बांधे घूमती हैं !—इन बच्चियों को शौक है कि किसी तरह इतिहास जिन्दा रहे !—इसी सड़क पर मुझे राजा भर्तृहरि के भी दर्शन हुए जो गेरुआ रामनामी सन्यासी कुर्ता धारे गुनगुनाते चले जा रहे थे—,तू न मिली तो हम जोगी बन जाएंगे—' संन्यास प्रवृत्ति और संस्कृति में आस्था इसे ही कहते हैं !—ये बेचारे चाहते तो पढ़-लिखकर क्लर्क बन सकते थे—मगर नहीं!—उन्हें इतिहास जिन्दा रखना था सो उन्होंने जोगी बनना पसन्द किया !—वैदिक काल के लोटा बराबर झुमके और साइकिल के पहियों जैसी बड़ी-बड़ी नथें अब अजायबघर की अल्मारी से निकल कर सड़क पर आ गयी हैं ! —इबनबतूता के सुल्फे की चिलम अब पतलून की जेब में देखी जा सकती है !—बौद्ध भिक्षुओं की नैपाली टोपियां सन तेहत्तरीय खोपड़ियों पर सजी नजर आती हैं !—कुछेक छींटदार पाजामियां देखकर स्वामी हरिदास के तानपूरे के गिलाफ का धोखा होता है। इत्तुतमश की बीबी का चांदी का गरारा मैं इसी हजरतगंज में देख चुका हूं ! —यहीं मैंने मीराबाई के गले के रुद्राक्ष भी देखे हैं।—फुलसेट पसलियों वाले सीने पर मैंने राणा सांगा की ऐतिहासिक अकड़ भी देखी है !—एक सज्जन की कलमों का रोबदाब देख कर इसी सड़क पर मैं ऐसा हड़क गया कि उन्हें सैल्यूट दाग दिया। —वे अगर चौखटे में जड़े होते तो हूबहू वारेन हेस्टिंग्ज नजर आते—एक अन्य महिला मिनी-मिनी फ्राक में रोमन पहलवान नजर आ चुकी हैं !— उधर नफासत के महीन नमूनों का यह आलम है कि एक अदद बारीक से सज्जन चिकन चूड़ीदार में चौदह आने अनारकली नजर आ रहे थे !—

कुल मिलाकर ऐ दोस्त ! मेरा यह शहर लखनऊ एक चलता-फिरता अजायबघर है !— ●

धरती का स्वर्ग : कश्मीर

नील गगन को चूमने वाली हिमाच्छादित पर्वत चोटियों, इठलाती नदियों, मनोरम झीलों और हरी मखमली सेज वाले मैदानों से सुशोभित कश्मीर को कवियों ने धरती का स्वर्ग कहा है। वस्तुत: यहाँ के सौंदर्य से मुग्ध होकर काव्य की रसधारा स्वत: ही फूट निकलती है।

पूरा कश्मीर रज्य दो भागों में विभक्त है— जम्मू और कश्मीर। इसके दो प्रमुख नगर हैं— श्रीनगर और जम्मू। श्री नगर यहाँ की ग्रीष्म कालीन राजधानी है और जम्मू शीतकालीन। चारों ओर ऊँची पर्वतमाला से घिरी काश्मीर घाटी ५००० फूट से ६००० फुट ऊँची है। पूर्वोत्तर भाग में हिमालय की सुन्दर पर्वत श्रेणियाँ हैं जिनकी भव्यता देखते ही बनती है। इन पर्वत श्रेणियों के लगभग बीच में नंगा पर्वत है जिसक ऊँचाई २६६६० फुट है।

कश्मीर का नाम कश्यप मुनि के नाम पर पड़ा है। कहा जाता है कि बारामूला के पास एक पर्वत को काट कर उन्होंने एक विशाल झील बनाई थी। इस घाटी में पहले दानव रहते थे उन्हें मार कर वहाँ ऋषि ने मानवों को बसाया। इसी से इस स्थान को कश्यप-मार कहने लगे जो कालान्तर में कश्मीर कहलाने लगा।

अत्यन्त प्राचीन काल से ही कश्मीर भारत का अंग रहा है। वाह्य आक्रमणों का भी कश्मीर को बहुत सामना करना पड़ा है। हूण, पल्हव आदि कई जातियाँ भारत में कश्मीर के ही मार्ग से उसे पददलित करती हुई आई थीं।

सम्राट अशोक ने ई० पू० तीसरी शताब्दी में यहाँ बौद्ध धर्म का प्रचार किया था। उसके बाद अनेक शताब्दियों तक यहाँ बौद्ध और हिन्दू धर्म साथ-साथ फलते-फूलते रहे। इस काल में अनेक मठों तथा मंदिरों का भी निर्माण हुआ। ८ वीं शताब्दी में काश्मीर के महान शासक ललितादित्य ने सुप्रसिद्ध मार्तण्ड

मंदिर का निर्माण करवाया था । परवर्ती काल में मुगल शासकों का भी इस स्थान से गहरा सम्बन्ध रहा और उन्होंने श्रीनगर में डल झील के आस-पास कई आलीशान बाग बनवाये ।

कश्मीर पर प्रकृति की विशेष कृपा रही है। समूची घाटी फल-फूलों से सजी हुई है और झरने तथा नदियाँ कल-कल करती हुई बहती हैं। फलों का तो यहाँ भन्डार है। सेब, खुबानी, चेरी, आड़ू, आलू-बुखारा अखरोट और बादाम खूब होते हैं। वसन्त के साथ ही रंग-बिरंगे पुष्पों की बहार आती है। उन दिनों कश्मीर सचमुच नन्दन वन बन जाता है ।

मार्च के मध्य से वसन्त आरम्भ हो जाता है और बर्फ पिघलने लगती है। लाखों जलधारायें फूट निकलती हैं और घाटी में हरियाली की बहार छा जाती है, अप्रेल में मुस्कराते झूमते फूलों से घाटी भर जाती है जून का महीना सैलानियों के लिए सबसे सुहावना होता है। उन दिनों दूर दूर से आए लोग गुलमर्ग पहल-गाम और सोनमर्ग जाते हैं और बर्फीली चोटियों के बीच मुस्कराती प्रकृति का तादात्म्य स्थापित कर प्रकृति का पूरा आनन्द उठाते हैं। स्वास्थ्य की दृष्टि से सितम्बर और अक्टूबर का महीना सबसे अच्छा होता है जब मौसम बिलकुल स्वच्छ, शीतल और सुहावना होता है। उन दिनों चिनार के विशाल और ऊँचे वृक्षों पर सुनहला और ताम्र रंग जगमगा उठता है । दिसम्बर से फरवरी तक यहाँ अत्यधिक शीत पड़ती है और कभी-कभी हिमपात भी होता है। जनवरी में तो पूरी घाटी पर हिम धवल चादर ही छिप जाती है। स्कीइंग का आनन्द लेने वाले विशेष रूप से इन्ही दिनों कश्मीर आते हैं ।

कश्मीरी लोग लम्बे कद और गौर वर्ण के होते हैं। यहाँ की स्त्रियाँ जितनी सुन्दर होती हैं उतनी ही मेहनती भी। गहरे नीले और हरे वस्त्रों, जिन्हें 'फिरानों' कहते हैं, में सजी ये कश्मीरी कामिनियाँ जब त्योहारों और उत्सवों के अवसर पर नृत्य करती और गाती हैं तब उस मनोहारी दृश्य को दर्शक जीवन भर नहीं भुला पाता ।

कश्मीर जाने के लिए हवाई जहाज रेल सड़क परिवहन सभी उपलब्ध हैं। इण्डियन एयर लाइन्स कार्पोरेशन की दिल्ली श्रीनगर की

दैनिक हवाई सर्विस है। रेलमार्ग द्वारा कश्मीर जाने के लिए पठानकोट तथा जम्मू तक गाड़ियां जाती हैं वहाँ से आगे बसों द्वारा जाना पड़ता है। पठानकोट से बस द्वारा जाने में ३९८ किलोमीटर का रास्ता डेढ़ दिन में पूरा होता है और रात्रि वटोट अथवा बनिहाल में बितानी पड़ती है। कुछ शौकीन लोग दिल्ली से श्रीनगर तक कार द्वारा जाना पसन्द करते हैं। मार्ग में उन्हें सब प्रकार की सुविधाएँ तथा ठहरने के लिए डाक बंगले उपलब्ध रहते हैं।

दर्शनीय स्थान

श्रीनगर

सागर तल से लगभग ५२०० फुट ऊँचाई पर स्थित श्रीनगर जम्मू कश्मीर राज्य की ग्रीष्म कालीन राजधानी होने के साथ-साथ यहाँ का सबसे प्रमुख नगर है। शंकराचार्य और हरिपर्वत नाम की दो पहाड़ियों के बीच में स्थित श्रीनगर झेलम के किनारे पर बसा है। झेलम के वक्ष पर तैरते शिकारे और हाउस बोट इस नगरी को 'पूर्व का वैनिस' कहलाने का गौरव प्रदान करते हैं। शंकराचार्य पहाड़ी पर चढ़कर ऊपर से इस नगरी को देखना अपने में बड़ा ही अद्भुत और रोमांचकारी होता है। यहाँ पहाड़ी पर एक शिवालय है जिसे २०० वर्ष ईसा पूर्व सम्राट अशोक के पुत्र जालूका ने निर्मित कराया था। इस पहाड़ी पर से मुगल उद्यानों तथा तैरते उद्यानों का दृश्य बड़ा ही भला लगता है।

नगर में ठहरने के लिए अनेक सुसज्जित आधुनिक होटल तथा हाउस बोट उपलब्ध हैं। हाउस बोटों में ठहरना भी अनिर्वचनीय अनुभूति होती है। सुसज्जित हाउसबोटों में भूमि पर बने मकानों जैसी सारी सुविधाएं उपलब्ध होती हैं। यहाँ तक टेलीफोन और वातानुकूलित कक्षों की भी सुविधाएं रहती है। उन्हें झेलम अथवा किसी झील के किनारे खड़ा कर सकते हैं और एक दृश्य से जी भर जाने पर उन्हें खेकर बीच धारा में या किसी अन्य स्थान पर भी ले जा सकते हैं।

चश्माशाही

श्रीनगर से लगभग ५ मील दूर एक सुन्दर पहाड़ी की तलहटी में डलझील के ऊपर स्थित है चश्माशाही। बारादरीनुमा भवन के पास ही एक छोटा सा उद्यान है जिसे शाहजहाँ ने बनवाया था। इस

चश्मे के पानी में औषधीय गुण विद्यमान हैं।

निशात उद्यान

यह चश्माशाही से ढ़ाई मील दूर है। इसे उद्यान प्रेमी नूरजहां के भाई आसफजहाँ ने बनवाया था इसके पार्श्व में पीर पंचाल नामक पर्वत गगन में सिर ऊँचा किए खड़ा है।

शालीमार

निशात से दो मील आगे सर्वाधिक प्रसिद्ध मुगल उद्यान शालीमार है जिसे जहाँगीर ने बनवाया था। चाहे हल्की धूप हो या चाँदनी रात गुलाब के फूलों से सजा यह उद्यान जिसमें कभी सम्राट जहाँगीर और उसकी प्रेमिका नूरजहां घूमा करते थे, हर एक सौन्दर्य प्रेमी का मन लुभाए बिना नहीं रहता।

डल झील

तीन ओर से क्रीड़ा स्थली से घिरी हुई डल झील मीठे पानी की सबसे सुन्दर झील है। पांच मील लम्बी और ढाई मील चौड़ी यह झील स्रोत के पानी से भरती है और इसका जल स्फटिक की तरह स्वच्छ है। इस पर बीच के द्वीप और तैरते उद्यान बड़े भले लगते हैं। श्रीनगर में आने वाली साक-भाजी का एक बड़ा भाग डल से आता है। झील में तैरने, सर्फराइडिंग और नौका विहार की सुविधाएं उपलब्ध हैं।

बुलर झील

यह यहाँ की बहुत गहरी और रहस्यात्मक झील है। इसके अन्दर कई द्वीप और मंदिर हैं। कई महलों ने इसमें समाधि लगाली है और कई नगर भी इसकी तलहटी में समाए हुए हैं। इसमें बहुधा प्राकृतिक उथल-पुथल होते रहते हैं और कभी-कभी अचानक भयानक तूफान उमड़ आते हैं।

शेषनाग

अमरनाथ गुफा के रास्ते में पड़ने वाला शेषनाग सागर तल से बारह हजार फुट की ऊँचाई पर है। जून तक यह बर्फ से ढका रहता है बाद में बर्फ पिघलने पर एक सुन्दर और हरी झील में परिणत हो जाता है।

यहाँ कुछ और प्रसिद्ध और सुन्दर झीले हैं जिनमें नगीन, कौंसरनाग, विष्णुसर, कृष्णसर तथा नील नाग आदि बड़ी ही सुन्दर और आकर्षक झीले हैं।

पहलगाम

यह श्रीनगर से सड़क द्वारा ६० मील दूर है। समुद्र तल से सात हजार दो सौ फुट की ऊँचाई पर स्थित यह स्थान समूचे कश्मीर में सर्वाधिक प्रिय स्थानों में से है। गोल्फ खेलने के शौकीन पर्यटकों के लिए पहलगाम में एक अच्छा गोल्फ कोर्स है।

गुलमर्ग

श्रीनगर से २७ मील दूर सरों और चीड़ के विशाल वृक्षों से घिरा हुआ गुलमर्ग पर्यटकों के लिए प्रमुख आकर्षण केन्द्र है। गोल्फलिक स्थानों के लिए यह स्थान सुविख्यात है। यहाँ से नंगा पर्वत की वर्फ से ढकी चोटियों का अति भव्य दृश्य दिखाई देता है। गुलमर्ग के पास ही खिलनमर्ग, अफरवठ झील, बाबाऋषी, कटारनाग आदि सुन्दर स्थान हैं जहाँ लोग पिकनिक के लिए जाते हैं। दिसम्बर में यहाँ वर्फ की मोटी चादर छा जाती है और शीतकालीन खेलों के शौकीन लोग भारी संख्या में एकत्र हो स्कीइंग और टोबोगेनिंग का मजा लेते हैं।

सोनमर्ग

श्रीनगर से ५० मील दूर सोनमर्ग सुन्दरता भव्यता और मनमोहक दृश्यों के कारण गुलमर्ग से होड़ करता है।

जम्मू

सागर तल से १००० फुट की ऊँचाई पर स्थित यह जम्मू-कश्मीर राज्य की शीतकालीन राजधानी है। जम्मू क्षेत्र मेहनती डोगरा लोगों की भूमि है। यहाँ अनेकों दुर्ग हैं जो अब अधिकांश खण्डहर रूप में ही बचे हैं। जम्मू में अनेक मंदिर होने के कारण इसे मन्दिरों की नगरी भी कहते हैं। पर्यटकों के लिये यहाँ एक बहुत अच्छा डाक बंगला तथा रेस्ट्राँ हैं। जम्मू से ही श्री वैष्णों देवी की पवित्र यात्रा के लिए तीर्थ यात्री जाते हैं।

नगराज-मणि : बदरीनाथ

भारत के चार प्रमुख धामों में से बदरीनाथ हिन्दुओं का अत्यन्त पावन धाम है। हिमालय की हिमाच्छिन्न चोटियों के बीच हरिद्वार से लगभग ३८४ किलोमीटर दूर बदरीनाथ का पवित्र स्थान है। इसके चारों ओर का वन क्षेत्र बदरीवन के नाम से प्रसिद्ध है। प्राचीन काल से ही यह पावन तपोवन के रूप में प्रसिद्ध रहा है। प्रतिवर्ष मार्च से अक्तूबर तक बदरीनाथ

बदरीनाथ यात्रा के पैदल मार्ग का प्रथम चरण: लक्ष्मणझूला

मन्दिर के दर्शनार्थ लाखों तीर्थ यात्री यहाँ आते हैं। यहाँ के प्रमुख नरनारायण मन्दिर में भगवान विष्णु की सुन्दर मूर्ति है। बदरीनारायण मन्दिर के अतिरिक्त यहाँ कई अन्य पावन मन्दिर, तीर्थ तथा कुण्ड आदि भी है जिसमें प्रमुख नारद शिला. मारकण्डेय शिला, गरुड़ शिला, ब्रम्ह तीर्थ, पंच तीर्थ, ब्रह्म कुण्ड आदि हैं।

कहा जाता है कि बदरीनाथ का स्वर्णिम शिखर अहिल्या बाई होल्कर ने बनवाया था। बौद्ध काल में बदरीनाथ क्षेत्र में बौद्ध मत का प्रभाव हो गया था किन्तु इसके बाद जगतगुरू शंकराचार्य ने यहाँ आकर पुन: हिन्दू धर्म की कीर्ति पताका फहराई। कहते हैं तभी से दक्षिण भारतीय नम्बूदरी ब्राह्मणों के अधीन यहाँ की जन व्वस्था है।

मन्दिर के पास ही एक गरम पानी का सोता है। इस सोते का पानीं तप्त कुण्ड में एकत्र होता है और शीत से ठिठुरते तीर्थ यत्रियों के लिए सोता वस्तुत: एक बरदान है।

यात्रा मार्ग तथा साधन

कुछ वर्षों पूर्व तक लोग सैकड़ों मील की यात्रा पैदल करके बदरी नारायण जाया करते थे। बदरीनाथ की यात्रा प्रमुख रूप से ऋषीकेश से आरम्भ होती है। आजकल ऋषीकेश से बदरीनाथ मन्दिर तक बस सेवा उपलब्ध हो गयी है जिससे इधर की यात्रा बहुत सुगम हो गयी है। फिर भी इस ओर के जिन स्थानों के लिये बस नहीं जाती वहाँ जा यात्री पैदल नहीं चल सकते उनके लिए कण्डी या दांडी का प्रबन्ध हो जाता है जिसे एक कुली पीठ पर बाँध कर ले जाता है।

ऋषीकेष तथा अन्य मोटर अड्डों पर कुली एजेंसियां हैं जिनके माध्यम से कुली करने में सुविधा रहती है। बदरीनाथ तथा उधर के अन्य पर्वतीय तीर्थों में सर्वत्र बाबा काली कमली वाले की धर्मशालाएं हैं। मार्ग में भी स्थान-स्थान पर धर्मशालाएं मिलती है जहाँ यात्रियों को भोजन बनाने के बरतन आदि सुविधा से मिल जाते हैं। चट्टियों पर चावल, दाल, आटा आदि भी मिल जाता है।

आवश्यक सामग्री

यात्रा के लिए उपयोगी कुछ आवश्यक तथा हलके सामान अवश्य ले जाना

चाहिए। पहाड़ पर चढ़ने में सहायता देने के लिए एक छड़ी ऊनी दस्ताने तथा मोजे, हलके तथा मजबूत जूते छाता या बरसाती कोट ऊनी, कपड़े, दो कम्बल टार्च, लालटेन, मोमबत्ती, पानी की बोतल, सूखे मेवे कुछ आवश्यक औषधियाँ आदि अवश्य साथ में रखना चाहिये। यात्रा में यथासम्भव बासी भोजन तथा मार्ग में बिकने वाली खराब मिठाइयों आदि का सेवन नहीं करना चाहिए और जहाँ तक हो सके जल को उबाल कर ही प्रयोग में लाना चाहिए अन्यथा हिल डायरिया होने का भय रहता है। जल यदि उबालने की सुविधा न हो तो उसे पांच छः मिमट तक मिट्टी के बरतन में रखकर पीना चाहिए।

केदार नाथ

गढ़वाल जिले की मन्दाकिनी घाटी में केदार नाथ का पावन मन्दिर है। कहते हैं इस मन्दिर का निर्माण पाण्डवों ने करवाया था। यहाँ भगवान शंकर का केदार संज्ञक महालिंग स्थापित है। मन्दिर के प्रांगण में नंदी की एक विशाल प्रतिमा है। मन्दिर की दीवारों पर पाण्डवों तथा द्रोपदी की सुन्दर आकृतियां अंकित हैं। चारों ओर हिमाच्छादित चोटियों के बीच स्थित यह स्थान अत्यंत ही मनोरम है। केदारनाथ मन्दिर मई और अक्तूबर के बीच दर्शनार्थ खुला रहता है। केदारनाथ पीठ में अनेक कुण्ड है जिनमें शिव कुण्ड प्रमुख हैं। इनमें से एक कुण्ड का जल रक्त वर्ण है। इसे रुधिर कुण्ड कहते हैं। मन्दिर की बायीं ओर पुरन्दर पर्वत है जिसमें नारायण क्षेत्र तथा शाकम्भरी के पावन स्थल हैं। इसी क्षेत्र के कुछ प्रमुख स्थान तुंगनाथ, रुद्रनाथ एवं कल्प नाथ हैं।

केदार नाथ जाने के लिये भी अब बस सुविधाएं उपलब्ध हो गयी हैं। ऋषीकेष बदरी नाथ मार्ग में पड़ने वाले स्थान रुद्र प्रयाग से केदारनाथ के लिए दूसरा मार्ग तैयार कर लिया गया है। पहले इस ओर की यात्रा अधिक कठिन थी यही कारण है कि केदार नाथ का मार्ग काफी बिलम्ब से अभी कुछ वर्ष पूर्व ही बनकर तैयार हो सका है। अभी भी कुछ श्रद्धालु यात्री इस ओर की यात्रा पैदल ही करते हैं।

नगर पालिका खैराबाद (सीतापुर)

द्वारा

किये गये विकास कार्य

१. ५.५९९ किलोमीटर कंक्रीट तथा १२.८६४ कि० मी० डामर की सड़कों का निर्माण। लगभग ४ लाख रु० के सड़क अनुदान द्वारा १९७३–७४ में सड़कों के निर्माण कार्य का कराया जाना।

२. कन्या पाठशाला शेखपुरा (ब्राँच माखूपुर), कन्या जूनियर हाई स्कूल शेख सराय, कन्या प्राइमरी पाठशाला शेख सराय और कन्या प्राइमरी पाठशाला कमाल सराय की नई इमारतों का निर्माण, कन्या जूनियर हाई स्कूल शेख सराय एवं कन्या प्राइमरी पाठशाला माखूपुर की इमारतों का विस्तार।

३. २०५ बिजली के नये पोल एवं ८३ नई लालटेनों की स्थापना।

४. इन्द्रा पार्क का निर्माण।

५. डा० जाकिर हुसेन पुस्तकालय की स्थापना एवं भवन निर्माण।

६. कार्यालय से मिला हुआ भवन बनवा कर सेन्ट्रल बैंक की ब्राँच खुलवाई गई है।

योजना बद्ध कार्य—

१. पेय जल की व्यवस्था।
२. मीट मार्केट, स्लाटर हाउस, हरिजन बस्ती, स्वीपर्स कालोनी का निर्माण
३. बिजली के विस्तार का कार्य
४. सदर बाजार का निर्माण
५. महिला चिकित्सालय का निर्माण

उपरोक्त कार्यों के लिये शासन द्वारा शीघ्र ही स्वीकृति होने की आशा है। इसके अतिरिक्त बोर्ड के सम्मुख अनेकों प्रगतिशील कार्यों की योजनायें विचाराधीन हैं।

मो० कमर आलम
अधिशासी अधिकारी

डा० इशरत अली
अध्यक्ष

नगर पालिका खैराबाद
जिला सीतापुर (उ० प्र०)

सौंदर्य की धरती :

कुमायूँ

कुशवाहा 'शान्त'

अद्भुत रंगारंग भारत देश के उत्तर प्रदेश में तराई भाग और गिरिराज हिमालय के मध्य में बसा है-कुमायूँ क्षेत्र-हरित कृषि-वनस्थली, निचली उपत्य-काओं, ऊँची पहाड़ियों और स्वचालित भूमि-जल-सुविधाओंसे पूर्ण।

अन्तिम रेलवे स्टेशन छोटी लाइन का 'काठगोदाम'-अपने नाम के अनुरूप लकड़ियों का भण्डार, तराई भाग के नुक्कड़ और पर्वतीय क्षेत्र के प्रवेशद्वार पर स्थित है। यहाँ से पर्वतीय क्षेत्र की यात्रा टेढ़ी मेढ़ी सर्पीली सड़कों पर बसों एवं टैक्सियों से आनन्दमय होती है; बस किसी-किसी को मिचलाहट और उल्टियों से बचने के लिये एवोमिन की गोलियाँ यात्रा आरम्भ करने से पूर्व लेनी पड़ती हैं। मार्ग के स्नेहिल हिचकोले यात्रा को अत्यन्त सुखद बनाते हैं।

अगणित मधुमक्खियों का भंडार चढ़ती सड़क पर, ११ मील की यात्रा पर स्थित 'ज्योली कोट' नैनीताल की सुदूर झलक देता है और ग्रीष्म काल में प्रस्तुत करता है-काफल, किलमोड़े, आड़ू, रसभरी फलों के ढेर-बिक्रेताओं द्वारा, जो अल्प मात्रा में स्वाद हेतु ही आनन्दमय होते हैं; कुछ इनकी प्राकृतिक बनावट के कारण नहीं भी खरीदते स्वाद सबका मीठा, टखमिट्ठा होता है।

आगे मुख्य राजमार्ग से हटकर सुशोभित समुद्र सतह से ४५०० फुट की ऊँचाई पर, बलिष्ट पाण्डव भीम के नाम पर उभरा भीम ताल तैराकों एवं मछली के शिकारियों के लिये विशेष आनन्ददायी, वन-भोज-स्थान। नयनाभिराम दृश्य मन मोह लेते हैं। काठगोदाम से २१ मील दूर और ५००० फुट ऊँचाई पर भुवाली स्वस्थप्रद समीर, देवदारचीड़ के लम्बे गगनचुम्बी वृक्षों की सायँ-सायँ आवाज गुँजाता, क्षय-चिकित्सालय संजोये बसा हुआ है।

वापसी पर सावधानी से यहाँ के व्यापार-कुशल फल-विक्रेताओं से फल के बक्से
खरीदे जा सकते हैं । चने से अश्व शक्ति और अन्तर्राष्ट्रीय चाय से ताजगी ले
अग्रसर हो, अगले स्थान सरित तट पर बसे- 'गरम पानी' से मिलता है कलेजा
ठण्डा करने के लिये, सिंह मूर्ति मुख से प्रवाहित शीतल जल । इस स्थान से
पूर्व कैंचीनुमा सड़क से पार हो, 'बिरला मन्दिर-कैंची' के हिप्पी युगल के
भजन का आनन्द भी अविस्मरणीय है ।

अपनी इच्छानुसार 'गरमपानी' पुल से फूटते दो मार्गों में से एक अल्मोड़ा
या रानीखेत की ओर जाने के लिये चुना जा सकता है । ५२ मील की यात्रा
समाप्ति पर, देवदार पुंज हिमालय दृश्यों एवं विषम गृह-निर्माणों के मध्य चालू
'रानीखेत' के किसी होटल में ठहर कर, जेब खाली कर, आनन्द अधिक जुटाया
जा सकता है । रानीखेत से स्थानीय बस से जाकर ३ मील पर झूला देबी
के दर्शन का पुन्य कमा, २ मील आगे चौबटिया' सेब फल उपवन के मनोहारी
दृश्यों को हृदय में संजोया जा सकता है । ५ मील दूर पर निर्मित गोल्फ क्षेत्र-
खेल के अतिरिक्त, फिल्म-शूटिंग का भी आर्कषण रहा है । यहीं पर कालिका
मन्दिर डाक बंगले के बगल में एक रम्य पहाड़ी पर शोभायमान है ।

अनेक ऐतिहासिक मन्दिरों से पूर्ण, तीर्थ बद्रीनाथ और केदारनाथ के मार्ग
पर, रानीखेत से २५ मील दूर और अल्मोड़ा से ४७ मील पर, लगभग ५०००
फुट ऊँचे बुलाता है-ब्लाक 'द्वाराहाट' इससे ३ मील दूर 'दूनागिरि' के काली
मन्दिर में अर्ध रात्रिपश्चात् एक बाघ को प्रायः माथा टेकते देखा जा सकता
है । ऐसी बात इस ओर प्रसिद्ध है ।

अल्मोड़ा की ओर आते हुये । रानीखेत से ९ मील दूर समुद्र तल से
६००० फुट की ऊँचाई पर घने बनों के समीप, हिमालय के सुन्दर दृश्यों और
प्रादेशिक कृषि भूरक्षण केन्द्र का आकर्षण है-'मजखाली' । व्यक्तिगत फल
उद्यान एवं प्रातितिक दृश्य दर्शनीय हैं । पर्वतीय डोली के साथ बारात में
पीताम्बर परिधन धारित, रंगीला छत्र ताने, पाँच प्रतिशत का प्रतिनिधित्व
करता दूल्हा, आँखों को एक चमक दे जाता है, जब बाजे वाले मधुर-कर्ण प्रिय
संगीत स्वर को हृदय पर उतार जाते हैं, इन पर्वतीय क्षेत्रों में ।

अनमोल साहित्यक रत्न सुमित्रानन्दन पन्त, गौरापन्त, शिवानी,
राजनीतिज्ञ स्वर्गीय गोविन्दवल्लभ पन्त के जन्म स्थान, सात के मन्दिर एवं
मनोहारी दृश्यों से पूर्ण ५४०० फुट की ऊँचाई पर काठगोदाम से ५७ मील और

रानीखेत से २८ मील पर, अर्वाचीन, प्राचीन सभ्यता को जगमगाता बसा है अल्मोड़ा' शहर । धुन्ध न छायी रहे तो हिमगिरि दृश्य अत्यन्त मनोमोहक दृष्टि गोचर होता है। पर्वतीय क्षेत्र की अर्थ-व्यवस्था में यहाँ की ग्राम-वन देवियों के जीवन पर्यन्त कठिन परिश्रम का विशेष योग है।

अल्मोड़ा प्राकृतिक एवं मानव सौंदर्य का अद्भुत सम्मिलन स्थल है। यहाँ की सुन्दर बालायें पूरे कुमायूं क्षेत्र में अपने सौंदर्य के लिये प्रसिद्ध हैं।

लम्बे वृक्षों से पूर्ण, हिमालय का अधिकतम दृश्य दर्शनेवाला, शीतलमन्द-सुगन्ध समीर से मोहक. सागर सतह से ६२०० फुट की उँचाई और अल्मोड़ा से ३२ मील की दूरी पर लहराता है। भारत का स्विटजरलैण्ड-'कौशानी', यदि सुन्दर पार्कों स्वच्छ होटलों और स्थानीय निवासियों के व्यवहार के अभाव को भुला-दिया जाय तो पर्वतीय स्थान अति आनन्ददायी ही लगते रहें। कौशानी से १२ मील ३७०० फुट की ऊँचाई पर गोमती नदी के तट पर

(शेष पृष्ट १४ पर)

हिमगिरि की वैदूर्यमणि : नैनीझील

सत्य नारायण-लक्ष्मीनारायण देवालय का आकर्षण है/ ... अल्मोड़ा से ५६ मील दूर ३२०० फुट की ऊँचाई पर गोमती-सरयू नदियों के संगम पर पवित्र स्थान, उत्तरायणी मेले के लिये प्रसिद्ध है-'बागेश्वर'। ७५०० फुट ऊँचे, अल्मोड़ा से १५ मील दूर गुंजित है—मुक्तेश्वर' यहाँ के सेव उपवन, राजकीय पशु चिकित्सा केन्द्र दर्शनीय हैं।

हिमालय के अंक में अद्भुत नग सी जड़ी ९५ फुट गहरी मनोहारी नैनी झील ढाई मील की सड़क से घिरी, नैनी देवी को पूजती, अगणित सलानियों के नौका विहार स्रोत बनी, काठगोदाम से २० मील, सागर सतह से ६३०० फुट की ऊँचाई पर नाना होटलों, वन-भोज स्थानों, कार्यालयों, क्रय-विक्रय केन्द्रों से आवेष्ठित ,नैनीताल शहर को रमणीक पर्यटन-स्थल में परिवर्तित करती है। घोड़ों पर चढ़कर उनकी दुलकी चाल का अनन्द मल्लीताल से तल्ली ताल तक रंग विरंगे परिधानों से सज्जित गोरे-काले स्त्री पुरुषों के झुण्ड से होते हुये चाइना चोटी पर पहुंचकर प्रात: कालीन प्रथम सूर्य किरणों के आलोक में रंग वदलते गिरिराज को प्रात: नमस्कार करना, क्या कभी भुलाया ज सकता है ?

अवसर मिलने पर नैनीताल के अचार रखने के १०-१० किलो की मात्रा के काठ के बरनी जेसे वर्तन, ऊनी वस्त्र, काठ के हस्तकला के सामान, आदि क्रय किये जा सकते हैं।

अलसाये नैनों एवं थकित शरीर को थोड़ी अशान्ति होने पर भी, नैनीताल से लगभग ९० मील और रानीखेत से ५६ मील पर ३००० फुट की ऊँचाई पर बने रामनगर के निकट 'कार्बेट नेशनल पार्क के वन-जन्तुओं के आकर्षण के आनन्द को कौन छोड़ना चाहता है ? राम गंगा नदी के समीप निर्मित इस पार्क की एक अपनी ही शोभा है। इसमें वन्य पशुओ को स्वच्छन्द रूप से रहने की व्यवस्था की गयी है।

अपर्याप्त धन, ऊनी वस्त्र एवं समय के बिना पर्वतीय स्थलों के भ्रमण का आनन्द फीका होजाता है। मई-जून, नवम्बर-दिसम्बर के महीने पर्यटन के लिये सुहाने होते हैं। लगभग सभी रमणीक स्थानों तक या निकट तक पहुंचने के लिये वाहन उपलब्ध हैं और भोजन-निवास के लिये अन्य सुविधायें। कुछ काल के लिये कुमायूं क्षेत्र में सहृदय सहित आकर प्राकृतिक जीवन का सुख लाभ करना अपने में एक बहुत बड़ी उपलब्धि है।

पूर्णागिरि

हिमालय पर्वत की तलहटी में भारत नैपाल सीमा पर पूर्णगिरि नामक पवित्र पर्वत है। पूर्वोत्तर रेलवे की एक शाखा पीलीभीत से टनकपुर जाती है जो इस शाखा का अंतिम स्टेशन हैं। टनकपुर से पूर्णगिरि को मार्ग जाता है। यहाँ से बोम चट्टी तक बसें जाती हैं। उसके आगे का पर्वतीय मार्ग अत्यधिक कठिन और दुर्गम होने के कारण पैदल का मार्ग ही हैं। बोम चट्टी पर यात्रियों को सामान ले जाने के लिये कुली मिल जाते हैं जिनसे मजदूरी पहले से तय कर लेना ठीक रहता है। टनकपुर से पूर्णगिरि लगभग नौ मील दूर है, किन्तु बोम से आगे की कठिन पैदल यात्रा के कारण यह दूरी कुछ अधिक ही प्रतीत होती है।

दुर्गम तथा कठिन चढ़ाई-उतराई वाले मार्ग के बावजूद भी वनों पर्वतों और झरनों के मनोमुग्धकारी दृश्य के कारण यहाँ की यात्रा कष्टप्रद नहीं लगती और छोटे बच्चे से लेकर बूढ़े तक सभी 'पूर्णागिरि माता की जय' बोलते हुये हँसते-गाते चले जाते हैं।

पूर्णगिरि पर्वत से कुछ नीचे टुन्नास नामक स्थान पर यात्री जाकर ठहरते हैं। यहाँ दो धर्मशालायें हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ पण्डे खाने-पीने के सामान तथा प्रसाद आदि की अपनी दुकानें लगा लेते हैं और उन्ही में छप्पर डालकर यात्रियों के ठहरने का स्थान भी बना लेते हैं। यहाँ खाने-पीने का प्रायः सभी सामान मिल जाता है केवल पानी की थोड़ी असुविधा अवश्य होती है जिसे यात्रियों के साथ के कुली या यात्रियों को स्वयं कुछ नीचे उतर कर झरनों से से लाना पड़ता है।

पूर्णगिरि का पूरा पर्वत देवी का स्वरूप माना जाता है और इसकी अन्तिम चोटी पर ही यात्री पूजन अर्चन करते हैं।

टुन्नास से पूर्णगिरि देवी के मंदिर तक जाने के लिये बड़ी सतर्कता वर्तनी पड़ती है। क्योंकि इधर का मार्ग अत्यन्त दुर्गम हैं। दीवार की तरह खड़े हुये पर्बत को काट कर सँकरा मार्ग बनाया गया है जिसके एक ओर दीवार जैसा

पर्वत और दूसरी ओर हजारों फुट गहरा खड्ड है। पूर्णगिरि पर्वत पर जाते समय लोग नंगे पैर ही जाते हैं। इस पर अपवित्र स्त्री अथवा पुरुष नहीं चढ़ सकता। ऐसा कहा जना है कि ऐसे नर-नरियों को अथवा घोर पापियों को पूर्णगिरि पर्वत पर चढ़ने में मार्ग ही दिखाई नहीं पड़ता।

आज के वैज्ञानिक युग में यह बात अवश्य ही आश्चर्य जनक लगती है कि इतने दुर्गम और कठिन चढ़ाई के होते और संकरे मार्ग पर हजारों यात्रियों के एक साथ आने-जाने पर भी कभी सुनने में नही आया कि पूर्णगिरिके मार्ग में किसी की गिरने से मृत्यु हो गई हो। चाहे इसे देवी की शक्ति माना जाय या भक्त का विश्वास पर यह ध्रुव सत्य है कि इस क्षेत्र में ऐसे अलौकिक चमत्कार पग-पग पर देखने को मिलते हैं।

पूर्णगिरि की यात्रा चैत्रके नव रात्रि में विशेष रूप से होती है जब दूर-दूर से हजारों की संख्या में यात्री यहाँ आते हैं। ॐ

बैजनाथ

अल्मोड़ा से ४१ मील उत्तर की ओर स्थित बैजनाथ का स्थान बड़ा हो मनोहर है। यहाँ से कुछ पास ही गरुड़नगर तक मोटर जाती है जहाँ से बैजनाथ के कलावशेष थोड़ी ही दूर रह जाते हैं। मन्दिरों का एक समूह बैजनाथ सरोवर के तट पर है। ये मंदिर शिखर शैली के बने हैं। बैजनाथ के मुख्य मंदर में पार्वती की एक सुन्दर प्रतिमा स्थापित है। पार्वती की मूर्ति के इधर-उधर शिव-पार्वती, लक्ष्मी नारायण गणेश तथा सूर्य आदि की छोटी मूर्तियाँ भी हैं। *

कटारमल

यह स्थान अल्मोड़ा से लगभग नौ मील पश्चिम में स्थित है। अल्मोड़ा से ७ मील दूर कोसी तक मोटर से जा सकते हैं। वहाँ से ऊपर पहाड़ पर चढ़ कर कटारमल तक जा सकते हैं। उत्तराखण्ड का महत्व-पूर्ण सूर्य मंदिर यहीं पर है। प्रधान मंदिर का ऊपरी भाग टूट गया है। इसमें की बड़ी सूर्य मूर्ति ३ फुट ८ इंच ऊंची तथा दो फुट चौड़ी है। सूर्य भगवान कमल के आसन पर बैठे हैं। यह मूर्ति १२ वीं शताब्दी की है और भूरे पत्थर की सुन्दर कलाकृति है। मंदिर के प्रशस्त मंडल में शिव-पार्वती, लक्ष्मीनारायण तथा नृसिंह आदि की भी प्रतिमायें हैं। *

यमुनोत्तरी

यह स्थान समुद्रतल से दस हजार फुट ऊँचाई पर है । यह यमुना का उद्‌गम स्थल है । यात्रियों के लिये यहाँ धर्मशाला है । यहाँ गरम पानी के कई कुन्ड हैं जिनका जल खौलता रहता है । यात्री कपड़े में बाँधकर चावल आलू आदि खाने की चीजें उसमें डुबो देते हैं और वे पक जातीं हैं ।

बहुत ऊँचाई पर कलिन्दगिरि से हिम पिघलकर कई धाराओं में गिरता है । कलिन्द से निकलने के कारण ही यमुना को कालिन्दी भी कहते है । यहाँ शीत इतना है कि झरनों का पानी बार-बार जमता पिघलता है । ऐसे ठंडे स्थान में गरम पानी के झरने और कुन्ड जिनमें खौलता हुआ पानी ! प्रकृति का अद्‌भुत चमत्कार है । *

गंङ्गोत्तरी

सागरतल से लगभग दस हजार फुट ऊँचाई पर यह स्थान है । यद्यपि गंगा का उद्‌गम स्थल गोमुख यहाँ से १८ मील आगे है पर आगे की यात्रा बहुत कठिन होने से अधिकांश यात्री यहीं गंगा में स्नान करके, गंगा जी का पूजन कर गंगाजल लेकर लौट आते हैं ।

यहां ठहरने के लिये कई धर्मशालायें हैं । यात्रियों को यहां सदावर्त भी मिलता है । यहां का मुख्य मंदिर श्री गंगा जीं का मंदिर है । मंदिर में आदि शंकराचार्य द्वारा प्रतिष्ठित गंगा जी की मूर्ति है । मूर्ति तथा उसके छत्र आदि सभी सोने के हैं । मंदिर में राजा भगीरथ, यमुना, सरस्वती तथा शंकराचार्य की मूर्तियां भी हैं ।

गंगा जी के मंदिर के पास ही भैरवनाथ मंदिर है । गङ्गोत्री में सूर्यकुन्ड, विष्णुकुन्ड, ब्रह्मकुन्ड आदि तीर्थ हैं । यहीं वह विशाल भगीरथ शिला है, जिस पर कहा जाता है कि राजा भगीरथ ने तप किया था । *

उत्तरकाशी

यह उत्तराखण्ड का महत्वपूर्ण तीर्थ स्थल है। यहां अनेकों प्राचीन मन्दिर हैं, जिनमें विश्वनाथ जी का मन्दिर तथा देवासुर संग्राम के समय हुयी शक्ति (मन्दिर के सामने का त्रिशूल) दर्शनीय हैं। एकादशरुद्र मन्दिर भी अत्यन्त सुन्दर है। गोपेश्वर, परशुराम दत्तात्रेय, भैरव, अन्नपूर्णा आदि के मन्दिर भी दर्शनीय हैं। *

सम्पादक:

परमानन्द रस्तोगी

प्रकाशक:

भारतीय प्रकाशन

१९८, ताजीखाना

लखनऊ-१

फोन: २२८३०

देश दर्शन अंक

(प्रथम खण्ड)

मूल्य: २.५० रुपया

कहाँ क्या

अपनी बात

'देश दर्शन' का प्रथम खण्ड आप के हाथ में है। हमें अत्यन्त खेद है कि हम उसे समय पर प्रकाशित करने में असमर्थ रहे। अल्प पूंजी से चलने वाले पत्र-पत्रिकाओं को जिन अकथनीय कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, 'भारतीय जगत' भी उनका अपवाद नहीं रहा। निरन्तर संघर्ष करते रहने पर भी अन्ततः उसके पिछले कुछ अंक प्रकाशित नहीं हो सके।

उसके बाद कागज का भीषण अकाल और आकाश को छूने वाली मूल्य वृद्धि ने उसे एक धक्का और दिया। प्रेस वालों का सहयोग पत्र-पत्रिकाओं को कितना मिलता है यह सभी भुक्तभोगी जानते हैं। समय पर अंक निकाल पाना बिना अपने प्रेस के सर्वथा असम्भव है।

सरकारी सहयोग भी लघु पत्र-पत्रिकाओं के लिये जितना कुछ है वह शोचनीय ही है। कागज का कोटा प्राप्त करने की जो सीढ़ियाँ हैं वह किसी भी असमर्थ व्यक्ति के लिये दुर्गम हैं। सरकारी विज्ञापन उन्हीं पत्र-पत्रिकाओं को अधिक मिलते हैं जो समर्थ हैं, सम्पन्न हैं। जो कुछ थोड़े बहुत विज्ञापन लघु पत्रों आदि को बँटते हैं वे अधिकतर उन्हें ही प्राप्त हो पाते हैं जिनकी शासन के कुछ प्रमुख व्यक्तियों तक पहुंच है।

'देशद र्शन' के प्रकाशन में इन आर्थिक पक्षों के अतिरिक्त अंक की सामग्री जुटाने में भी किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा उसकी चर्चा न करना भी अनुचित ही होगा। 'देश दर्शन अंक' भारत में पर्यटन तथा तीर्थयात्रा पर आधारित है। स्वभावतः उसकी सामग्री हमें पर्यटन विभागों तथा सभी राज्यों के सूचना निदेशालयों से प्राप्त हो जाना चाहिये थी। हमने इसी आशा से सभी राज्यों के पर्यटन निदेशक तथा

सूचना निदेशकों से लिखा-पढ़ी की। अपने-अपने राज्यों के दर्शनीय स्थलों पर ज्ञानवर्धक लेख तथा तत्संबंधी चित्र माँगे। केन्द्रीय पर्यटन विभाग को भी लिखा। किन्तु खेद ही नहीं दुख के साथ कहना पड़ता है कि केवल पांच प्रदेशों (जिसमें हमारा ही राज्य उत्तर प्रदेश नहीं है) को छोड़कर किसी ने हमारे पत्रों का उत्तर तक देना आवश्यक नहीं समझा। जिन प्रदेशों ने सामग्री भेजी भी तो वह वे बुकलेटें थीं जो पर्यटकों को दी जाती हैं। कहीं से भी कोई फोटो चित्र नहीं आया।

हर प्रदेश के इतने बड़े-बड़े पर्यटन तथा सूचना विभाग जिनमें हजारों आफिसर और लाखों बाबू काम करते हैं और जिन पर करोड़ों रुपया खर्च होता है आखिर किस लिये खोले गये हैं ? यदि सामान्य जन को छोटी सी जानकारी भी नहीं दे सकते तो इन सूचना विभागों की क्या आवश्यकता ? यदि एक पर्यटक या तीर्थयात्री को मार्ग दर्शन संबंधी बात नहीं बता सकते तो इन पर्यटन विभागों से क्या लाभ ?

सूचना विभागों में दर्शनीय स्थलों, महत्वपूर्ण कार्यों आदि से संबंधित ब्लाक भी पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने के लिये तैयार कराये जाते हैं जिन पर सरकार की एक बड़ी रकम खर्च होती है किन्तु लाल फीता-शाही में उनका मिलना भी असम्भव है। कभी इस अधिकारी कभी उस अधिकारी के पास की भागदौड़ में शक्ति समाप्त हो जाती है और निराश हो ब्लाक पाने की आशा छोड़कर बैठ जाना पड़ता है।

'देश दर्शन' अंक को यह सभी कठिनाइयाँ झेलना पड़ी हैं। फिर भी, हमने हिम्मत नहीं हारी और येन केन प्रकारेण 'देश दर्शन' को दो खण्डों में नकालने का निश्चय किया। प्रथम खण्ड आपको समर्पित है। आशानुकूल सामग्री, चित्र आदि न दे पाने पर भी अगले खण्ड में उन सभी कमियों को पूरी करने के प्रयास में हम अभी से जुटे हैं। आशा है हमारे कृपाल पाठक हमसे सहयोग करेंगे।

भारत :

आदिकाल से पर्यटकों का स्वप्नदेश

पी० आनन्द

शताब्दियों पूर्व से ही भारत विदेशियों के लिये स्वप्न देश रहा है। लोग अपने बच्चों को भारत के महान ऐश्वर्य और वैभव की ऐसी रोचक कहानियां सुनाया करते थे कि उनमें बचपन से ही भारत को देखने की उत्कट आकाँक्षा उत्पन्न हो जाती थी और हर एक बड़ा होकर भारत आने के मन्सूबे बनाने लगता था। तब किसी दूर के दूसरे देश में पहुंच पाना सरल नहीं था। दुर्गम वनों, पर्वतों और रेगिस्तानों को पार कर कहीं पहुंचना विरले ही साहसियों का कार्य था। फिर भी इन विषम परिस्थितियों में भी अनेक विदेशी यात्री भारत आते रहते थे।

प्राचीनतम संस्कृति के चार प्रमुख देशों— भारत, मिश्र, मेसोपटामिया और चीन में भारत की भौगोलिक स्थिति मध्य में है। इस लिये उसका इन देशों से सुगम सम्पर्क था और ईसा पूर्व से ही उसका विदेशों से व्यापारिक सम्बन्ध भी था। भारत का कला कौशल अपने चरम उत्कर्ष पर था और यहाँ के बने हुये वस्त्र एवं कलात्मक वस्तुयें विदेशों के बाजारों में छाई रहती थीं और बड़े ऊंचे दामों पर वहाँ बिकतीं थीं। रोम की स्त्रियाँ भारतीय वस्त्रों-विशेषकर यहाँ की

मलमल के लिये कैसी दीवानी रहती थीं इसका बड़ा ही रोचक वर्णन यूनानी पर्यटकों के यात्रा विवरणों में मिलता है। मिश्र और अरब देशों में भारत को सोने की चिड़िया ही कहा जाता था और उसी सोने की चिड़िया को देखने इब्नबतूता जैसे कितने ही यात्री यहाँ आये थे।

इन लोगों ने जहाँ अपने भारत दर्शन का सुन्दर वर्णन किया है वहाँ यहां के वैभव को दिखाने के लिये कुछ विचित्र बातें भी लिखी हैं। इब्नबतूता ने यहाँ भूमि से सोना खोदकर लाने वाली चीटियों की चर्चा की है।

भारत आने वाले विदेशी यात्रियों में अधिकाँश आर्थिक दृष्टि से व्यापार आदि के लिये ही आते थे। पर कुछ लोग धार्मिक जिज्ञासा एवं भारत-दर्शन के लिये भी आते थे। चीन के अनेक यात्री धार्मिक दृष्टि से ही यहाँ आये पर उन्होंने अपने भारत प्रवास में यहाँ के प्रमुख स्थानों की यात्रायें भी की। ह्वेन्सांग बौद्ध धर्म के अध्ययन के लिये यहाँ आया था, पर वह बौद्ध तीर्थों के अतिरिक्त कन्नौज और कुरुक्षेत्र आदि भी गया। फाह्यान ने दक्षिण भारत की भी यात्रा की थी।

भारत का वैभव और धन की चकाचौंध तो विदेशियों को मुग्ध करती ही थी, पर यहां का प्राकृतिक सौंदर्य भी उन्हें कम आकृष्ट नहीं करता था। यहाँ की दुग्ध-धवल पर्वत मालायें, मुक्तमाल से सुन्दर झरने, इठलाती नदियों से आवेष्ठित शस्य-श्यामल विस्तृत मैदान, फूलों और फलों से लदे वन और उद्यान और उन सबके इर्द-गिर्द ऊंची-ऊंची अट्टालिकाओं, विशाल मंदिरों, और बड़ी-बड़ी बाजारों वाले नगर भी पर्यटकों के विशेष आकर्षण केन्द्र थे।

चौथी-पाँचवीं शताब्दी के बाद से स्थापत्य कला का काफी विकास हुआ और उसके बाद से एक से एक सुन्दर भवन, मंदिर और अन्य कला कृतियां सामने आईं। उनमें से अनेक आज भी अपने गौरव का प्रदर्शन करती खड़ी हैं किन्तु दुर्भाग्यवश अधिकांश आततायियों के अत्याचार का शिकार हो गईं या काल के आघात में समाप्त हो गईं। मुस्लिम शासन काल में कई धर्मांध शासकों ने अनगिनत प्रवीण शिल्पियों की वर्षों की साधना से निर्मित सुन्दर मंदिरों

एवं अद्वितीय मूर्तियों को तोड़-फोड़ कर बर्बाद कर दिया फिर भी उनके टूटे-फूटे खण्डों को देखने आज कितने ही विदेशी पर्यटक आते हैं। मुस्लिम शासकों ने भी अपनी शान कायम रखने के लिये कई सुन्दर भवनों का निर्माण किया। कुछ शासक वस्तुत: कलाप्रेमी थे। ताज-महल जैसी कृतियां उनके सौंदर्यबोध और कला-प्रेम की परिचायक हैं। इस युग के कुछ भवन और उद्यान आदि वस्तुत: दर्शनीय हैं और पर्यटकों को भारत आने का आमंत्रण देते हैं।

ब्रिटिश शासन काल में भवन निर्माण कला में यद्यपि बहुत कुछ परिवर्तन आ चुका था। महीन कला के स्थान पर विशालता एवं सादगी को महत्व दिया जाने लगा था, पर अंग्रेज शासकों ने भारत में बहुत सी ऐसी इमारतें बनवाई जिनमें भारतीय कला तथा शैली का पुट था। यही कारण है कि अँग्रेजों द्वारा बनवाये हुये कई भवन दर्शनीय हैं। कलकत्ता का विक्टोरिया मेमोरियल भवन तथा दिल्ली के सेक्रेटेरियट भवन आदि इसके उदाहरण हैं।

अंग्रेज़ शासकों ने सबसे बड़ा प्रशंसनीय कार्य इस क्षेत्र में जो किया वह यह कि उन्होंने पहले के बने किसी भी मंदिर, मस्जिद या अन्य भवन को कोई नुकसान नहीं पहुंचाया अपितु उसकी रक्षा और मरम्मत की पूरी-पूरी व्यवस्था की। हिन्दू शासन काल के बाद मुस्लिम काल में मंदिरों और भवनों की जैसी बेरहम तोड़-फोड़ हुई वैसी ही यदि अँग्रेजों ने भी की होती तो आज भारत मात्र खंडहरों का देश होता और पर्यटक यहाँ मोहन जोदड़ो और हड़प्पा की कड़ी जोड़ने के लिये आता। सौभाग्य से तोड़-फोड़ की क्रूर परम्परा मुस्लिम शासकों तक ही सीमित रही और युग-युग से विदेशी पर्यटकों को आकृष्ट करने वाला भारत आज भी अपने सुरम्य प्राकृतिक स्थलों, कलात्मक मंदिरों और भवनों के वैभव से पर्यटकों को आकर्षित करता है।

तीर्थयात्रा :

पर्यटन का आदि स्वरूप

पर्यटन शब्द का प्रचलन भारत में भले ही आधुनिक हो पर पर्यटन का स्वरूप भारत के लिये नया नहीं है। अत्यन्त प्राचीनकाल से ही भारतीय अपने देश को देखने समझने के लिये प्रयत्नशील रहे हैं। वैदिक काल सें लेकर पुराण युग तक देश की तत्कालीन भौगोलिक जानकारी के कितने ही पुष्ट प्रमाण मिलते हैं। इन सब विवरणों से सहज ही कल्पना होती है कि उन दिनों भी लोग देश दर्शन के लिये देश के सुदूर तथा दुर्गम स्थानों की यात्रायें करते थे।

देश के कोने-कोने में तीर्थों की स्थापना और प्रतिष्ठा के पीछे भी देशदर्शन की भावना छिपी है। यह भावना केवल देशदर्शन ही नहीं पूरे भारत में एक्य-भाव-स्थापन को भी बल देती थी। हमारे प्राचीन मनीषियों ने बड़ी दूरदर्शिता से काम लेकर तीर्थों की स्थापना की तथा उन्हें अखिल भारतीय मान्यता दी।

भारत जैसे हजारों मील लम्बे-चौड़े विशल देश के लोग एक दूसरे से सम्बद्ध रहें तथा उनमें राष्ट्रीय एकता बनी रहे इसके लिये एक ऐसे सूत्र की आवश्यकता थी जो उन्हें जोड़े रहे। वह युग धार्मिक युग था। धर्म ही समस्त देश के भारतीयों को एक सूत्र में जोड़ रख सकता था। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर भारत की चारों दिशाओं में चार धामों की स्थापना की। धुर उत्तर में बदरीनाथ, धुर दक्षिण में रामेश्वरम, पूर्व में जगन्नाथ पुरी तथा पश्चिम में द्वारिकापुरी।

इतना ही नहीं एक स्थान के लोग दूसरे स्थान में जायें, इसके लिये उन्होंने कुछ अनिवार्य नियम भी बना दिये जैसे गंगोत्री का जल लेकर रामेश्वरम में चढ़ाये बिना तीर्थ

यात्रा का पुण्य अधूरा रहेगा। दक्षिण के लोग काशी में जब तक गंगा स्नान कर पिंड न नहीं करेंगे तथा काशी विश्वनाथ के दर्शन नहीं करेंगे तब तक उनके पूर्व पितरों का उद्धार नहीं होगा और न ही उन्हें स्वर्ग प्राप्ति होगी।

इसी प्रकार देश के अन्य बहुत से तीर्थों के संबंध में भी भिन्न-भिन्न धारणायें और मान्यतायें प्रचलित हुई। जैसे गया में मृत सबंधियों का पिंडदान तथा श्राद्ध करने से मृत आत्माओं को मुक्ति मिलेगी तथा स्वर्ग प्राप्ति होगी आदि।

जिन दिनों तीर्थ परम्परा का उदय हुआ उन दिनों यातायात के साधन बहुत ही सीमित एवं अविकसित थे। दुर्गम वनों, दुर्लंघ्य पर्वतों तथा मरुस्थलों और विशाल नदी-नालों को पार करने के लिये न तो आज कल जैसे रेल हवाई जहाज थे न मोटर-बसें। उन दिनों यात्रिओं को अधिकतर पैदल, घोड़ों या बैल गाड़ियों से ही यात्रायें करना पड़तीं थीं। ऊपर से मार्ग में हिंस्र पशुओं, चोर-डाकुओं आदि का भय भी रहता था। कितने ही लोग इन यात्राओं में अपनी जान से हाथ धोते थे। इसी लिये उन दिनों तीर्थ यात्रा पर जाने वाले व्यक्ति को उसके स्वजन-बन्धु गांव या नगर की सीमा तक बाजे-गाजे के साथ पहुंचाने जाते थे। यदि धर्म की उत्कट भावना तीर्थों के साथ न जुड़ी होती तो इतनी जोखिम उठा कर और कष्ट झेल कर कौन इतनी-इतनी दूर की यात्रायें करता। फिर देश की एकता अखण्डता और धार्मिक समानता का रूप ही दूसरा होता। उत्तराखण्ड के रहने वाले जानते ही नहीं कि विन्ध्याचल के दक्षिण में क्या है और केरलवासी को पता ही नहीं होता कि मरुभूमि कैसी होती है या हिमाच्छादित पर्वत चोटियों का सौंदर्य कैसा होता है।

जैसे-जैसे लोग धार्मिक भावना-वश तीर्थ यात्रा को जाने लगे वैसे-वैसे उनमें अपने देश के विभिन्न सौंदर्य-स्थलों को देखने का कौतूहल भी बढ़ता गया। कालान्तर में यातायात के मार्गों का भी विकास हुआ। पक्के राजपथों के निर्माण ने यात्रा सरल कर दी। मध्य युग और उसके बाद यातायात के साधनों में भी विकास हुआ। स्थल मार्ग के साथ-साथ जल मार्ग भी विकसित हुये। लोगो में अपने सुन्दर देश को देखने की उत्कंठा बढ़ी और तीर्थ यात्रा के बहाने देशदर्शन की भावना

को बल मिला ।

अभी तक यात्रा की कठिनाइयों के कारण केवल पुरुष ही तीर्थयात्रा पर जाते थे किन्तु यात्रा की सुविधा बढ़ने पर स्त्रियां भी तीर्थयात्रा पर जाने लगीं ।

आधुनिक युग में यातायात के विकसित साधनों के कारण यात्रा करना अत्यन्त सुगम हो गया है । उत्तर भारत का रहने वाला व्यक्ति हवाई जहाज को अलग रेल द्वारा भी रामेश्वरम या कन्याकुमारी तीन चार दिन में पहुंच सकता है । फिर भी इस निर्धन देश के लोग देश दर्शन के नाम पर कितना देख पाते हैं ? आज भी जो लोग ऐसी यात्रायें करते हैं उनमें अधिकाँश तीर्थ यात्रा की भावना लेकर ही जाते हैं । यह सही है कि उनमें से अब अधिक लोगों में धार्मिक भावना कम रहती है देश दर्शन एवं पर्यटन की भावना अधिक । पर पर्यटन के लिये भी वे घर से निकल पाते हैं तीर्थयात्रा के बहाने ही ।

मध्य युग में वास्तु कला और मूर्तिकला का भी बड़ा विकास हुआ । उस काल के हिंदू राजाओं ने बड़े ही भव्य, विशाल एवं कलात्मक मंदिर बनवाये जिनकी कला की ख्याति देश भर में फैलती गयी और उन्हें देखने की लालसा लोगों में बलवती होती गयी । आज तो अनेक तीर्थयात्री इन अद्वितीय मंदिरों को देखने आते है । भारतीय पर्यटन की प्रेरक आज भी वस्तुत: तीर्थ यात्रा ही है । ●

जन्म पर्वत की रानी का

● सुन्दर एस० पैंत्रिहा

शिकार के लिये गये हुये कर्नल हंट की आंखें दूर हिमाच्छादित पर्वतमालाओं के बीच से धीरे-धीरे ऊपर उठते हुये सूर्य पर गड़ी हुई थीं। लाल सूरज का सिंदूर श्वेत श्रृंगों पर झड़ रहा था और उन्हें उस शर्माई हुई नई दुल्हन सा रूप प्रदान कर रहा था जिसके गौरवर्ण कपोल अपने प्रियतम के प्रथम स्पर्श से लजाकर आरक्त हो उठे हों। प्रकृति के इस अभिजात सौंदर्य ने हंट पर जैसे जादू कर दिया और वह उस रूप माधुरी में ऐसा खो गया कि यह भी भूल गया कि वह सारी रात शिकार की खोज में मचान पर जम्हाइयां लेता रहा है और थकान से उसका अंग-अंग टूट रहा है। उसका साथी लायड कब का कैम्प तक पहुंच चुका होगा और बैरा उसके सामने चाय की ट्रे रख कर प्याले में गर्म चाय उँडेल रहा होगा।

'वेरी लवली' (बहुत सुन्दर) उसके मुख से निकला और वह प्रकृति के उस अनूठे सौंदर्य में डूबा, उस रूप-माधुरी को निहारता अनिच्छा से कैम्प की ओर धीरे-धीरे बढ़ा।

तभी एक खड़खड़ाहट !

'अरे, यह तो कोई साहब है।' खेत में काम करते हुये वृद्ध ने दौड़ कर उसे उठाते हुये कहा। तभी उसकी पन्द्रह वर्षीय पुत्री ने किसी विशेषज्ञ के समान उसके हाथ-पाँव और सींने की धड़कनों की जांच पड़ताल करके प्रसन्नता से कहा—'पर बाबा, अभी यह जिन्दा है। देखो न, साँस चल रही है। जल्दी करो बाबा, नहीं तो मर जायेगा।'

दोनो उसे उठा कर पहाड़ी के ऊपर अपनी झोपड़ी में ले गये। लड़की दौड़ कर पानी ले आई और घावों को धोने लगी। वृद्ध तो जैसे धन्वन्तरि का वंशज ही था। न जाने कौन-कौन सी पत्तियां तोड़ कर ले आया और उन्हें कुचल कर रस निकाला। घावों को उससे तर

किया, फिर कुचली हुई पत्तियों को घावों पर रखकर अपने मैले-कुचैले कपड़ों की पट्टियां बांध दीं।

हंट बेहोश था, बेहोश रहा और मौत कुटिया के द्वार को घेरे खड़ी रही वृद्ध और उसकी पुत्री मौन थे, मौन रहे। उनकी आँखें उस अभागे घायल अतिथि की बुझती श्वासों पर लगी हुई थीं।

सिंदूरी सूर्य शिशिर के सिकुड़े पर्वतांचल पर कोमल रश्मियों की अँगुलियों से गुदगुदाता हुआ आगे बढ़ता गया और जड़-चेतन में हल्की उष्णता भरता गया, पर वृद्ध की ठंडी कुटिया का ठंडा चूल्हा आज ठंडा ही पड़ा रहा।

रात का अंधकार श्मशान की मनहूसियत सा छा गया। कुटिया के नन्हें प्रदीप के क्षीण आलोक में हंट का निश्चल शरीर वीराने की उस कब्र सा चमक रहा था जो अपनी सफेदी के कारण अंधकार में भी एक रेखा सी दिखाई पड़ती है।

'जरा कोयला जला दे। ठंड बढ़ने लगी है।' वृद्ध ने कहा।

कोने में रक्खी हुई हांडी में से कोयले निकाल कर उसने अंगीठी जलाई। वृद्ध ने घावों को फिर पत्तियों के रस से तर किया। उसके हाथों-पाँवों के तलवों में रस मला और आँच से धीरे-धीरे सेंका।

लड़की ने एक बार निराशा से देखा और उसके नेत्रों ने जैसे वृद्ध से कहा कि अब कुछ करना व्यर्थ है। तभी वृद्ध ने हंट की नब्ज देखी और उसके मुख पर प्रसन्नता की आभा चमक उठी।

'नाड़ी अब ठीक है, बच जायेगा।'

हंट की श्वांस की गति तेज होने लगी।

रात ऊँघ रही थी और दिन जाग रहा था। हंट ने धीरे-धीरे आँखें खोलीं। कष्ट से कराहा। चारों ओर दृष्टि दौड़ाई। पास बैठे हुये बुढ़ापे और जवानी को अपनी और देखकर संतोष से मुस्कराते पाया। उठने की चेष्टा की, पर उठ न सका। तभी वृद्ध ने नम्रता से कहा—'अभी उठिये नहीं, आराम से लेटे रहिये।

'लेकिन मैं... यहाँ कैसे... मेरे चोट...?'

'सब बताऊँगा हुजूर ! आप अभी आराम करिये ।'

हंट ने परिस्थिति को समझा। अपनी विवशता को समझ कर चुपचाप जीर्ण कुटिया के मैले बिस्तर पर पड़ा रहा।

लड़की ने गर्म दूध का गिलास आगे बढ़ा दिया।

'यहाँ चाय तो है नहीं हुजूर।' वृद्ध ने सकुचाते हुये कहा।

'कोई बात नहीं।' दूध पीते हुये उसने पूछा—'लेकिन हम यहाँ कैसे आया ?'

वृद्ध ने सारी घटना कह सुनाई।

'तुमने हमारा जान बचाया, हम तुम्हारा एहसान नहीं भूलेगा।'

'हमने कुछ नहीं किया हुजूर, सब भगवान ने किया।'

'हमारा एक काम कर दो बाबा ! यहाँ नीचे थोड़ी दूर पर हमारा कैम्प लगा है। हमारा आदमी लोग वहां है। उन्हें बोलो हमको चोट लगा है।'

'बहुत अच्छा साब।'

वृद्ध चला गया। हंट के अंग अंग में पीड़ा थीं। कष्ट से वह कराह उठा। उसे कराहते देख लड़की उसके पास दौड़ जाती और जब वह शान्त हो जाता तो फिर अपने दैनिक कार्य में लग जाती।

हंट ने उसे पास बुलाया, पूछा 'क्या नाम है तुम्हारा ?'

'मोती !' उसने अल्हड़पन से मुस्कराते हुये जवाब दिया।

'अच्छा नाम है और तुम भी बहुत अच्छा है।'

लड़की लजा गई। हंट कहता गया-'तुम लोग बहुत अच्छा आदमी है। कल तुम लोग न बचाता तो मैं मर जाता।'

वह भोलेपन से आँखों को फैलाकर बोली—हाँ साब, उस ऊँचे पहाड़ से गिरकर कोई नहीं बचता। पिछले बरस एक साहब गिरा था और फट मर गया। वह तो मैंने तुरन्त आप को देख लिया और वह दवा लगाई, वह दवा लगाई कि बस......!'

उसके कहने के ढंग पर हंट अपनी असह्य वेदना में भी हंसे बिना न रह सका।

'हुजूर, वह लोग तो आपको कल इधर-उधर ढूंढ कर चले गये।' वृद्ध ने प्रवेश करते हुये कहा।

'चले गये? फिर...अब?'

'घबड़ाइये नहीं, जरा सा ठीक होते ही मैं आपको पहुंचा आऊँगा।

विवशता, कर ही क्या सकता था।

× × ×

घाव भर गये थे। भारतीय जड़ी-बूटियों की चिकित्सा पद्धति को हेय समझने वाला अगरेज बिना चीड़-फाड़ के जंगली पत्तियों और जड़ों के सहारे स्वस्थ हो रहा था। पैरों में भीतरी चोट के कारण खड़े होने की शक्ति अभी नहीं आ पाई थी। मोनी का हाथ पकड़ कर उसके कंधे का सहारा लेकर वह खुली चट्टानों पर आकर बैठ जाता। दूर-दूर तक बिखरी हुई ऊँची-नीची पर्वत मालायें एक ओर श्याम दूसरी ओर श्वेत रंग की पत्तियों वाली सदाबहार वृक्ष-राजि, छोटे-छोटे झरनों के पास ऊँची नीची पहाड़ियों पर दूर-दूर बसी हुई चार-छः झोपड़ियाँ, उन्हीं से संलग्न सीढ़ीनुमा भूमि पर धान के छोटे-छोटे खेत! वह घंटों प्रकृति के उस अपूर्ण सौंदर्य को देखता रहता और रात को जब देहरादून के प्रदीपों की बारात सजने लगती तो वह उस दीपावली के मनोरम दृश्य में खो जाता। कभी-कभी वह मोनी से भी पूछ बैठता—'देखो मोनी, वह क्या है?' मोनी का सीधा सा उत्तर होता—'शहर,।

'हाँ शहर, लेकिन यहाँ से कितना खूबसूरत लगता है।' और वह कीटस या शेली का कोई मधुर गीत गुनगुनाने लगता जिसे सुनकर मोनी केवल इतना ही समझ पाती कि उसका गोरा अतिथि इस समय बहुत प्रसन्न हैं और उसकी सेवा-सुश्रूषा और साधना सफल हो गयी है।

उस दिन जब हंट ने नीचे पहाड़ियों में बहने वाले विशाल झरने के अनुपम सौंदर्य के विषय में सुना तो उसी दिन से उसके मन में उसे देखने की उत्कंठा प्रबल हो उठी।

पैर ठीक होते न होते वह झरना देखने गया और जब उसने उस अलौकिक स्थल को देखा तो उसके मुख से अनायास निकल पड़ा—'रियली इट इज हैवन (सचमुच यह स्वर्ग है)' और स्वर्गपुरी की कल्पना

उसके मस्तष्क में तेजी से घूम गई।

× × ×

'बाबा, आज फिर वही गोरा, अरे वही न अपना मेहमान, वही फिर आया है। उसके साथ और भी बहुत से लोग हैं।' जल्दी में दौड़ती हुई आकर मोनी ने वृद्ध से कहा—'आओ, चलो न बाबा उससे मिलने।' कहते-कहते उसने वृद्ध का हाथ पकड़ कर उसे खड़ा भी कर दिया।

'सलाम साब ! आप अच्छे न हैं ?'

हंट ने अपने साथियों की ओर से दृष्टि घुमाकर वृद्ध को देखा, बोला—'ओह तुम है। तुम अच्छा है ? तुम्हारी लड़की किधर है ?'

'इधर हूं साब !' कहकर भीड़ के पीछे खड़ी हुई मोनी अल्हड़पन से उछलकर सामने आ गई।

बगल में खड़ी अपनी पत्नी से हंट ने अँग्रेजी में कहा—'इन्हीं लोगों ने मेरी जान बचाई थी।'

'ओ, आई सी।' उसकी पत्नी ने मोनी को थपथपाते हुये पर्स से निकाल कर दो रुपये उसकी ओर बाढ़ये।

'उसने हाथ पीछे खींचते हुये कहा 'रुपया ? नहीं साब, हम रुपया लेने नहीं साहब को देखने आये हैं। उनका हाल पूछने आये हैं।'

'हम तुमको बख्शीश दिया।' मेमसाहब ने स्वभाव के अनुसार कहा।

'हमें बख्शीश नहीं चाहिये मेम साब, साहब अच्छे हो गये, हमारे लिये यही खुशी है। वृद्ध ने नम्रता से कहा।

'ओह, ठीक है ठीक है।' हंट ने बात टालने के लिये कहा—'उस दिन हमने तुमसे बोला था बाबा कि हम यहां स्वर्ग बसायेगा। याद है न ? उसी के लिये हम लोग आया है। छोटे से जंगली गाँव को हम खूबसूरत शहर बना देगा। हम इसे पहाड़ों की रानी बनायेगा।'

'सच ? तब तो हमें यहीं शहर देखने को मिल जायेगा। मैंने कभी शहर नहीं देखा।' कहते-कहते मोनी जैसे नाच उठी।

× × ×

कार्य आरम्भ हो गया। नगराज के वृक्ष पर कुदाल और फावड़े चलने लगे। सदाबहार वृक्षों के सिर कट-कट कर गिरने लगे। नक्शे बनने

लगे, मार्ग तैयार होने लगे। ऊंची-नीची पहाड़ियों पर कोठियां खड़ीं होनें लगीं, झोपड़ियां ढहने लगीं।

तभी एक दिन जब मोनी और उसका वृद्ध पिता धरती माता के गीत गाते हुए अपने पके धान के खेत से चिड़ियों और कौओं को उड़ा रहे थे और दूर बनती हुई कोठियो पर कारीगरों को काम करते हुये देख कर प्रसन्न हो रहे थे, मजदूरों और इंजीनियरों के दल ने आकर खेत को घेर लिया। नाप-जोख आरम्भ हो गयी। वृद्ध और मोनी भौचक से पास आकर देखने लगे। वृद्ध ने साहस करके पूछा—'क्या नाप रहे हैं सरकार ?'

'यहाँ पर पार्क बनेगी।' एक काली चमड़ी के हिन्दुस्तानी साहब बहादुर ने बड़े रोब से कहा।

'पार्क, यह क्या होता है साहब ?'

'तुम नहीं समझोगे। पार्क बस पार्क होता है यानी बगीचा।' बड़े लहजे से वे बोले।

'लेकिन हुजूर, यह तो मेरा खेत है। इसी से हमारे बाप दादे पलते आये हैं। बगीचा कहीं और बना लीजिये हुजूर।'

'वह यहीं बनेगा। क्लब के सामने ही पार्क का रहना जरूरी है। सामने की पहाड़ी पर क्लब घर बनेगा।'

'सामने की पहाड़ी पर? यह आप क्या कर रहे हैं यहाँ मेरा घर है? नहीं-नहीं यह नहीं हो सकता। मैं अभी साहब को बुलाकर लाता हूं।'

काले साहब बहादुर ने मुँह बिचका दिया।

कर्नल हंट अपने कैम्प के बाहर बैठा हुआ अपनी पत्नी से बातें करता हुआ चाय पी रहा था। वृद्ध लग-भग भागता सा उसके सामने आकर फूट पड़ा हुजूर जल्दी चलिये, आपके आदमी मेरा खेत और घर सब बर्बाद किये डाल रहे हैं।" प्रत्युत्तर की आशा में ताकती हुई मोनी भी उसके बगल में सटी खड़ी थी।

हंट ने चाय का घूंट आराम से गले से उतारते हुये कहा—'वह लोग नक्शे के हिसाब से काम कर रहा है बाबा. जिस जगह जो चीज बनना है वहाँ बनाना ही पड़ेगा।

'लेकिन हुजूर बगीचा और क्लब कहीं और भीं बनाये जा सकते हैं।'

(शेष पृष्ठ १६६ पर)

उत्तर प्रदेश की राजधानी :

लखनऊ

उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ अपनी शानोशौकत के लिये प्रसिद्ध रहा है। इसका प्राचीन नाम लक्ष्मणपुरी था। कहते हैं इसे लक्ष्मण जी ने बसाया था। आज भी विद्यमान लक्ष्मण टीला इस तथ्य की पुष्टि करता है।

लखनऊ के प्राचीन इतिहास पर कोई ठोस प्रकाश नहीं पड़ता। मुस्लिम शासन काल से ही लखनऊ संबंधी जानकारी प्राप्त होती है।

अकबर के समय से इसकी विशेष चर्चा मिलती है। उस समय यह अवध प्रान्त की राजधानी था और अकबर द्वारा नियुक्त सूबेदार यहाँ रहा करता था। उसके समय में लखनऊ का काफी विकास हुआ और लखनऊ में चौक के आस-पास के कई मुहल्ले उसने बसाये। अकबरी दरवाजा आज भी लखनऊ का प्रमुख स्थान है।

जहाँगीर के शासन काल में भी यहाँ कई मुहल्ले तथा खूबसूरत भवन आदि बने। स्वयं जहांगीर लखनऊ आया था और कई सुन्दर बाग लगवाये थे। उसी की अनुमति पर एक योरोपीय व्यापारी ने यहाँ व्यापार करके एक वर्ष में ही इतना धन कमा लिया कि उसने एक शानदार महल बनवाया जिसे फिरंगी महल कहते हैं।

औरंगज़ेब ने अपने अयोध्या के मुहर्रम से लौटते समय यहाँ के प्रसिद्ध लक्ष्मण टीले पर बने हुये भव्य मंदिर को तुड़वा दिया और उसके स्थान पर मस्जिद बनवादी। उसके बाद से हिन्दू युग का चिन्ह लखनऊ से मिट गया और लोग बाद को भूल गये कि मुस्लमानों के आने से पहले भी लखनऊ में कुछ था। लोगों में यह भ्रम बल पकड़ गया कि नवाबों से पहले यहां एक छोटा सा गाँव था और नवाबों ने उसे विकसित करके एक भव्य नगर का रूप दिया।

लखनऊ के आधुनिक स्वरूप

और हिंदू युग के नष्ट भ्रष्ट वैभव को पुनर्स्थापित करने का श्रेय १८ वीं शताब्दी के अवध के नवाबों को है। अवध के नवाब मुगल साम्राज्य के वजीर होते थे और अवध के शासक तथा सूबेदार की हैसियत से शासन करते थे। पहले यह नवाब फैजाबाद और लखनऊ दोनों स्थानों में रह कर शासन चलाते थे पर नवाब शुजाउद्दौला का पुत्र मिर्जा अमानी आसफुद्दौला (१७७५-१७९७) जब गद्दी पर बैठा तो उसने फैजाबाद से हटाकर लखनऊ को स्थायी राजधानी बनाया।

आसफुद्दौला कला प्रेमी था और शान-शौकत से रहने वाला था। उसने अनेक भव्य और विशाल विशाल इमारतें बनवाई और सुन्दर बाग-बगीचें लगवाये। आसफुद्दौला का इमामबाड़ा जहां उसके कलाप्रेम का द्योतक है वहीं उसकी उदारता और दानशीलता का प्रमाण भी है। उसके सम्बन्ध में प्रसिद्ध था—

जिसको न दे मौला,
उसको दे आसफुद्दौला।

जब सन १७८४ ई० में लखनऊ में भीषण अकाल पड़ा था तो अकाल पीड़ितों की सहायता के लिये उसने इस आलीशान इमामबाड़े का निर्माण कार्य शुरू करवा दिया और लाखों लोग उसमें कार्य करके अनाज पाने लगे।

इस सुप्रसिद्ध इमामबाड़े अतिरिक्त आसफुद्दौला ने आसफ कोठी, मच्छी भवन, दौलतखाना, चारबाग, तथा ऐशबाग आदि बनवाये। उसने लखनऊ नगर का विकास भी किया और वजीर गंज, फतेहगंज, रकाबगंज तथा नक्खास आदि मुहल्ले बसाये। राजाबाजार छावनी, हुसैनगंज, काश्मीरी मुहल्ला आदि की नींव भी उसी समय पड़ी। उसके एक मन्त्री टिकैतराय ने टिकैतगंज बसाया तथा टिकैतराय का प्रसिद्ध तालाब तथा मंदिर बनवाया।

सन् १८१४ में जब नवाब गजीउद्दीन हैदर गद्दी पर बैठा तो उसने भी लखनऊ के विकास की ओर विशेष ध्यान दिया। उसके शासनकाल में कला और साहित्य की विशेष उन्नति हुई। उसने कई सुन्दर इमारतें बनवाई जिनमें मोती-महल, मुबारक मंजिल, शाह मंजिल तथा विलायती बाग प्रसिद्ध हैं। गाजीउद्दीन हैदर ने गंगा और गोमती को मिलाने के लिये एक नहर का निर्माण भी शुरू किया था जो आज भी बनारसीबाग, सदर और नाका-

हिंडोला से गुजरती है। उस नहर का निर्माण बाद को बन्दकर दिया गया था।

गाजीउद्दीन हैदर के बाद नासिरुद्दीन हैदर गद्दी पर बैठा। उसके शासन काल में गणेशगंज, चाँदगंज आदि मुहल्ले बसे और उसके मंत्री रोशनुद्दौला ने अपने नाम से एक भवन बनवाया जिसमें अभी कुछ काल पूर्व तक लखनऊ की कचहरी थी।

उसके बाद मुहम्मदअली शाह को गद्दी मिली वह भी कला प्रेमी बादशाह था। हुसेनाबाद का प्रसिद्ध इमामबाड़ा उसी ने बनवाया था। उसी ने लाल बारादरी भी बनवाई जो आजकल पिक्चर गैलरी के नाम से प्रसिद्ध है।

मुहम्मदअलीशाह के बाद अमजद अली शाह गद्दी पर बैठा। उसका वजीर इमाम हुसेन उसका कृपापात्र था इसलिये उसने उसे अमीनुद्दौला की उपाधि दी थी। उसके नाम पर अमीनाबाद बनवाया गया। हजरतगंज का निर्माण भी उसी ने कराया। इसी के शासनकाल में लखनऊ कानपुर की पक्की सड़क का भी निर्माण हुआ।

लखनऊ के अन्तिम नवाब वाजिदअली शाह हुये जिनकी विलासिता के चर्चे अब भी सर्वत्र होते हैं। उनके हरम में ३६० बेगमें थीं जिनके साथ वह कैसरबाग के उद्यान और भवनों में रंगरेलियां मनाया करता था। कैसरबाग बारादरी आदि उसकी विलासिता के कुछ चिन्ह अभी भी विद्यमान हैं।

दर्शनीय स्थान

आसफुद्दौला का इमामबाड़ा:—इसे बड़ा इमामबाड़ा भी कहते हैं। गोमती के किनारे मेडिकल कालेज के पिछवाड़े यह एक बड़ी शानदार इमारत है। इसका निर्माण नवाब आसफुद्दौला ने करवाया था जो उसने सन् १७८४ के अकालपीड़ितों की सहायतार्थ बनवाया था।

पाँच मंजिली यह आलीशान इमारत स्थापत्य कला का सुन्दर नमूना है। इसके बड़े-बड़े विशाल हाल और कक्षों की छतें बिना किसी खम्भों के सहारे लोहे के गार्डरों या लकड़ी की धरनियों के केवल ईंट और मसालों से बनी हुई हैं। इसके ऊपरी मंजिलों में भूलभुलैयां भी हैं जो उस समय के इंजीनियरिंग ज्ञान का अदभुत नमूना है। कहते हैं कि इससे भी भयानक भूलभुलैयां तहखाने

में हैं जिन्हें बाद को अंग्रेजों ने बन्द करवा दिया।

इमामबाड़े से लगी हुई एक विशाल मस्जिद है जिसे जामा मस्जिद कहते हैं। इसके दोनो पार्श्व में दो मीनारे हैं।

इमामबाड़े के एक पार्श्व में प्राचीन बावली है जिसके भीतर ग्रीष्मकाल में रहने लायक कमरे तथा गैलरियाँ बनी हुई है और नीचे जल तक जाने का मार्ग है।

हुसैनाबाद का इमामबाड़ा:— बड़े इमामबाड़े से पश्चिम की ओर थोड़ी ही दूरी पर यह छोटी परन्तु बड़ी सुन्दर इमारत है। इसे १८२४ में मुहम्मद अली शाह ने बनवाया था। बाहर से यद्यपि यह इमारत सादे ढंग की है पर भीतर इसकी सजावट देखने ही लायक है। बड़े-बड़े झाड़फानुस, चित्र तथा कलात्मक वस्तुयें बड़ी आकर्षक हैं। इसके सामने पानी के सुन्दर हौज हैं। मुहर्रम के दिनों में यहाँ होने वाली रोशनी देखने हजारों लोग आते हैं।

रूमी दरवाजा:-यह दरवाजा बड़े इमाम बाड़े के पश्चिम में स्थित है। इसका निर्माण इस्तम्बूल (तुर्की) में बने एक दरवाजे के अनुकरण पर तुर्की शैली में किया गया है। यह इतना ऊँचा है कि इसमें मय हौदे के हाथी आसानी से निकल सकता है।

रेजीडेन्सी भवन:—इसे सन् १८०० ई० में नवाब सआदत अली खाँ ने ब्रिटिश रेजीडेन्ट के लिये बनवाया था। सन् १८५७ के विद्रोह के दिनों में रेजीडेन्सी में ही अँग्रेजों ने शरण ली थी जिसे विद्रोहियों ने चारों ओर से घेर कर भीषण गोलाबारी की थीं। भवन अब खंडहरों के रूप में हीं एक उद्यान में है।

(शेष पृष्ठ १११ पर)

यह मेरा शहर या अजायब घर !

के० पी० सक्सेना

हमारी घी-दूध से संपन्न इस दुनिया में इंसान और जानवर ने अपने-अपने कल्चर यानी संस्कृति के अलग-अलग अड्डे बना रखे हैं !... इंसानों के कल्चर का अड्डा है म्यूजियम यानी मुर्दा अजायबघर ! ...इस अड्डे पर पुराने इंसान के पाजामे, तलवारें, अंगूठियाँ, घड़े, दालान के टूटे खम्भे वगैरह सजा कर रखे जाते हैं। ताकि हम कह सकें कि फलां बादशाह इतने घेर का कुर्ता पहनता था और फलां बादशाह इतने नम्बर की जूती पांव में डालता था !—जानवरों के कल्चर का अड्डा है जिन्दा अजायबघर या 'जू'। लोगबाग इसे 'चिड़ियाघर' भी कहते हैं !...मेरी समझ में आज तक एक मोटी सी बात नहीं आई कि अगर यह चिड़याघर है तो फिर चिड़िया के घर में हाथी कैसे रह लेता है ?...खैर होगा...हम भारतवासी हाथियों के शौकीन हैं !... हमने एक से एक तगड़ा सफेद हाथी पाल रखा है और उसकी मोटर के पेट्रोल का खर्च झेल रहे हैं !...इन दोनों अड्डों के बाहर भी इंसान और जानवर का कल्चर घूमता—फिरता नजर आता है !... मुर्गे, तोते, गधे आदि चिड़ियाघर में भी हैं और चिड़ियाघर के बाहर भी!... ठीक इसी तरह मेरे इस शहर लखनऊ में इंसानी कल्चर का जितना माल मुर्दा अजायबघर में है, उससे कहीं अधिक सड़कों पर घूमता—

फिरता नजर आता है।...कभी-कभी तो अपने इस शहर के इंसानी माडल देख कर मुझे ऐसा लगता है जैसे हमारा सदियों पुराना इतिहास अल्मारियों से निकल कर सड़कों पर घूम कर हवा ले रहा है ताकि फफूंदी न लगने पाए !...कभी-कभी अपना महकदार हजरतगंज मुझे मोहनजोदड़ो नज़र आता है कभी हड़प्पा !...यहाँ घूमते हुए कुछेक ऐतिहासिक माडिलों को देखकर जी करता है कि उनसे पूछूं कि कहीं मैगस्थनीज या फाहियान तो नहीं है ?...अच्छे भले चेहरों पर दाढ़ियाँ उगाए, जटा-जूट बढ़ाए कलमें फुलाए, बड़े-बड़े गन्डे ताबीज धारे ऐतिहासिक विभूतियों को देखता हूं तो लगता है जैसे बलबन या महमूद गजनवी आ रहे हों... एक साहब की पाजामेनुमा, चीथड़े टंकी, झावड़-झोल पतलून देखकर मुझे वास्को-डीगामा की याद आ गयी...वह भी हिस्ट्री किताब वाली तस्वीर में ऐसी ही पहने था !...एक दूसरे सज्जन दाढ़ी ऐंठे हुए कुछ यों टहल रहे हैं। अगर वे मुँह में सिग्रेट न दबाये होते तो मैं उन्हें 'छत्रपति शिवाजी" कहकर सीने से लगालेता ...एक अन्य भले मानुष इतने ताबीज गले में लटकाए थे कि मुगल पीरियड के पीर फकीर लग रहे थे अगर उनकी बगल मेंउनकी रोमांस न चल रही होती तो सचमुच मैं उन्हें फकीर समझकर बच्चे के ताबीज के लिए दाढ़ी का एक बाल माँग लेता, इसी तरह एक दिन लालबाग में मुझे मिर्जा गालिब मिल गये !...बाद में पता लगा कि वे एक दफ्तर के नये-नये क्लर्क हैं !...कुछेक महीने पहले सैंडिलों में पीतल के भारी भरकम बक्सुए और झालरें देखकर मैं डर गया कि शायद रोमन सम्राट दौरे पर निकले हैं !... लखनऊ वाले भाग्यशाली हैं कि हमारी सड़कों पर ऐतिहासिक अजायब घर चल फिर रहे हैं !...किसी बाहर वाले को जरूरत हो तो एक आध नमूना हमसे मांग ले जाए !...

छोटी से छोटी कंचुकियां धारे और सूक्ष्मतम आवरणों से कंचन काया ढके कितनी ही शकुन्तलाएं अपने दुष्यन्त बिरह में व्याकुल हमारे 'गंज' रूपी वन में विचर रही हैं। खोपड़ी घुटाए कितने ही कालिदास इनकी विरह वेदना निरख रहे हैं। हाय !—हमारा सारा इतिहास सड़कों पर आ गया है !—मैं ही एक अकेला 'ईश्वरी प्रसाद' हूं जो इस इतिहास का महत्व जानता है, अल्बूकर्क, अलबरूनी और तातार सैनिकों के ऐतिहा-

सिक चश्मौटे (बड़े चश्मे) फुटपाथ पर बिक रहे हैं।...कुछेक चेहरों पर ये चश्मौटे चढ़े देखता हूं तो पुरानी कहावत याद आती है कि 'आंखी एकौ नाहीं, कजरौटा नौ नौ"—अजायबघर की अल्मारी में हर्ष-वर्धन और बिम्बसार के घोड़ों की जो लगामें मैंने टंगी देखी थीं वे अब पेटियों के रूप में पतलून पर बंधी नजर आती हैं !—कहीं-कहीं तो पेटी की चौड़ाई कमर की टोटल चौड़ाई से भी ज्यादा होती है!—तुगलक और नादिरशाह के गुलामों की छींटदार लुंगिया अब बेबियां बांधे घूमती हैं !—इन बच्चियों को शौक है कि किसी तरह इतिहास जिन्दा रहे !—इसी सड़क पर मुझे राजा भर्तृहरि के भी दर्शन हुए जो गेरुआ रामनामी सन्यासी कुर्ता धारे गुनगुनाते चले जा रहे थे—,तू न मिली तो हम जोगी बन जाएंगे—' संन्यास प्रवृत्ति और संस्कृति में आस्था इसे ही कहते हैं !—ये बेचारे चाहते तो पढ़-लिखकर क्लर्क बन सकते थे—मगर नहीं!—उन्हें इतिहास जिन्दा रखना था सो उन्होंने जोगी बनना पसन्द किया !—वैदिक काल के लोटा बराबर झुमके और साइकिल के पहियों जैसी बड़ी-बड़ी नथें अब अजायबघर की अल्मारी से निकल कर सड़क पर आ गयी हैं ! —इबनबतूता के सुल्फे की चिलम अब पतलून की जेब में देखी जा सकती है !—बौद्ध भिक्षुओं की नैपाली टोपियाँ सन तेहत्तरीय खोपड़ियों पर सजी नजर आती हैं !—कुछेक छींटदार पाजामियां देखकर स्वामी हरिदास के तानपूरे के गिलाफ का धोखा होता है। इत्तुतमश की बीवी का चांदी का गरारा मैं इसी हजरतगंज में देख चुका हूं ! —यहीं मैंने मीराबाई के गले के रुद्राक्ष भी देखे हैं।—फुलसेट पसलियों वाले सीने पर मैंने राणा साँगा की ऐतिहासिक अकड़ भी देखी है !—एक सज्जन की कलमों का रोबदाब देख कर इसी सड़क पर मैं ऐसा हड़क गया कि उन्हें सैल्यूट दाग दिया। —वे अगर चौखटे में जड़े होते तो हूबहू वारेन हेस्टिंग्ज नजर आते—एक अन्य महिला मिनी-मिनी फ्राक में रोमन पहलवान नजर आ चुकी हैं !— उधर नफासत के महीन नमूनों का यह आलम है कि एक अदद बारीक से सज्जन चिकन चूड़ीदार में चौदह आने अनारकली नजर आ रहे थे !—

कुल मिलाकर ऐ दोस्त ! मेरा यह शहर लखनऊ एक चलता-फिरता अजायबघर है !— ●

धरती का स्वर्ग : कश्मीर

नील गगन को चूमने वाली हिमाच्छादित पर्वत चोटियों, इठलाती नदियों, मनोरम झीलों और हरी मखमली सेज वाले मैदानों से सुशोभित कश्मीर को कवियों ने धरती का स्वर्ग कहा है। वस्तुतः यहाँ के सौंदर्य से मुग्ध होकर काव्य की रस-धारा स्वतः ही फूट निकलती है।

पूरा कश्मीर रज्य दो भागों में विभक्त है— जम्मू और कश्मीर। इसके दो प्रमुख नगर हैं— श्रीनगर और जम्मू। श्री नगर यहाँ की ग्रीष्म कालीन राजधानी है और जम्मू शीतकालीन। चारों ओर ऊँची पर्वतमाला से घिरी काश्मीर घाटी ५००० फूट से ६००० फुट ऊँची है। पूर्वोत्तर भाग में हिमालय की सुन्दर पर्वत श्रेणियाँ हैं जिनकी भव्यता देखते ही बनती है। इन पर्वत श्रेणियों के लगभग बीच में नंगा पर्वत है जिसकी ऊँचाई २६६६० फुट है।

कश्मीर का नाम कश्यप मुनि के नाम पर पड़ा है। कहा जाता है कि बारामूला के पास एक पर्वत को काट कर उन्होंने एक विशाल झील बनाई थी। इस घाटी में पहले दानव रहते थे उन्हें मार कर वहाँ ऋषि ने मानवों को बसाया। इसी से इस स्थान को कश्यप-मार कहने लगे जो कालान्तर में कश्मीर कहलाने लगा।

अत्यन्त प्राचीन काल से ही कश्मीर भारत का अंग रहा है। वाह्य आक्रमणों का भी कश्मीर को बहुत सामना करना पड़ा है। हूण, पल्हव आदि कई जातियाँ भारत में कश्मीर के ही मार्ग से उसे पददलित करती हुई आई थीं।

सम्राट अशोक ने ई० पू० तीसरी शताब्दी में यहाँ बौद्ध धर्म का प्रचार किया था। उसके बाद अनेक शताब्दियों तक यहाँ बौद्ध और हिन्दू धर्म साथ-साथ फलते-फूलते रहे। इस काल में अनेक मठों तथा मंदिरों का भी निर्माण हुआ। ८ वीं शताब्दी में काश्मीर के महान शासक ललितादित्य ने सुप्रसिद्ध मार्तण्ड

मंदिर का निर्माण [illegible] था। परवर्ती काल में मुगल शासकों का भी इस स्थान से गहरा सम्बन्ध रहा और उन्होंने श्रीनगर में डल झील के आस-पास कई आलीशान बाग बनवाये।

कश्मीर पर प्रकृति की विशेष कृपा रही है। समूची घाटी फल-फूलों से सजी हुई है और झरने तथा नदियाँ कल-कल करती हुई बहती हैं। फलों का तो यहाँ भन्डार है। सेब, खुबानी, चेरी, आड़ू, आलू-बुखारा अखरोट और बादाम खूब होते हैं। वसन्त के साथ ही रंग-बिरंगे पुष्पों की बहार आती है। उन दिनो कश्मीर सचमुच नन्दन वन बन जाता है।

मार्च के मध्य से वसन्त आरम्भ हो जाता है और बर्फ पिघलने लगती है। लाखों जलधारायें फूट निकलती हैं और घाटी में हरियाली की बहार छा जाती है, अप्रेल में मुस्कराते झूमते फूलों से घाटी भर जाती है जून का महीना सैलानियों के लिए सबसे सुहावना होता है। उन दिनों दूर दूर से आए लोग गुलमर्ग पहल-गाम और सोनमर्ग जाते हैं और बर्फीली चोटियों के बीच मुस्कराती प्रकृति का तादात्म्य स्थापित कर [illegible] का पूरा आनन्द उठाते है। स्वास्थ्य की दृष्टि से सितम्बर और अक्टूबर का महीना सबसे अच्छा होता है जब मौसम बिलकुल स्वच्छ, शीतल और सुहावना होता है। उन दिनों चिनार के विशाल और ऊँचे वृक्षों पर सुनहला और ताम्र रंग जगमगा उठता है। दिसम्बर से फरवरी तक यहाँ अत्यधिक शीत पड़ती है और कभी-कभी हिमपात भी होता है। जनवरी में तो पूरी घाटी पर हिम धवल चादर ही छिप जाती है। स्कीइंग का आनन्द लेने वाले विशेष रूप से इन्ही दिनों कश्मीर आते हैं।

कश्मीरी लोग लम्बे कद और गौर वर्ण के होते हैं। यहाँ की स्त्रियाँ जितनी सुन्दर होती हैं उतनी ही मेहनती भी। गहरे नीले और हरे वस्त्रों, जिन्हें 'फिरानों' कहते हैं, में सजी ये कश्मीरी कामिनियाँ जब त्योहारों और उत्सवों के अवसर पर नृत्य करती और गाती हैं तब उस मनोहारी दृश्य को दर्शक जीवन भर नहीं भुला पाता।

कश्मीर जाने के लिए हवाई जहाज रेल सड़क परिवहन सभी उपलब्ध हैं। इण्डियन ए[illegible] [illegible] कार्पोरेशन की दिल्ली श्रीनगर की

दैनिक हवाई सर्विस है। रेलमार्ग द्वारा कश्मीर जाने के लिए पठानकोट तथा जम्मू तक गाड़ियां जाती हैं वहाँ से आगे बसों द्वारा जाना पड़ता है। पठानकोट से बस द्वारा जाने में ३९८ किलोमीटर का रास्ता डेढ़ दिन में पूरा होता है और रात्रि बटोट अथवा बनिहाल में बितानी पड़ती है। कुछ शौकीन लोग दिल्ली से श्रीनगर तक कार द्वारा जाना पसन्द करते हैं। मार्ग में उन्हें सब प्रकार की सुविधाएँ तथा ठहरने के लिए डाक बंगले उपलब्ध रहते हैं।

दर्शनीय स्थान

श्रीनगर

सागर तल से लगभग ५२०० फुट ऊँचाई पर स्थित श्रीनगर जम्मू कश्मीर राज्य की ग्रीष्म कालीन राजधानी होने के साथ-साथ यहाँ का सबसे प्रमुख नगर है। शंकराचार्य और हरिपर्वत नाम की दो पहाड़ियों के बीच में स्थित श्रीनगर झेलम के किनारे पर बसा है। झेलम के वक्ष पर तैरते शिकारे और हाउस बोट इस नगरी को 'पूर्व का वैनिस' कहलाने का गौरव प्रदान करते हैं। शंकराचार्य पहाड़ी पर चढ़कर ऊपर से इस नगरी को देखना अपने में बड़ा ही अद्भुत और रोमांचकारी होता है। यहाँ पहाड़ी पर एक शिवालय है जिसे २०० वर्ष ईसा पूर्व सम्राट अशोक के पुत्र जालुका ने निर्मित कराया था। इस पहाड़ी पर से मुगल उद्यानों तथा तैरते उद्यानों का दृश्य बड़ा ही भला लगता है।

नगर में ठहरने के लिए अनेक सुसज्जित आधुनिक होटल तथा हाउस बोट उपलब्ध हैं। हाउस बोटों में ठहरना भी अनिर्वचनीय अनुभूति होती है। सुसज्जित हाउसबोटों में भूमि पर बने मकानों जैसी सारी सुविधाएं उपलब्ध होती हैं। यहाँ तक टेलीफोन और वातानुकूलित कक्षों की भी सुविधाएं रहती है। उन्हें झेलम अथवा किसी झील के किनारे खड़ा कर सकते हैं और एक दृश्य से जी भर जाने पर उन्हें खेकर बीच धारा में या किसी अन्य स्थान पर भी ले जा सकते हैं।

चश्माशाही

श्रीनगर से लगभग ५ मील दूर एक सुन्दर पहाड़ी की तलहटी में डलझील के ऊपर स्थित है चश्माशाही। बारादरीनुमा भवन के पास ही एक छोटा सा उद्यान है जिसे शाहजहाँ ने बनवाया था। इस

चश्मे के पानी में औषधीय गुण विद्यमान हैं।

निशात उद्यान

यह चश्माशाही से ढ़ाई मील दूर है। इसे उद्यान प्रेमी नूरजहां के भाई आसफजहाँ ने बनवाया था इसके पार्श्व में पीर पंचाल नामक पर्वत गगन में सिर ऊँचा किए खड़ा है।

शालीमार

निशात से दो मील आगे सर्वाधिक प्रसिद्ध मुगल उद्यान शालीमार है जिसे जहाँगीर ने बनवाया था। चाहे हल्की धूप हो या चाँदनी रात गुलाब के फूलों से सजा यह उद्यान जिसमें कभी सम्राट जहाँगीर और उसकी प्रेमिका नूरजहां घूमा करते थे, हर एक सौन्दर्य प्रेमी का मन लुभाए बिना नहीं रहता।

डल झील

तीन ओर से क्रीड़ा स्थली से घिरी हुई डल झील मीठे पानी की सबसे सुन्दर झील है। पांच मील लम्बी और ढाई मील चौड़ी यह झील स्रोत के पानी से भरती है और इसका जल स्फटिक की तरह स्वच्छ है। इस पर बीच के द्वीप और तैरते उद्यान बड़े भले लगते हैं। श्रीनगर में आने वाली साक-भाजी का एक बड़ा भाग डल से आता है। झील में तैरने, सर्फराइडिंग और नौका विहार की सुविधाएं उपलब्ध हैं।

वुलर झील

यह यहाँ की बहुत गहरी और रहस्यात्मक झील है। इसके अन्दर कई द्वीप और मंदिर हैं। कई महलों ने इसमें समाधि लगाली है और कई नगर भी इसकी तलहटी में समाए हुए हैं। इसमें बहुधा प्राकृतिक उथल-पुथल होते रहते हैं और कभी-कभी अचानक भयानक तूफान उमड़ आते हैं।

शेषनाग

अमरनाथ गुफा के रास्ते में पड़ने वाला शेषनाग सागर तल से बारह हजार फुट की ऊँचाई पर है। जून तक यह बर्फ से ढका रहता है बाद में बर्फ पिघलने पर एक सुन्दर और हरी झील में परिणत हो जाता है।

यहाँ कुछ और प्रसिद्ध और सुन्दर झीलें हैं जिनमें नगीन, कौंसरनाग, विष्णुसर, कृष्णसर तथा नील नाग आदि बड़ी ही सुन्दर और आकर्षक झीलें हैं।

पहलगाम

यह श्रीनगर से सड़क द्वारा ६० मील दूर है। समुद्र तल से सात हजार दो सौ फुट की ऊँचाई पर स्थित यह स्थान समूचे कश्मीर में सर्वाधिक प्रिय स्थानों में से है। गोल्फ खेलने के शौकीन पर्यटकों के लिए पहलगाम में एक अच्छा गोल्फ कोर्स है।

गुलमर्ग

श्रीनगर से २७ मील दूर सरों और चीड़ के विशाल वृक्षों से घिरा हुआ गुलमर्ग पर्यटकों के लिए प्रमुख आकर्षण केन्द्र है। गोल्फलिक स्थानों के लिए यह स्थान सुविख्यात है। यहाँ से नंगा पर्वत की बर्फ से ढकी चोटियों का अति भव्य दृश्य दिखाई देता है। गुलमर्ग के पास ही खिलनमर्ग, अफरवठ झील, बाबाऋषी, कटारनाग आदि सुन्दर स्थान हैं जहाँ लोग पिकनिक के लिए जाते हैं। दिसम्बर में यहाँ बर्फ की मोटी चादर छा जाती है और शीतकालीन खेलों के शौकीन लोग भारी संख्या में एकत्र हो स्कीइंग और टोबोगेनिंग का मजा लेते हैं।

सोनमर्ग

श्रीनगर से ५० मील दूर सोनमर्ग सुन्दरता भव्यता और मनमोहक दृश्यों के कारण गुलमर्ग से होड़ करता है।

जम्मू

सागर तल से १००० फुट की ऊँचाई पर स्थित यह जम्मू-कश्मीर राज्य की शीतकालीन राजधानी है। जम्मू क्षेत्र मेहनती डोगरा लोगों की भूमि है। यहाँ अनेकों दुर्ग हैं जो अब अधिकांश खण्डहर रूप में ही बचे हैं। जम्मू में अनेक मंदिर होने के कारण इसे मन्दिरों की नगरी भी कहते हैं। पर्यटकों के लिये यहाँ एक बहुत अच्छा डाक बंगला तथा रेस्ट्राँ हैं। जम्मू से ही श्री वैष्णों देवी की पवित्र यात्रा के लिए तीर्थ यात्री जाते हैं।

नगराज-मणि : बदरीनाथ

भारत के चार प्रमुख धामों में से बदरीनाथ हिन्दुओं का अत्यन्त पावन धाम है। हिमालय की हिमाच्छित चोटियों के बीच हरिद्वार से लगभग ३८४ किलोमीटर दूर बदरीनाथ का पवित्र स्थान है। इसके चारों ओर का वन क्षेत्र बदरीवन के नाम से प्रसिद्ध है। प्राचीन काल से ही यह पावन तपोवन के रूप में प्रसिद्ध रहा है। प्रतिवर्ष मार्च से अक्तूबर तक बदरी नाथ

बदरीनाथ यात्रा के पैदल मार्ग का प्रथम चरण: लक्ष्मणझूला

मन्दिर के दर्शनार्थ लाखों तीर्थ यात्री यहाँ आते हैं। यहाँ के प्रमुख नरनारायण
मन्दिर में भगवान विष्णु की सुन्दर मुर्ति है। वदरीनारायग मन्दिर के अतिरिक्त यहाँ कई अन्य पावन मन्दिर, तीर्थ तथा कुण्ड आदि भी है जिसमें प्रमुख नारद शिला. मारकण्डेय शिला, गरुड़ शिला, ब्रन्ह तीर्थ, पंच तीर्थ, ब्रह्मा कुण्ड आदि हैं।

कहा जाता है कि वदरीनाथ का स्वर्णिम शिखर अहिल्या वाई होल्कर ने वनवाया था। वौद्ध काल में वद्रीनाथ क्षेत्र में बौद्ध मत का प्रभाव हो गया था किन्तु इसके वाद जगतगुरू शंकराचार्य ने यहाँ आकर पुन: हिन्दू धर्म की कीर्ति पताका फहराई। कहते हैं तभी से दक्षिण भारतीय नम्बूदरी ब्राह्मणों के अधीन यहाँ की जन व्वस्था है।

मन्दिर के पास ही एक गरम पानी का सोता है। इस सोते का पानीं तप्त कुण्ड में एकत्र होता है और शीत से ठिठुरते तीर्थ यत्रियों के लिए सोता वस्तुत: एक वरदान है।

यात्रा मार्ग तथा साधन

कुछ वर्षों पूर्व तक लोग सैकड़ों मील की यात्रा पैदल करके वदरी नारायण जाया करते थे। वदरीनाथ की यात्रा प्रमुख रूप से ऋषीकेश से आरम्भ होती है। आजकल ऋषीकेश से वदरीनाथ मन्दिर तक वस सेवा उपलब्ध हो गयी है जिससे इधर की यात्रा बहुत सुगम हो गयी है। फिर भी इस ओर के जिन स्थानों के लिये वस नहीं जाती वहाँ जा यात्री पैदल नहीं चल सकते उनके लिए कण्डी या दांडी का प्रवन्ध हो जाता है जिसे एक कुली पीठ पर वाँध कर ले जाता है।

ऋषीकेष तथा अन्य मोटर अड्डों पर कुली एजेंसियां हैं जिनके माध्यम से कुली करने में सुविधा रहती है। वदरीनाथ तथा उधर के अन्य पर्वतीय तीर्थों में सर्वत्र वावा काली कमली वाले की धर्मशालाएं हैं। मार्ग में भी स्थान-स्थान पर धर्मशालाएं मिलती है जहाँ यात्रियों को भोजन बनाने के वरतन आदि सुविधा से मिल जाते हैं। चट्टियों पर चावल, दाल, आटा आदि भी मिल जाता है।

आवश्यक सामग्री

यात्रा के लिए उपयोगी कुछ आवश्यक तथा हलके सामान अवश्य ले जाना

चाहिए । पहाड़ पर चढ़ने में सहायता देने के लिए एक छड़ी ऊनी दस्ताने तथा मोजे, हलके तथा मजबूत जूते छाता या बरसाती कोट ऊनी, कपड़े, दो कम्बल टार्च, लालटेन, मोमबत्ती, पानी की बोतल, सूखे मेवे कुछ आवश्यक औषधियाँ आदि अवश्य साथ में रखना चाहिये । यात्रा में यथासम्भव बासी भोजन तथा मार्ग में बिकने वाली खराब मिठाइयों आदि का सेवन नहीं करना चाहिए और जहाँ तक हो सके जल को उबाल कर ही प्रयोग में लाना चाहिए अन्यथा हिल डायरिया होने का भय रहता है । जल यदि उबालने की सुविधा न हो तो उसे पांच छः मिमट तक मिट्टी के बरतन में रखकर पीना चाहिए ।

केदार नाथ

गढ़वाल जिले की मन्दाकिनी घाटी में केदार नाथ का पावन मन्दिर है । कहते हैं इस मन्दिर का निर्माण पाण्डवों ने करवाया था । यहाँ भगवान शंकर का केदार संज्ञक महालिंग स्थापित है । मन्दिर के प्रांगण में नंदी की एक विशाल प्रतिमा है । मन्दिर की दीवारों पर पाण्डवों तथा द्रोपदी की सून्दर आकृतियां अंकित हैं । चारों ओर हिमाच्छादित चोटियों के बीच स्थित यह स्थान अत्यंत ही मनोरम है । केदारनाथ मन्दिर मई और अक्तूबर के बीच दर्शनार्थ खुला रहता है । केदारनाथ पीठ में अनेक कुण्ड है जिनमें शिव कुण्ड प्रमुख हैं । इनमें से एक कुण्ड का जल रक्त वर्ण है । इसे रुधिर कुण्ड कहते हैं । मन्दिर की बायीं ओर पुरन्दर पर्वत है जिसमें नारायण क्षेत्र तथा शाकम्भरी के पावन स्थल हैं । इसी क्षेत्र के कुछ प्रमुख स्थान तुंगनाथ, रुद्रनाथ एवं कल्प नाथ हैं ।

केदार नाथ जाने के लिये भी अब बस सुविधाएं उपलब्ध हो गयी हैं । ऋषीकेष बदरी नाथ मार्ग में पड़ने वाले स्थान रुद्र प्रयाग से केदारनाथ के लिए दूसरा मार्ग तैयार कर लिया गया है । पहले इस ओर की यात्रा अधिक कठिन थी यही कारण है कि केदार नाथ का मार्ग काफी बिलम्ब से अभी कुछ वर्ष पूर्व ही बनकर तैयार हो सका है । अभी भी कुछ श्रृद्धालु यात्री इस ओर की यात्रा पैदल ही करते हैं ।

नगर पालिका खैराबाद (सीतापुर)

द्वारा

किये गये विकास कार्य

१. ५.५९९ किलोमीटर कंक्रीट तथा १२.८६४ कि० मी० डामर की सड़कों का निर्माण। लगभग ४ लाख रु० के सड़क अनुदान द्वारा १९७३–७४ में सड़कों के निर्माण कार्य का कराया जाना।

२. कन्या पाठशाला शेखपुरा (ब्रांच माखूपुर), कन्या जूनियर हाई स्कूल शेख सराय, कन्या प्राइमरी पाठशाला शेख सराय और कन्या प्राइमरी पाठशाला कमाल सराय की नई इमारतों का निर्माण, कन्या जूनियर हाई स्कूल शेख सराय एवं कन्या प्राइमरी पाठशाला माखूपुर की इमारतों का विस्तार।

३. २०५ बिजली के नये पोल एवं ८३ नई लालटेनों की स्थापना।

४. इन्द्रा पार्क का निर्माण।

५. डा० जाकिर हुसेन पुस्तकालय की स्थापना एवं भवन निर्माण।

६. कार्यालय से मिला हुआ भवन बनवा कर सेन्ट्रल बैंक की ब्रांच खुलवाई गई है।

योजना बद्ध कार्य—

१. पेय जल की व्यवस्था।
२. मीट मार्केट, स्लाटर हाउस, हरिजन बस्ती, स्वीपर्स कालोनी का निर्माण
३. बिजली के विस्तार का कार्य
४. सदर बाजार का निर्माण
५. महिला चिकित्सालय का निर्माण

उपरोक्त कार्यों के लिये शासन द्वारा शीघ्र ही स्वीकृति होने की आशा है। इसके अतिरिक्त बोर्ड के सम्मुख अनेकों प्रगतिशील कार्यों की योजनायें विचाराधीन हैं।

मो० कमर आलम
अधिशासी अधिकारी

डा० इशरत अली
अध्यक्ष

नगर पालिका खैराबाद
जिला सीतापुर (उ० प्र०)

सौंदर्य की धरती :

कुमायूं

कुशवाहा 'शान्त'

अद्भुत रंगारंग भारत देश के उत्तर प्रदेश में तराई भाग और गिरिराज हिमालय के मध्य में बसा है-कुमायूँ क्षेत्र-हरित कृषि-वनस्थली, निचली उप त्य-काओं, ऊँची पहाड़ियों और स्वचालित भूमि-जल-सुविधाओंसे पूर्ण ।

अन्तिम रेलवे स्टेशन छोटी लाइन का 'काठगोदाम'-अपने नाम के अनुरूप लकड़ियों का भण्डार, तराई भाग के नुक्कड़ और पर्वतीय क्षेत्र के प्रवेशद्वार पर स्थित है । यहाँ से पर्वतीय क्षेत्र की यात्रा टेढ़ी मेढ़ी सर्पीली सड़कों पर बसों एवं टैक्सियों से आनन्दमय होती है; बस किसी-किसी को मिचलाहट और उल्टियों से बचने के लिये एवोमिन की गोलियाँ यात्रा आरम्भ करने से पूर्व लेनी पड़ती हैं । मार्ग के स्नेहिल हिचकोले यात्रा को अत्यन्त सुखद बनाते हैं ।

अगणित मधुमक्खियों का भंडार चढ़ती सड़क पर, ११ मील की यात्रा पर स्थित 'ज्योली कोट' नैनीताल की सुदूर झलक देता है और ग्रीष्म काल में प्रस्तुत करता है-काफल, किलमोड़े, आड़ू, रसबेरी फलों के ढेर-बिक्रेताओं द्वारा, जो अल्प मात्रा में स्वाद हेतु ही आनन्दमय होते हैं; कुछ इनकी प्राकृतिक बनावट के कारण नही भी खरीदते स्वाद सबका मीठा, खट्टमिट्ठा होता है ।

आगे मुख्य राजमार्ग से हटकर सुशोभित समुद्र सतह से ४५०० फुट की ऊँचाई पर, बलिष्ट पाण्डव भीम के नाम पर उभरा भीम ताल तैराकों एवं मछली के शिकारियों के लिये विशेष आनन्ददायी, वन-भोज-स्थान । नयनाभिराम दृश्य मन मोह लेते हैं । काठगोदाम से २१ मील दूर और ५००० फुट ऊँचाई पर भुवाली स्वस्थप्रद समीर, देवदारचीड़ के लम्बे गगनचुम्बी वृक्षों की सायँ-सायँ आवाज गुँजाता, क्षय-चिकित्सालय संजोये बसा हुआ है ।

क्या आप वेतन भोगी कर्मचारी हैं?

क्या आपने अपना आय का ब्योरा दाखिल कर दिया है ?

कानून के अनुसार, प्रत्येक व्यक्ति को, जिसमें केवल **वेतन** से आय पाने वाला व्यक्ति शामिल है, अगर आयकर अधिनियम, १९६१ के अधीन मिलने वाली समस्त छूटों को शामिल करने के बाद भी पिछले वर्ष उसकी कुल आय ५,००० रु० से अधिक थी, अपनी आय का ब्योरा दाखिल करना होता है।

आय का सही ब्योरा देने पर आयकर अधिकारी **यह व्यवस्था करेंगे कि:**

(क) कानून के अनुसार आपको सभी छूटें मिलें ;

(ख) अगर आपने अधिक कर दे दिया है तो आपको ऐसी राशि फौरन वापस कर दी जाए।

आय-कर के फार्म अथवा अतिरिक्त सूचना के लिये अपने कर निर्धारण आय-कर अधिकारी अथवा आय-कर विभाग के जन सम्पर्क अधिकारी से सम्पर्क कीजिये ।

अपने फार्म पर अपना स्थायी लेखा नम्बर अवश्य लिखिये

अगर आपको अभी तक स्थायी लेखा नहीं मिला हो तो अपने आयकर अधिकारी अथवा आयकर आयुक्त से स्थायी लेखा नम्बर मांगिये ।

निरीक्षण निदेशालय

(अनुसंधान, आंकड़े और प्रकाश)

नई दिल्ली ।

डीएवीपी ७३/२९२

वापसी पर सावधानी से यहाँ के व्यापार-कुशल फल-विक्रेताओं से फल के बक्से
खरीदे जा सकते हैं। चने से अश्व शक्ति और अन्तर्राष्ट्रीय चाय से ताजगी ले
अग्रसर हो, अगले स्थान सरित तट पर बसे- 'गरम पानी' से मिलता है कलेजा
ठण्डा करने के लिये, सिंह मूर्ति मुख से प्रवाहित शीतल जल। इस स्थान से
पूर्व कैंचीनुमा सड़क से पार हो, 'बिरला मन्दिर-कैंची' के हिप्पी युगल के
भजन का आनन्द भी अविस्मरणीय है।

अपनी इच्छानुसार 'गरमपानी' पुल से फूटते दो मार्गों में से एक अल्मोड़ा
या रानीखेत की ओर जाने के लिये चुना जा सकता है। ५२ मील की यात्रा
समाप्ति पर, देवदार पुंज हिमालय दृश्यों एवं विषम गृह-निर्माणों के मध्य चालू
'रानीखेत' के किसी होटल में ठहर कर, जेब खाली कर, आनन्द अधिक जुटाया
जा सकता है। रानीखेत से स्थानीय बस से जाकर ३ मील पर झूला देवी
के दर्शन का पुन्य कमा, २ मील आगे चौबटिया' सेब फल उपवन के मनोहारी
दृश्यों को हृदय में संजोया जा सकता है। ५ मील दूर पर निर्मित गोल्फ क्षेत्र-
खेल के अतिरिक्त, फिल्म-शूटिंग का भी आर्कषण रहा है। यहीं पर कालिका
मन्दिर डाक बंगले के बगल में एक रम्य पहाड़ी पर शोभायमान है।

अनेक ऐतिहासिक मन्दिरों से पूर्ण, तीर्थ बद्रीनाथ और केदारनाथ के मार्ग
पर, रानीखेत से २५ मील दूर और अल्मोड़ा से ४७ मील पर, लगभग ५०००
फुट ऊँचे बुलाता है-ब्लाक 'द्वाराहाट' इससे ३ मील दूर 'दूनागिरि' के काली
मन्दिर में अर्ध रात्रिपश्चात् एक बाघ को प्रायः माथा टेकते देखा जा सकता
है। ऐसी बात इस ओर प्रसिद्ध है।

अल्मोड़ा की ओर आते हुये। रानीखेत से ९ मील दूर समुद्र तल से
६००० फुट की ऊँचाई पर घने बनों के समीप, हिमालय के सुन्दर दृश्यों और
प्रादेशिक कृषि भूरक्षण केन्द्र का आकर्षण है-'मजखाली'। व्यक्तिगत फल
उद्यान एवं प्राततिक दृश्य दर्शनीय हैं। पर्वतीय डोली के साथ बारात में
पीताम्बर परिधन धारित, रंगीला छत्र ताने, पाँच प्रतिशत का प्रतिनिधित्व
करता दूल्हा, आँखों को एक चमक दे जाता है, जब बाजे वाले मधुर-कर्ण प्रिय
संगीत स्वर को हृदय पर उतार जाते हैं, इन पर्वतीय क्षेत्रों में।

अनमोल साहित्यक रत्न सुमित्रानन्दन पन्त, गौरापन्त, शिवानी,
राजनीतिज्ञ स्वर्गीय गोविन्दवल्लभ पन्त के जन्म स्थान, सात के मन्दिर एवं
मनोहारी दृश्यों से पूर्ण ५४०० फुट की ऊँचाई पर काठगोदाम से ५७ मील और

रानीखेत से २८ मील पर, अर्वाचीन, प्राचीन सभ्यता को जगमगाता बसा है अल्मोड़ा' शहर । धुन्ध न छायी रहे तो हिमगिरि दृश्य अत्यन्त मनोमोहक दृष्टि गोचर होता है । पर्वतीय क्षेत्र की अर्थ-व्यवस्था में यहाँ की ग्राम-वन देवियों केजीवन पर्यन्तकठिन परिश्रम का विशेष योग है ।

अल्मोड़ा प्राकृतिक एवं मानव सौंदर्य का अद्भुत सम्मिलन स्थलहै । यहाँ की सुन्दर बालायें पूरे कुमायूँ क्षेत्र में अपने सौंदर्य के लिये प्रसिद्ध हैं ।

लम्बे वृक्षों से पूर्ण, हिमालय का अधिकतम दृश्य दर्शनेवाला, शीतलमन्द-सुगन्ध समीर से मोहक. सागर सतह से ६२०० फुट की उँचाई और अल्मोड़ा से ३२ मील की दूरी पर लहराता है । भारत का स्विटजरलैण्ड-'कौशानी', यदि सुन्दर पार्कों स्वच्छ होटलों और स्थानीय निवासियों के व्यवहार के अभाव को भुला-दिया जाय तो पर्वतीय स्थान अति आनन्ददायी ही लगते रहें । कौशानी से १२ मील ३७०० फुट की ऊँचाई पर गोमती नदी के तट पर

(शेष पृष्ट १४ पर)

हिमगिरि की वैदूर्यमणि : नैनीझील

सत्य नारायण-लक्ष्मीनारायण देवालय का आकर्षण है/[illegible]' अल्मोड़ा से ५६ मील दूर ३२०० फुट की ऊँचाई पर गोमती-सरयू नदियों के संगम पर पवित्र स्थान, उत्तरायणी मेले के लिये प्रसिद्ध है-'बागेश्वर'। ७५०० फुट ऊँचे, अल्मोड़ा से १५ मील दूर गुंजित है—मुक्तेश्वर' यहाँ के सेव उपवन, राजकीय पशु चिकित्सा केन्द्र दर्शनीय हैं।

हिमालय के अंक में अद्भुत नग सी जड़ी ९५ फुट गहरी मनोहारी नैनी झील ढाई मील की सड़क से घिरी, नैनी देवी को पूजती, अगणित सलानियों के नौका विहार स्रोत बनी, काठगोदाम से २० मील, सागर सतह से ६३०० फुट की ऊँचाई पर नाना होटलों, वन-भोज स्थानों, कार्यालयों, क्रय-विक्रय केन्द्रों से आवेष्ठित ,नैनीताल शहर को रमणीक पर्यटन-स्थल में परिवर्तित करती है। घोड़ों पर चढ़कर उनकी दुलकी चाल का अनन्द मल्लीताल से तल्ली ताल तक रंग विरंगे परिधानों से सज्जित गोरे-काले स्त्री पुरुषों के झुण्ड से होते हुये चाइना चोटी पर पहुंचकर प्रातः कालीन प्रथम सूर्य किरणों के आलोक में रंग बदलते गिरिराज को प्रातः नमस्कार करना, क्या कभी भुलाया ज सकता है ?

अवसर मिलने पर नैनीताल के अचार रखने के १०-१० किलो की मात्रा के काठ के बरनी जेसे वर्तन, ऊनी वस्त्र, काठ के हस्तकला के सामान, आदि क्रय किये जा सकते हैं।

अलसाये नैनों एवं थकित शरीर को थोड़ी अशान्ति होने पर भी, नैनीताल से लगभग ९० मील और रानीखेत से ५६ मील पर ३००० फुट की ऊँचाई पर बने रामनगर के निकट 'कार्वेट नेशनल पार्क के वन-जन्तुओं के आकर्षण के आनन्द को कौन छोड़ना चाहता है ? राम गंगा नदी के समीप निर्मित इस पार्क की एक अपनी ही शोभा है। इसमें वन्य पशुओ को स्वच्छन्द रूप से रहने की व्यवस्था की गयी है।

अपर्याप्त धन, ऊनी वस्त्र एवं समय के बिना पर्वतीय स्थलों के भ्रमण का आनन्द फीका होजाता है। मई-जून, नवम्बर-दिसम्बर के महीने पर्यटन के लिये सुहाने होते हैं। लगभग सभी रमणीक स्थानों तक या निकट तक पहुंचने के लिये वाहन उपलब्ध हैं और भोजन-निवास के लिये अन्य सुविधायें। कुछ काल के लिये कुमायूँ क्षेत्र में सहृदय सहित आकर प्राकृतिक जीवन का सुख लाभ करना अपने में एक बहुत बड़ी उपलब्धि है।

पूर्णगिरि

हिमालय पर्वत की तलहटी में भारत नैपाल सीमा पर पूर्णगिरि नामक पवित्र पर्वत है। पूर्वोत्तर रेलवे की एक शाखा पीलीभीत से टनकपुर जाती है जो इस शाखा का अंतिम स्टेशन हैं। टनकपुर से पूर्णगिरि को मार्ग जाता है। यहाँ से बोम चट्टी तक बसें जाती हैं। उसके आगे का पर्वतीय मार्ग अत्यधिक कठिन और दुर्गम होने के कारण पैदल का मार्ग ही हैं। बोम चट्टी पर यात्रियों को सामान ले जाने के लिये कुली मिल जाते हैं जिनसे मजदूरी पहले से तय कर लेना ठीक रहता है। टनकपुर से पूर्णगिरि लगभग नौ मील दूर है, किन्तु बोम से आगे की कठिन पैदल यात्रा के कारण यह दूरी कुछ अधिक ही प्रतीत होती है।

दुर्गम तथा कठिन चढ़ाई-उतराई वाले मार्ग के बावजूद भी वनों पर्वतों और झारनों के मनोमुग्धकारी दृश्य के कारण यहाँ की यात्रा कष्टप्रद नहीं लगती और छोटे बच्चे से लेकर बूढ़े तक सभी 'पूर्णागिरि माता की जय' बोलते हुये हँसते-गाते चले जाते हैं।

पूर्णगिरि पर्वत से कुछ नीचे टुन्नास नामक स्थान पर यात्री जाकर ठहरते हैं। यहाँ दो धर्मशालायें हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ पण्डे खाने-पीने के सामान तथा प्रसाद आदि की अपनी दुकानें लगा लेते हैं और उन्हीं में छप्पर डालकर यात्रियों के ठहरने का स्थान भी बना लेते हैं। यहाँ खाने-पीने का प्रायः सभी सामान मिल जाता है केवल पानी की थोड़ी असुविधा अवश्य होती है जिसे यात्रियों के साथ के कुली या यात्रियों को स्वयं कुछ नीचे उतर कर झरनों से से लाना पड़ता है।

पूर्णगिरि का पूरा पर्वत देवी का स्वरूप माना जाता है और इसकी अन्तिम चोटी पर ही यात्री पूजन अर्चन करते हैं।

टुन्नास से पूर्णगिरि देवी के मंदिर तक जाने के लिये बड़ी सतर्कता बर्तनी पड़ती है। क्योंकि इधर का मार्ग अत्यन्त दुर्गम हैं। दीवार की तरह खड़े हुये पर्वत को काट कर सँकरा मार्ग बनाया गया है जिसके एक ओर दीवार जैसा

पर्वत और दूसरी ओर हजारों फुट गहरा खड्ड है। पूर्णगिरि पर्वत पर जाते समय लोग नंगे पैर ही जाते हैं। इस पर अपवित्र स्त्री अथवा पुरुष नहीं चढ़ सकता। ऐसा कहा जता है कि ऐसे नर-नरियों को अथवा घोर पापियों को पूर्णगिरि पर्वत पर चढ़ने में मार्ग ही दिखाई नहीं पड़ता।

आज के वैज्ञानिक युग में यह बात अवश्य ही आश्चर्य जनक लगती है कि इतने दुर्गम और कठिन चढ़ाई के होते और संकरे मार्ग पर हजारों यात्रियों के एक साथ आने-जाने पर भी कभी सुनने में नही आया कि पूर्णगिरिके मार्ग में किसी की गिरने से मृत्यु हो गई हो। चाहे इसे देवी की शक्ति माना जाय या भक्त का विश्वास पर यह ध्रुव सत्य है कि इस क्षेत्र में ऐसे अलौकिक चमत्कार पग-पग पर देखने को मिलते हैं।

पूर्णगिरि की यात्रा चैत्रके नव रात्रि में विशेष रूप से होती है जब दूर-दूर से हजारों की संख्या में यात्री यहाँ आते हैं। ॐ

बैजनाथ

अल्मोड़ा से ४१ मील उत्तर की ओर स्थित बैजनाथ का स्थान बड़ा ही मनोहर है। यहाँ से कुछ पास ही गरुड़नगर तक मोटर जाती है जहाँ से बैजनाथ के कलावशेष थोड़ी ही दूर रह जाते हैं। मन्दिरों का एक समूह बैजनाथ सरोवर के तट पर है। ये मंदिर शिखर शैली के बने हैं। बैजनाथ के मुख्य मंदर में पार्वती की एक सुन्दर प्रतिमा स्थापित है। पार्वती की मूर्ति के इधर-उधर शिव-पार्वती, लक्ष्मी नारायण गणेश तथा सूर्य आदि की छोटी मूर्तियाँ भी हैं। *

कटारमल

यह स्थान अल्मोड़ा से लगभग नौ मील पश्चिम में स्थित है। अल्मोड़ा से ७ मील दूर कोसी तक मोटर से जा सकते हैं। वहाँ से ऊपर पहाड़ पर चढ़ कर कटारमल तक जा सकते हैं। उत्तराखण्ड का महत्व-पूर्ण सूर्य मंदिर यहीं पर है। प्रधान मंदिर का ऊपरी भाग टूट गया है। इसमें की बड़ी सूर्य मूर्ति ३ फुट ८ इंच ऊंची तथा दो फुट चौड़ी है। सूर्य भगवान कमल के आसन पर बैठे हैं। यह मूर्ति १२ वीं शताब्दी की है और भूरे पत्थर की सुन्दर कलाकृति है। मंदिर के प्रशस्त मंडल में शिव-पार्वती, लक्ष्मीनारायण तथा नृसिंह आदि की भी प्रतिमायें हैं। *

यमुनोत्तरी

यह स्थान समुद्रतल से दस हजार फुट ऊँचाई पर है। यह यमुना का उद्‌गम स्थल है। यात्रियों के लिये यहाँ धर्मशाला है। यहाँ गरम पानी के कई कुन्ड हैं जिनका जल खौलता रहता है। यात्री कपड़े में बाँधकर चावल आलू आदि खाने की चीजें उसमें डुबो देते हैं और वे पक जाती हैं।

बहुत ऊँचाई पर कलिन्दगिरि से हिम पिघलकर कई धाराओं में गिरता है। कलिन्द से निकलने के कारण ही यमुना को कालिन्दी भी कहते है। यहाँ शीत इतना है कि झरनों का पानी बार-बार जमता पिघलता है। ऐसे ठंडे स्थान में गरम पानी के झरने और कुन्ड जिनमें खौलता हुआ पानी ! प्रकृति का अद्‌भुत चमत्कार है। *

गंङ्गोत्तरी

सागरतल से लगभग दस हजार फुट ऊँचाई पर यह स्थान है। यद्यपि गंगा का उद्‌गम स्थल गोमुख यहाँ से १८ मील आगे है पर आगे की यात्रा बहुत कठिन होने से अधिकांश यात्री यहीं गंगा में स्नान करके, गंगा जी का पूजन कर गंगाजल लेकर लौट आते हैं।

यहां ठहरने के लिये कई धर्मशालायें हैं। यात्रियों को यहां सदावर्त भी मिलता है। यहां का मुख्य मंदिर श्री गंगा जीं का मंदिर है। मंदिर में आदि शंकराचार्य द्वारा प्रतिष्ठित गंगा जी की मूर्ति है। मूर्ति तथा उसके छत्र आदि सभी सोने के हैं। मंदिर में राजा भगीरथ, यमुना, सरस्वती तथा शंकराचार्य की मूर्तियां भी हैं।

गंगा जी के मंदिर के पास ही भैरवनाथ मंदिर है। गङ्गोत्री में सूर्यकुन्ड, विष्णुकुन्ड, ब्रह्मकुन्ड आदि तीर्थ हैं। यहीं वह विशाल भगीरथ शिला है, जिस पर कहा जाता है कि राजा भगीरथ ने तप किया था। *

उत्तरकाशी

यह उत्तराखण्ड का महत्वपूर्ण तीर्थ स्थल है। यहां अनेकों प्राचीन मन्दिर हैं, जिनमें विश्वनाथ जी का मन्दिर तथा देवासुर संग्राम के समय हुयी शक्ति (मन्दिर के सामने का त्रिशूल) दर्शनीय हैं। एकादशरुद्र मन्दिर भी अत्यन्त सुन्दर है। गोपेश्वर, परशुराम दत्तात्रेय, भैरव, अन्नपूर्णा आदि के मन्दिर भी दर्शनीय हैं। *

गुप्तकाशी

कहते हैं पूर्वकाल में यहां ऋषियों ने भगवान शँकर की प्राप्ति के लिये तप किया था। राजा वलि के पुत्र बाणासुर की राजधानी शोणितपुर इसके पास ही है। मंदाकिनी के उस पार ऊषीमठ है। कहते हैं कि बाणासुर की पुत्री ऊषा का वहाँ भवन था और वहीं ऊषा की सखी द्वारिका से अनिरुद्ध को ले आयी थी।

गुप्तकाशी में अर्धनारीश्वर की नंदी पर सवार बड़ी सुन्दर मूर्ति है। काशी विश्वनाथ की लिंग मूर्ति भी है। एक कुन्ड में दो धारायें गिरती हैं, जिन्हें गंगा - यमुना कहते हैं। यात्री इसमें स्नान करके गुप्त दान देते हैं।

यहाँ डाक बंगला तथा धर्मशाला है। *

नन्दादेवी

नन्दादेवी पर्वत गौरीशंकर (माउन्टएवरेस्ट) के बाद विश्व का सर्वोच्च शिखर है। इसकी ऊँचाई ७८१७ मीटर है। गढ़वाल जिले में स्थित इस शिखर का धार्मिक महत्व भी कम नहीं है। यहां नन्दादेवी विराजमान हैं। प्रत्येक वारहवें वर्ष भाद्र सुदी सप्तमी को यहाँ तीर्थयात्री आते हैं इस अवसर पर नन्दादेवी की यात्रा में दल के आगे-आगे चार सीगों वाल एक मेढ़ा चलता है जो कहा जाता है कि आगे जाने पर गायब हो जाता है। मार्ग में नन्दिकेश्वरी, पूर्णा, पिलुखेड़ी, बाण, रणद्वार, रूपकुण्ड,

नन्दापीठ आदि तीर्थ भी पड़ते हैं। एवं प्रकार ... पर दो मेले नन्दादेवी की आराधना में कर्क भी लगते हैं। *

पिंडारी ग्लेशियर

अल्मोड़ा के पास लगभग ३९४३ मीटर की ऊँचाई पर अद्भुत सौंदर्य स्थल पिंडारी ग्लेशियर स्थित है। इस मिहनद की छटा देखते ही बनती है। इसके आस-पास के वनक्षेत्र के रंग-बिरंगे फूल, सुन्दर झूमती लतायें एवं सदाबहार वृक्षावली मन को मोह लेती है। *

किन्नर आदिम जाति

● आर० डी० सोनकर

भारतवर्ष के प्राचीन साहित्य में 'किन्नर जाति' का विवरण "गंधर्वों" के साथ मिलता है। प्राचीन साहित्य के अनुसार किन्नर जाति के लोग संगीतकार होते थे। महाकवि कालीदास के 'मेघदूत' में भी किन्नर जाति का विवरण मिलता है, जो इस प्रकार है :- "विरही यक्ष" उड़ते हुए मेघ से अपनी 'यक्षणी' के पास जब संदेश भेजता है तो कहता है कि उसके देश में किन्नर लोग संगीत करते हुए मिलेंगे। आधुनिक तिब्बत प्रदेश को यक्षों का देश कहा जाता था जहां पर कभी पौराणिक ग्रंथों के अनुसार धन का राजा 'कुबेर' राज करता था। किन्नौर जिला, जहां किन्नर जाति पाई जाती है तिब्बत की सीमा से मिलता है और इस जिले की प्रमुख हिम-चोटी को "किन्नर-कैलाश" कहा जाता है। अत: सिद्ध होता है कि हिमांचल प्रदेश के किन्नौर जिले के किन्नर लोगों को ही प्राचीन साहित्य में 'किन्नर' कहा जाता था।

संस्कृत भाषा में 'किन्नर' शब्द का अर्थ होता है—किं + नर ? अर्थात् यह नर है या नारी ? वास्तव में किन्नर जाति के नर-नारी बड़े सुन्दर और गौरवर्ण पाये जाते हैं तथा दोनों की वेशभूषा प्राय: एक ही रहती है। किन्नर नर और नारियां रंगीन-सुन्दर टोपी पहनते हैं, कान के ऊपर और टोपी के ऊपर फूल सजाते हैं और गले में फूल-माला पहनते हैं। सरस्वती की कृपा से इन लोगों को मधुर कंठ भी मिला हुआ है। इस प्रकार दूर से किन्नर नर और नारी एक समान दिखाई देते हैं। यह जनजाति भारतवर्ष में केवल किन्नौर जिले में पाई जाती है जिसकी जनसंख्या की १९६१ ई० जनगणना के अनुसार ४० हजार के लगभग बताई

जाती है। इस जनजाति की उत्पत्ति भारतीय बताते हैं। यहां के नर-नारी औसत कद के होते हैं। सुन्दर गौर-वर्ण सभी को मिला हुआ है। आर्यों की तरह इन लोगों की नाक सुन्दर, उठी हुई और तीखी होती है। नारियों के नेत्र विशाल और कृष्ण-वर्ण होते हैं। किन्नर बालिकायें और नारियां कशमीरी युवतियों की तरह बड़ी आकर्षक और सुन्दर होती हैं। शीत जलवायु होने के कारण यहां के लोगों में विशेषकर बालिकाओं में और नारियों के मुखों में गुलाबी रंग देखने को मिलता है जो स्वास्थ्य और सुन्दरता का प्रतीक है।

अपनी हिमाचल प्रदेश की यात्रा में मैंने किन्नौर जानेका कार्य-क्रम बनाया। शिमला में एक दिन रहने के बाद अगले दिन जीप से मैं किन्नौर जिले के लिए चल पड़ा। शिमला से कालपा (किन्नौर) १५० मील है और पूरा रास्ता पहाड़ी है। सड़क पक्की है और अधिकांश रास्ता सतलज के किनारे-किनारे है जिसके कारण रास्ते की थकावट अधिक नहीं मालूम होती। यह सड़क १९६२ ई० मे चीनी आक्रमण के बाद बनाई गई। उसके पहले किन्नौर पैदल रास्ते द्वारा ही जाया जा सकता था। सड़क के बनाने में बहुत ही कठिनाईयों का सामना करना पड़ा होगा क्योंकि अनेक स्थानों पर विशाल पत्थर की चट्टानों को काट कर रास्ता बनाया गया। कहीं-कहीं पर ऐसा लगता है कि पत्थरों की महराब के नीचे में सड़क निकाली गई है। बताते हैं कि इस सड़क के बनाने में सैकड़ों व्यक्तियों की जानें चली गईं। पथरीले पहाड़ों पर सड़क बनाने में बहुत दूर से पेड़ों पर रस्सी बांधकर श्रमिकों को काम करना होता था और रस्सियों से लटक कर बहुत थोड़े पत्थर सुबह से शाम तक ये लोग तोड़ पाते थे। आरम्भ में गोरखा श्रमिकों ने इस सड़क पर काम किया और इसके बनाने में सैकड़ों गोरखा श्रमिकों ने अपने प्राण भी दिये। इस त्याग हेतु हमें गोरखा श्रमिकों का ऋणी होना चाहिये।

रास्ते में रामपुर बुशहर कस्बा है जो शिमला और कालपा के मध्य मे स्थित है। कुछ वर्ष पहले किन्नौर क्षेत्र बुशहर राजा के आधीन था और जागीरदारों द्वारा यह राजा किन्नौर में शासन करता था। सतलज नदी पूरे रास्ते भर सड़क के नीचे-नीचे बहती हैं और उसकी जल-धारा कहीं-कहीं पर सड़क से सैकड़ों गज नीचे दिखाई देती है। नदी का जल

बड़ा स्वच्छ और नीला है। बड़ी-बड़ी चट्टानों को काटकर नदी अपने बहाव को ले जाती है जो देखने योग्य है। ऐसा लगता है कि पत्थरों की विशाल चट्-टानों को किसीने छैनी और हथौड़े द्वारा काटा हो। यहां पर सतलज पहाड़ी नदी होने के कारण बड़े वेग के साथ बहती हैं और उसकी कल-कल की ध्वनि बड़ी कर्णप्रिय लगती है। दिन भर चलने के बाद शाम को हम किन्नौर जिले के मुख्यालय कालपा में पहुंचे जो समुद्र तल से ९००० फिट की उंचाई पर स्थित है। यह सतलज नदी के ऊपर बसा हुआ है जिसके दूसरी ओर किन्नर-कैलाश की शुभ्र—धवल हिम चोटी दूर तक फैली दृष्टिगोचर होती है। यह स्थान वैसे ही काफी ठंडा रहता है किन्तु उस शाम को किन्नर-कैलाश की दिशा से शीतल-मंद-सुगन्ध वायु आ रही थी जिससे वातावरण बड़ा सुहा-वना था। किन्तु कमरे के बाहर अधिक देर तक सर्दी में खड़ा नहीं रहा जा सकता था। कालपा में वन-विभाग का बड़ा अच्छा बँगला है जहां पर मैंने दो दिन विश्राम किया। रात में कमरे को आग जलाकर गर्म करना पड़ा था। संयोगवश चांदनी-रात थी
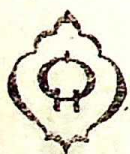
और प्राकृतिक प्रकाश में किन्नर-कैलाश हिम-चोटी बहुत ही मनोरम दिखाई देती थी। रात को मैं सोने से दो-एक बार जब उठा तब खिड़की खोलकर मैं किन्नर-कैलाश की अनुपम छटा को थोड़ी देर तक एक टक देखता रहा। उसके देखने से जो नैसर्गिक सुख की अनुभूति हो रही थी उसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

अगले दिन प्रात: उठकर सर्वप्रथम मैंने किन्नर-कैलाश के दर्शन किये। सूर्य की किरणें उस हिम-चोटी पर आनी प्रारम्भ हो गयीं थी और वह हिम-चोटी धीरे-धीरे धवल वर्ण से सुनहले रंग में परिणत हो रहीं थी। पूरी हिम-चोटी की ओर देखने से ऐसा लगता था कि चोटी का कुछ भाग चमकदार चांदी द्वारा निर्मित है और कुछ भाग, जहां पर सूर्य की किरणें पड़ रहीं थीं वह सोने द्वारा निर्मित है। इतनी उंचाई पर बहुत कम पक्षी पाये जाते हैं किन्तु फिर भी कुछ पक्षियों का मधुर-कलरव भी सुनाई पड़ रहा था। चरवाहे अपने पशुओं को चरागाहों की ओर ले जा रहे थे। यहाँ के मुख्य पशु भेड़ बकरी गाय और याक हैं याक पशु तिब्बत में बहुतायत से पाया जाता है। अतएव तिब्बत के निकट होने के कारण यहाँ भी इस पशु को यहां के निवासी बहुत दिनों से पालते आये हैं। याक और गाय के मेल से एक नयी नस्ल तैयार की गयी है जो देखने में याक और गाय का मिश्रित रूप दिखाई देता है। बताया जाता है कि खेती के काम के लिये यह मिश्रित नस्ल बड़ी उपयोगी पाई गई है। पूरे दिन यहां के पशु जंगलों में रहते हैं। यहां तक कि इनका दूध भी घर से बाहर चारागाहों में दुहा जाता है। यहाँ के निवासी दूध दूहने के लिए भेढ़ या बकरी के चमड़े का बर्तन रखते हैं जिसमें अपने पशुओं का दूध दुहकर वहीं चट्टानों के नीचे दबा देते हैं और उसे अपने घर में नहीं लाते। यह जानकर आश्चर्य हुआ कि यहां के निवासी न तो दूध को खाने में प्रयोग करते हैं और नहीं उसे घर में लाते हैं। यहां सर्दी पड़ने के कारण चट्टानों के नीचे रखा हुआ दूध कइ दिनो तक खराब नहीं होता। दो - चार दिनों के बाद उस दूध को निकाल कर उससे मक्खन निकाल लिया जाता है। मक्खन निकालने की प्रक्रिया बड़ी आसान है। चमड़े के बर्तन, जिसके अन्दर दूध रहता है, को खूब हिलाते हैं और इस प्रकार मक्खन ऊपर की सतह पर आ जाता है। मक्खन निकालने के बाद जो मठ्ठा बचता

है उसे ये लोग या तो स्वयं पी जाते हैं या अपने कुत्तों और अन्य पशुओं को पिला देते हैं।

यहाँ जो बाहरी लोग रहते हैं उन्हें ताजा दूध बिल्कुल प्राप्त नहीं होता। अतएव वे लोग चूर्ण-दुग्ध या संघनित दूध की चाय पीते हैं। किन्नर लोग जो चाय पीते हैं उसमें दूध का प्रयोग बिल्कुल नहीं होता। उनकी चाय एक विशेष प्रकार की होती है जिसमें हरी चाय की पत्ती, अखरोट, नमक ओर मक्खन या घी का प्रयोग होता है। इस चाय का बर्तन भी एक विशेष प्रकार का होता है जो लकड़ी का एक लम्बा खोखला बेलन होता है जिसके अन्दर यह सभी सामग्री गर्म पानी के साथ डाली जाती है और एक लकड़ी की मूसली से उसे कूटा जाता है। चाय पीने के लिए उनके बर्तन पीतल के होते हैं जिनकी आकृति छिछली कटोरी की भाँति होती है। इस चाय को ये लोग 'थंग' कहते हैं और काफी मात्रा में इसे पिया जाता है। थकावट के बाद यह चाय बड़ी ताजगी औरफुर्ती लाती है और मक्खन तथा अखरोट के होने के कारण स्वास्थ्य के लिए यह थंग बड़ी पोषक भी होती है। भोटिया लोग भी इसी प्रकार की चाय बनाकर पीते हैं जिसे वे 'जा' कहते है।

किन्नर जनजाति मांसाहारी होती है जैसा कि अधिकांश आदिम जातियां होती हैं। वास्तव में इतने ठंडे क्षेत्र में रहने वाले लोगों को मांसाहारी होना आवश्यक भी होता है। अधिकतर ये लोग भेड़ और बकरे का मांस खाते हैं और इस मांस को सुखाकर भविष्य के लिए रख भी लेते हैं। काफी सर्दी पड़ने के कारण इस प्रकार का मांस दूषित नहीं होता। मांस के अतिरिक्त मौसम की जो सब्जियां होती हैं जैसे गोभी, करम-कल्ला आदि—उन्हें भी सुखाकर रख लिया जाता है। यहां के स्थानीय फल—सेब नासपाती आदि होते हैं उन्हें ये लोग काटकर सुखा लेते हैं और जब उनका मौसम नहीं रहता तब उन्हें प्रयोग में लाते हैं। इस क्षेत्र में जौ की खेती काफी होती है और उसका सत्तू यहां के लोग बड़े स्वाद से खाते हैं। अब कृषि-विभाग ने गेहूं का प्रचार काफी किया है अतएव यहां के किसान जौ के स्थान पर गेहूं भी पैदा करने लगे हैं। इसके अतिरिक्त मक्का व राजमा अदि भी यहां के लोग उगाते हैं और उनका प्रयोग नित्य-प्रति के भोजन में किया जाता है। यहां के निवासी मद्यपान भी करते हैं और ये लोग अपने घर

में ही इसे बनाते हैं। २५ रुपये में शराब बनाने का इन्हें लाइसेंस मिल जाता है और उससे ये कितनी भी मात्रा में शराब बना सकते हैं। यहाँ सेव, नासपाती, अंजीर और अंगूर आदि फल पैदा होते हैं जिनका प्रयोग यहाँ के लोग शराब के बनाने में भी करते हैं। जो फल खट्टे और खाने योग्य नहीं रहते या जो जंगली सेव होते हैं उन फलों को सड़ा कर ये लोग शराब बनाते हैं। मद्यपान यहां के सभी पुरुष करते हैं किन्तु स्त्रियां बिल्कुल मद्यपान नहीं करतीं। मेलों और त्योहारों के अवसर पर ये लोग अधिक मद्यपान करते हैं और नशे में आकर खूब नाचते-गाते हैं।

दिन में मुझे 'चीनी' और 'दूनी' गांव देखने का अवसर मिला। कुछ घरों के अन्दर जाकर मुझे इन लोगों का रहन सहन देखने का अवसर मिला। इन लोगों का जीवन बड़ा सादा है। लकड़ी के मकान होते हैं जो बड़े मजबूत होते हैं। अधिकतर मकान देवदार की लकड़ी के होते हैं। कुछ मकान पूरे लकड़ी के बने हैं तथा कुछ लकड़ीं और पत्थर को मिला कर बनाये गये हैं। मकानों के दो भाग होते हैं। नीचे वाले भाग में पशुओं को रखा जाता है और उसी में उनका चारा व लकड़ी आदि भरी होती है। ऊपर के भाग में ये लोग स्वयं रहते हैं। सर्दी अधिक पड़ने के कारण मकान में खिड़की और रोशनदान बहुत कम देखने को मिलते हैं। यहाँ तक कि धुंआ निकलने के लिए भी ये लोग चिमनी तक नही बनाते और फलस्वरूप जब घर में आग जलती है तो सारा घर धुएें से भर जाता है। खिड़की-रोशनदान न होने के कारण घर में रोशनी बहुत कम रहती है। घर के अन्दर चारपाई प्राय: नहीं होती और ये लोग फर्श पर ही अपना बिस्तर लगाते हैं।

ठन्डे-प्रदेश के निवासी होने के कारण ऊनी कपड़े का प्रयोग वहाँ के लोगों को पूरे वर्ष करना होता है। पुरुष और बच्चे कोट, कमीज, पाजामा पैन्ट-धोती और जूते का प्रयोग करते हैं। स्त्रियाँ और बालिकायें कमीज ब्लाउज, घांघरा, शाल और जूतों का प्रयोग करती हैं। टोपियों का प्रयोग स्त्री और पुरुष दोनों यहां करते हैं। और इनकी टोपी बड़ी रंग बिरंगी तथा सुन्दर होती है जो ऊन और शनील की पट्टियों द्वारा बनी होती है। टोपी गोल होती है और उसकी आकृति कुछ-कुछ लामाओं की टोपी से मिलती है। टोपी के ऊपर यहां

के नर-नारी फूल लगाते हैं तथा कानों पर भी फूल लगाने का इन लोगों में बड़ा शौक है। स्त्रियाँ आभूषणों की बड़ी शौकीन होती हैं और चांदी के बहुत से सुन्दर-सुन्दर आभूषण यहां प्रचलित है। बालों के ऊपर कान, गर्दन, बाजू, कलाई, पैर और अंगुलियों में चांदी के जेवर बहुत पहने जाते हैं; जो बड़ी बारीकी और सुन्दरता से बने होते हैं। सम्पन्न घरों की स्त्रियाँ सोने के आभूषण भी पहनती हैं। मेले और त्योहारों के अवसर पर किन्नर स्त्रियाँ और बालिकायें अपने सभी आभूषण पहनती हैं।

यहाँ के निवासी हिन्दी भाषा अच्छी तरह समझते और बोलते हैं गोकि इनकी अपनी स्थानीय बोली भी है जिसे ये लोग आपस में बोलते हैं। अपनी बोली में इनके लोक-गीत भी हैं जिन्हें ये लोग समूह के साथ गाते हैं, जो सुनने में कानों को बड़े अच्छे लगते हैं। तिब्बत के समीप होने के कारण ६०./· किन्नर जनजाति बौद्ध-धर्म को मानती है। किन्नौर जिले का उत्तरी भाग, जो तिब्बत से मिला हुआ है और ऊंची पहाड़ियों पर स्थित है, के निवासी अधिकतर बौद्ध धर्मावलम्बी हैं। शेष जाति या तो हिन्दू धर्म को मानती है या हिन्दू और बौद्ध दोनों धर्मों के देवताओं को पूजती हैं। किन्नरों में ब्राह्मण जाति नहीं होती अतएव पुरोहित का काम लामा करते हैं जो बौद्ध मंदिरों के पुजारी होते हैं। दूनी गांव का बौद्ध मंदिर मैंने देखा जो प्राचीन दिखाई देता था पूरा मंदिर लकड़ी का बना हुआ है। मंदिर के बाहर के भाग में रंगीन कपड़े पर बुद्ध-कथा के अनेक चित्र अंकित किये गये हैं और एक बहुत बड़ा ढोल भी रखा हुआ है। मंदिर के अन्दर भगवान बुद्ध की बहुत बड़ी मूर्ति देखने को मिली जो मिट्टी की बनी हुई सजीव और ओजपूर्ण प्रतिमा उस मंदिर में स्थापित है। पूछने से पता चला कि उसे बनाने के लिए तिब्बत से शिल्पकार आये थे। मंदिर के अन्दर दिवालों पर भगवान बुद्ध की अनेक जातककथायें बड़े सुन्दर ढंग से चित्रित की गई हैं। यह सब देखकर मुझसे उन चित्रकारों और कलाकारों की प्रसंशा किये बिना न रहा गया जिन्होंने भगवान बुद्ध का इतना सुन्दर मंदिर इस छोटे से गांव के अन्दर बनवाया है।

चीनी गाँव में नारायण मन्दिर देखने को मिला, जिसमे हिन्दू देवता की मूर्ति स्थापित है। इस मन्दिर

का ढांचा काफी बड़ा है और लकड़ी तथा पत्थर द्वारा इस विशाल मन्दिर को निर्मित किया गया है। प्रत्येक गांव में कोई न कोई मन्दिर यहाँ पाया जाता है क्योंकि ये लोग धर्म में अपना अटूट विश्वास रखते हैं और अपने देवता से बहुत डरते हैं। पास के कोठी गांव में भगवती देवी का बहुत पुराना मंदिर पाडंवों के समय का बताया जाता है। इसी प्रकार इसी जिले के 'मोरंग' स्थान पर पाडंवों के किले के कुछ अवशेष बताये जाते हैं। कोठी मंदिर की भगवती देवी के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ क्योंकि जिस दिन मैं वहां ठहरा हुआ था, उसी दिन दूनी गाांव में दशहरा का मेला था। कोठी मंदिर से भगवती देवी की सवारी विधिवत लायी गई थी और दूनी गांव के मंदिर में उसे सम्मानपूर्वक रखा गया था। देवी के सामने किन्नर नर-नारी सामूहिक रूप से वृत्ताकार घेरे बनाकर नाच रहे थे। दशहरे के अवसर पर किन्नर जन-जाति बड़ा त्यौहार मनाती है और इस महीने इन लोगों के पूजा-पाठ तथा मेले आदि चलते रहते हैं जिनमें लोग खूब नाचते-गाते हैं तथा आमोद-प्रमोद में मस्त रहते हैं। भगवती देवी को लकड़ी के ढांचे के ऊपर रखा गया था। देवी का ऊपरी भाग सोने के पत्रों द्वारा जड़ित था तथा निचला भाग चांदी के पत्रों द्वारा जटित था। देवी बहुत प्राचीन बताई जाती थी और उसके देखने से यह अनुमान लगता था कि देवी की स्थापना में एक बड़ी धन-राशि खर्च की गई होगी। देवी के सामने किन्नर युवक और युवतियां हाथ में हाथ मिलाकर गोलाकार घेरों में नाच रहे थे। युवक और युवतियां दोनों अपनी रंगीन टोपियां लगाये थे, जिनके ऊपर मौसमी फूल लगाये थे। कानों में भी फूल थे तथा गले में फूल मालायें पड़ी हुई थीं। जो घुमारी नाच का अगुवा था उसके सर पर फूल और पत्तों की टोपी सजी थी और वह साथ में तलवार या फर्से लिये नाच रहा था। किन्नर युवतियां काले घांघरे के ऊपर सफेद शाल डाले बड़ी आकर्षक लग रही थीं। रंगीन पुष्प-माला और टोपों के बीच उनके गोरे और सुन्दर मुखड़े बहुत ही मनमोहक दिखते थे। युवतियां अपने मधुर कंठ से भगवती देवी की स्तुति में गीत गा रही थीं और पुरुष नशे में मस्त झूमते हुए नाच रहे थे। थड़ी-थोड़ी देर के बाद इन लोगों को चुल्लू में मद्यापान भी कराया जाता था जिससे कि ये जोश

(शेष पृष्ठ ६४ पर)

यह धरती वरदानी है

* रवीन्द्र कुमार रायजादा

सब धर्मों की सब वर्णों की भारत मां कल्याणी है।
वसुधा भर कुटुम्ब है अपना गुंजित इसकी वाणी है।

नित्य भूमि है यह आस्था की, खुला सदा है इसका द्वार,
धर्म-विवेक-बुद्धि-करुणा का सदा किया इसने सत्कार।
मानवता औ' विश्व बन्धु की सतत चेतना का गुंजार,
इसकी गोदी में पलता है मां का ममता भरा दुलार।
सब प्राणों की यह धरती है सब वैभव की दानी है।

चेतनभूमि विकासी है यह, बसा सदा इसमें विश्वास,
विस्तृत-वक्ष धरा है अपनी, विस्तृत इसका है आकाश ;
करुणा की बाहों में पलता मानवता का शाश्वत हास,
मन का क्षितिज सतत विस्तृत है सदा प्राण का यहां प्रकाश,
नहीं संकुचित, नहीं पराश्रित इस धरती के प्राणी हैं।

भिन्न प्रदेशों में विस्तृत है भारत मां का गौरव गान,
भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में पलता विविध जातियों का अभिमान;
पर इन सबमें बसा हुआ है एक धरा-नभ का वरदान;
मां है एक हमारी, हम सब हैं भारत मां की सन्तान
प्रभुता के वैभव की दात्री यह धरती वरदानी है।

(पृष्ठ ६५ का शेष)

थककर नाचना न बन्द कर दें। जो किन्नर दर्शक गण थे वह भी अपनी वेशभूषा सज-बज कर आये थे विशेषकर बालिकायें और स्त्रियां सोने ओर चांदी के आभूषणों को पहनकर आयीं थीं तथा अपने शरीर और टोपियों में फूलों को सजा कर खड़ीं थी जो नर्तकियों के साथ उस अवसर की शोभा बढ़ा रही थीं। कोई-कोई नर्तक अधिक नशे में आकर अपनी नर्तक टोली से अलग हो जाता था और झगड़ा भी करने लगता था। उस समय उसके घर के पुरुष और स्त्रियां आकर उसे संभालते थे और जब वह काबू के बाहर हो जाता था तो उसे देवी के सामने से दूर हटा दिया जाता था। गाने के साथ-साथ कुछ लोग ढोल ढफ्ले, झांझ और बड़े बिगुल बजा रहे थे। नाचने और गाने के साथ इस प्रकार की देवी पूजा दशहरे के अवसर पर कई दिन तक इन लोगों में चलती रहती है। आधी रात तक ये लोग देवी के सामने नाचे और उसके बाद भगवती देवी की सवारी चीनी गांव के नारायण मंदिर में ले गये जहाँ आधी रात के बाद प्रात: काल तक इन लोगों का नाच-गाना चलता रहा।

पूरे किन्नौर क्षेत्र में दशहरा के अवसर पर भगवती देवी या स्थानीय देवता की पूजा की जाती है। इस जिले के एक क्षेत्र में कंस की भी पूजा होती है जिसका अर्थ यह होता है कि उस क्षेत्र में कंस के अनुयायी कभी रहे होंगे जिस प्रकार उत्तरकाशी (उ.प्र.) जिले की एक पट्टी में दुर्योधन की पूजा की जाती है और दुर्योधन के मन्दिर वहाँ के गावों में पाये जाते हैं।

किन्नर जनजाति में अधिकतर प्रेम विवाह होते हैं। मेले और त्योंहारों में प्रेमी अपनी प्रेमिका से मिलता है और वहां से ही प्रेमी अपनी प्रेमिका को भगाकर घर ले जाता है। उसके पश्चात् लड़के का पिता कुछ रुपया और शराब की बोतल एक व्यक्ति के हाथ भेजता है। यदि लड़की का पिता राजी हो जाता है तो वह लड़के वालों के यहां आता है और उसका अच्छी तरह आदर-सत्कार किया जाता है। कुछ मामलों में लड़की का बाप लड़के वालों को पता देता है कि उसकी लड़की अमुक समय में अमुक स्थान पर रहेगी जहां से लड़का उसे भगाकर ले जा सकता है। निश्चित समय और स्थान पर लड़का पहुंचता है

और लड़की को घसीटकर अपने घर ले जाता है। यदि लड़की राजी हो जाती है तो कोई बात नहीं। लड़की के न राजी होने पर लड़की का पिता तथा अन्य निकट सम्बन्धी आते हैं जो लड़की को फुसलाकर राजी करते हैं। यदि लड़की फिर भी राजी नहीं हुई तो उसे वापस लड़की का पिता अपने घर ले जाता है।

जब से किन्नरों में कुछ शिक्षा प्रसार हुआ है या जो लोग शिक्षित होकर बाहर आने-जाने लगे हैं तब से शिक्षित परिवारों में मध्यस्थ द्वारा भी विवाह तय होने लगे हैं। विवाह का विधिवत समारोह इनके यहां वर्षों के बाद किया जाता है। बिला विवाह-संस्कार के लड़की और लड़का वर्षों तक पत्नी और पति के रूप में रहते हैं तथा उनकी संतान भी उत्पन्न होती है। संतान उत्पन्न होने के बाद भी यदि लड़की रहने को राजी नहीं होती तो वह अपने पिता के घर वापस चली जाती है और उसका विवाह अन्यत्र कहीं हो जाता है। इस प्रकार यहां स्त्रियों को काफी स्वतंत्रता मिली हुई है। विवाह का संस्कार यहां के लामाओं द्वारा कराया जाता है।

किन्नर समाज में बहुपतित्व प्रथा प्रचलित है। एक स्त्री के कई पति होते हैं और यही कारण है कि इस जनजाति की जनसंख्या अधिक नहीं बढ़ सकी है। सांगला आदि अनेक गांवों में अविवाहित नारियों की संख्या सैकड़ों बताई जाती है। यहां का प्रथा के अनुसार जो बड़ा भाई होता है उसी का विवाह किया जाता है और बड़े भाई की पत्नी सभी भाईयों की सहपत्नी होती है। कुछ भी हो यहांकी नारियों के ऊपर बहुत बड़ा उत्तरदायित्व रहता है और उसके लिए अपने सभी पतियों को खुश करना सदैव एक महान समस्या रहती है। इसके साथ-साथ उस बेचारी को पूरे घर और बाहर का काम करना पड़ता है। यहां यह बताना आवश्यक होगा कि पहाड़ की स्त्रियां घर और खेत दोनों स्थानों का काम देखती हैं और दिन-रात उन्हें बड़ा परिश्रम करना पड़ता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि किन्नरों की सभ्यता और संस्कृति बहुत ही प्राचीन तथा स्वतंत्रता-पूर्ण है। नर और नारी दोनों को यौन-विषयों पर समान अधिकार मिला हुआ है। ये लोग आमोद-प्रमोद प्रिय है और अपने अतिथि का बड़ा सत्कार करते हैं। जो कुछ ये लोग कमाते है उसे

खा-पीकर मौज मनाते हैं।

यहां के निवासी अधिकतर कृषि द्वारा अपनी जीविका चलाते है पूरा जिला पहाड़ी है जहां खेत सीढ़ी नुमा होते हैं। इस जिले में वर्षा भी ८-१० इंच वार्षिक से अधिक नहीं होती। अतएव जहां पर सिंचाई की व्यवस्था है, केवल वहीं पर अच्छी खेती हो सकती है। अधिकतर भूमि किन्नर राजपूतों के पास हैं जो रामपुर बुशहर के राजा के समय से उस जमीन के मालिक चले आ रहे हैं। जो किन्नर हरिजन (अस्पृश्य) हैं उनके पास आरम्भ से खेती बहुत कम है। ये लोग राजपूतों के खेतों में काम करके अपना पेट पालते रहे हैं। जब से भूमि-सुधार-योजना लागू हुई है तब से कुछ भूमि किन्नर हरि-जनों को भी मिली है किन्तु अभी भी इन लोगों के पास बहुत कम खेती है।

कालपा में हिमांचल प्रदेश सर-कार द्वारा एक बड़ा अच्छा कृषि अनुसंधान केन्द्र चलाया जा रहा है जिसमें आलू, गोभी, गेहूं आदि के अच्छे बीज तैयार किये हैं ओर उन्हें किन्नौर के किसानों में प्रचलित भी किया है। हिमांचल प्रदेश सरकार ने आलू और सेव की खेती में बड़ी उन्नति की है जिससे वहां के किसानों की आर्थिक दशा पहले से बहुत अधिक अच्छी हो गई है। उद्योग विभाग द्वारा दूनी गांव में एक औद्योगिक-प्रशिक्षण संस्थान भी चलाया जा रहा है जिसमें राजगीरी, बढ़ईगीरी; सिलाई और कढ़ाई आदि काम भी सिखाया जाता है। मुझे इस संस्थान को भी देखने का अव-सर प्राप्त हुआ जहाँ पर मैंने किन्नर बालक और बालिकाओं दोनों को प्रशिक्षण प्राप्त करते हुए पाया। यह जनकर मुझे आश्चर्य और निराशा भी हुई कि संस्थान में छात्रों के लिए छात्रावास व्यवस्था है किन्तु छात्राओं के लिए नही। लगभग एक दजन बालिकायें बड़ी दूर से आकर इस संस्थान में सिलाई कढ़ाई आदि का प्रशिक्षण प्राप्त कर रही हैं और वे किराये का मकान लेकर रहती हैं। चूंकि किन्नर-समाज में नारियों को काफी स्वतंत्रता है तथा किन्नर बालिकाओं और नारियों में आत्म-विश्वास की भावना इतनी प्रबल है कि वे अपने गांव से अकेले आकर ऐसे विषम वातावरण में भी अपनी शिक्षा ग्रहण करती हैं। वास्तव में ये साहसी किन्नर बालिकायें बड़ी प्रशंसा की पात्र हैं। सरकार को ऐसे स्थानों पर पहले छात्राओं के छात्रावास बनाने चाहिए और बाद में छात्रों के छात्रावास।

हिमाचल प्रदेश सरकार ने इस जिले में बहुत सी पाठशालायें और विद्यालय खोले हैं किन्तु अभी भी किन्नर जनजाति में साक्षरता कम है।

जब से किन्नर जिला अलग से बना है तब से यहां के निवासियों में बड़ी राजनीतिक जागृति आयी है। इस जागृति के साथ-साथ इन लोगों में सामाजिक और आर्थिक जागृति भी जाग उठी है और सरकारी सुविधाओं की सहायता से किन्नर जनजाति प्रयत्न कर रही है कि उसकी आर्थिक दशा में पर्याप्त परिवर्तन हों। किन्तु राजनैतिक चेतना आने से इनकी धार्मिक अस्था में कोई कमी नहीं हुयी। यहाँ के लोगों द्वारा मुझे पता चला कि पिछले आम चुनाव में कोठी की भगवती देवी के कहने पर इन लोगों ने अपने मत दिये। उन्होंने बड़ी दिलचस्प बात बताई कि मत डालने से पहले दोनों उम्मीदवारों
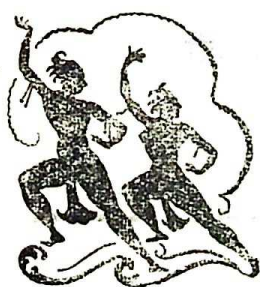
को देवता के सम्मुख खड़ा किया गया। देवता को पुजारी ने थोड़ी देर तक हिलाया और हिलाने के बाद देवता का मुख जिस उम्मीदवार की ओर रुक गया उसी को वहां के निवासियों ने यह कह कर मत दिये कि यह देवता का आदेश है और अन्त में वही उम्मीवार विजयी भी हुआ।

भारत की यह प्राचीन और सुन्दर जनजाति अपने प्राचीन धर्म और सुन्दर संस्कृति को क्या भविष्य में भी इसी प्रकार जीवित रख सकेगी ?

●

महत्ता इसमें नहीं है कि कभी न गिरे, बल्कि इसमें है कि गिरकर निरन्तर चढ़ता जाये।

स्वर्गद्वार: हरिद्वार

स्वर्गद्वारेण तत्तुल्यम्
गंगाद्वारम् न संशय:

वस्तुत: इसमें कोई संदेह नहीं है कि हरिद्वार स्वर्ग के द्वार के समान है। हिमालय के अनेक पावन तीर्थों एवं तपोभूमि का आरम्भ यहाँ से होता है। पतित पावनी भागीरथी यहाँ से ही समतल भूमि में गंगा के नाम से प्रवेश करती है।

पौराणिक दृष्टि से हरिद्वार का धार्मिक महत्व तो है ही अर्वाचीन भौतिक दृष्टि से भी हरिद्वार का महत्व कम नही है। हिमालय की लम्बी चौड़ी श्रंखला को गंगा के विस्तृत मैदान से जोड़ने का जितना महत्वपूर्ण स्थल यह है उतना दूसरा नहीं।

सदियों से यह स्थान पर्यटकों तथा हिन्दू भक्तों के लिये आकर्षण केन्द्र रहा है। यहाँ के प्रसिद्ध हर की पैड़ी घाट पर गंगा स्नान का एक ओर बहुत बड़ा धार्मिक महात्म है तो दूसरी ओर गंगा के तट पर बैठ कर सैलानियों के मनोरंजन का अच्छा स्थल भी है। कहते हैं राजा भर्तृहरि की स्मृति में राजा विक्रमादित्य ने ये पैड़ियाँ (सीढ़ियाँ) तथा उसके पास का कुँड, जिसे ब्रह्मकुण्ड कहते है, बनवाया था। इस कुण्ड में एक ओर से गंगा की धारा आती है और दूसरी ओर से निकल जाती है। हरिद्वार का यह प्रमुख तीर्थ है। सायं काल के समय यहाँ गंगा की आरती की शोभा बड़ी सुन्दर होती है। प्रत्येक बारहवें वर्ष यहां कुम्भ का मेला लगता है और उस समय लाखों साधू तथा सामान्य जन हरि की पैंड़ी पर स्नान करते हैं।

हरि की पैड़ी से मिला हुआ ही यहाँ का प्रसिद्ध बाजार है जिसमें प्रसाद से लेकर जनोपयोगी सभी सामग्रियाँ मिल जाती हैं। निकट ही कई होटल तथा धर्मशालायें हैं। जिनमें से प्रमुख धर्मशालायें निम्न हैं:-

(१) पचायती धर्मशाला, स्टेशन के पास (२) रायबहादुर सेठ सूरज मल झुनझुनुवाला की, ऊपर बाजार (३) खुशीराम राम गोपाल की, स्टेशन रोड (४) लखनऊ वालों की, अग्रवाल धर्मशाला, स्टेशन रोड (५) महाराज कपूरथला की (६) विनायक मिश्र की (७) नृसिंह भवन, हैदराबाद वाले की रामघाट (८) देवी दयाल सुखदयाल अमृतसर वालों

की (९) सिन्धी धर्मशाला (१०) जैराम दास भिवानी वाले की (११) करोड़ीमल की (१२) सूरज मल की कनखल।

हरिद्वार के अन्य तीर्थ तथा दर्शनीय स्थान

गऊ घाट

हरि की पैड़ी से दक्षिण की ओर यह घाट है। हिन्दू भक्तों का विश्वास है कि यहाँ पर स्नान करने से गौ हत्या दूर होती है। पहले यहाँ भंगी हत्यारे को जूते से मारता है फिर स्नान कराता है।

कुशावर्त घाट

गऊघाट से दक्षिण की ओर यह घाट है। कहते हैं दत्तात्रेय ने दस हजार वर्ष तक एक पैर से खड़े होकर पर यहाँ तपस्या की थी। उनके कुश, चीर कमण्डल और दण्ड गंगा की एक प्रबल धार में बह गये किन्तु उनके तप के प्रभाव से वे चीजें भँवर की भांति चक्कर काटती रहीं। समाधि खुलने पर जब उन्होंने उन वस्तुओं को जल में घूमते देखा तो वे गंगा को भस्म करने के लिये उद्यत हुये तो ब्रम्हादि सभी देवताओं ने उनकी स्तुति की। ऋषि ने प्रसन्न होकर कहा गंगा ने मेरे कुश आदि को आवर्ताकार घुमाया है इसलिये अब से इसका नाम कुशावर्त होगा। यहाँ पितरों को पिन्ड दान देने से उनका पुनर्जन्म न होगा। मेष की संक्रान्ति पर यहाँ पिण्ड दान की बड़ी भीड़ होती है।

नील धारा

नहर के उस पार नील पर्वत के नीचे वाली गंगा की धारा को नील धारा कहते है जो गंगा की प्रधान धारा है। हरिद्वार के घाटों पर बहने वाली धारा नहर के लिये लाई गई धारा है।

चन्डी देवी

नील पर्वत के शिखर पर चण्डी देवी का प्रसिद्ध मन्दिर है। चण्डी देवी की चढ़ाई कुछ कड़ी है यह चढ़ाई करीब दो मील की है जिसपर पैदल ही जाना पड़ता है यहाँ जाने के लिये दो मार्ग हैं। पहला गौरी शंकर मंदिर के पास से होकर तथा दूसरा कामराज की काली मन्दिर के पास से। दूसरा मार्ग ही सुगम है। पर लोगों को चाहिये कि पहले से चढ़ें और दूसरे से उतरें। मन्दिर में रात को पंडे पुजारी कोई भी नहीं रहते। नील पर्वत के दूसरी ओर कदलीवन है

जिसमें सिंह, हाथी आदि जंगली जीव रहते हैं।

भीम गोड़ा

हरि की पैड़ी से ऋषिकेष जाने वाले मार्ग पर यह मन्दिर है। मंदिर के आगे एक चबूतरा तथा कुन्ड हैं। कुन्ड में पहाड़ी सोते का पानी आता है कहा जाता है कि भीम सेनने यहाँ तपस्या की थी और गोड़ा (पैर का घुटना) टेकने से यह कुन्ड बन गया था यहाँ पर ब्रम्हा जी का मन्दिर भी है।

सप्तधारा

भीमगोड़ा से एक मील आगे सप्त स्रोत है। यहां सप्त ऋषियों ने तप किया था जिनके लिये गंगा को सात धाराओं में होकर बहना पड़ा था।

मनसा देवी

हरि की पैड़ी के पास से ही ऊपर पर्वत पर मनसा देवी के मन्दिर के लिये मार्ग जाता है। ऊपर चोटी पर मनसा देवी का सुन्दर मन्दिर है। यहां जाने का मार्ग अपेक्षाकृत सुगम है। भक्त लोग यहां भी दिन में ही दर्शन के लिये जाते हैं।

कनखल

कनखल हरि की पैड़ी से लगभग तीन मील दूर है। यह एक बड़ा कस्बा है। यहां नील धारा तथा नहर वाली गंगा की धारा मिलती है। यहां दक्षेश्वर महादेव का प्रसिद्ध स्थान हैं इसमें दक्ष प्रजापति का मन्दिर है। कहते हैं यहीं पर दक्ष प्रजापति के यज्ञ में अपमानित होने पर शिवपत्नी सती ने अपना प्राण-त्याग किया था।

सती कुन्ड

कहते हैं यह कुन्ड ही दक्ष प्रजापति का यज्ञ-स्थल है जिसमें सती ने शरीर त्याग किया था।

ऋषिकेष

हरिद्वार से ऋषिकेष के लिये रेल तथा मोटर मार्ग उपलब्ध हैं। पौराणिक कथाओं के अनुसार राक्षसों के उत्पात से पीड़ित ऋषियों की प्रार्थना पर विष्णु ने महाबली मधुकैटभ नामक राक्षस का यहीं पर बध किया था और समस्त राक्षसों का विनाश कर ऋषियों को यह तपोभूमि प्रदान की थी। इसीलिये इसका नाम ऋषिकेष पड़ा।

यहाँ से यात्री बदरीतथ केदारनाथ

यमुनोतरी, गंङ्गोतरी आदि को जाते हैं। यहां से ही इन स्थानों की यात्रा के लिये बसें तथा कुली आदि मिलते हैं। बाबा कालीकमली वाले के क्षेत्र का प्रधान कार्यालय यहीं पर है। यहां का मुख्य मन्दिर भरत मन्दिर है जो अत्यन्त प्राचीन एवं विशाल है। इसके अतिरिक्त राम मन्दिर बाराह मन्दिर चन्द्रेश्वर मन्दिर आदि कई सुन्दर मन्दिर हैं।

ऋषिकेष से डेढ़ मील दूर मुनि की रेती है जहां स्वामी शिवानन्द जी का प्रसिद्ध आश्रम है। यहीं पर राज्य सरकार के पर्वतीय विकास सम्बन्धी कार्यालय भी हैं।

मुनि की रेती से थोड़ा आगे नौका से गंगा पार करने पर स्वर्गाश्रम आता है। यथा नाम तथागुण के अनुरूप यह स्थान अत्यन्त रमणीक तथा मन को शान्ति प्रदान करने वाला है। यहां गीता भवन का विशाल स्थान है। जिसमें प्रतिवर्ष चैत से अषाढ़ तक सत्संग का आयोजन होता है। शहजहांपुर के प्रसिद्ध मुमुक्ष आश्रम के संस्थापक संत स्वामी शुकदेवानन्द की प्रेरणा से बनवाया हुआ परमार्थ निकेतन भी यहीं पर है। जहां कीर्तन भजन के अतिरिक्त कुछ दुर्लभ वस्तुयें भी संग्रहीत हैं जिनमें से जल में तैरने वाला पत्थर भी हैं।

स्वर्गाश्रम से थोड़ा आगे बढ़ने पर प्रसिद्ध लक्ष्मण झूला है गंगा के आर-पार मजबूत लोहे के रस्सों से लटकता हुआ यह दर्शनीय पुल है। यहां पर लक्ष्मण जी का मन्दिर तथा अन्य कई मन्दिर हैं। यहीं पर नैमीषारण्य के महान् सन्त जगदाचार्य नारदानन्द जी द्वारा स्थापित मोक्ष आश्रम है जो साधु-सन्तों के ठहरने तथा सत्संग का सुन्दर स्थान है। *

अमरनाथ

काश्मीर को वैसे ही उसकी सुषमा के कारण धरती का स्वर्ग कहते हैं। प्राकृतिक सौन्दर्य तो पूरे काश्मीर में सर्वत्र ही भरा पड़ा है। उस पर भी वहाँ के पावन तीर्थ उसके सौन्दर्य और पवित्रता को द्विगुणित करते हैं। काश्मीर में वैसे तो छोटे बड़े अनेकों तीर्थं हैं। किन्तु अमरनाथ का अपना एक विशेष महत्व है जिसके कारण प्रतिवर्ष लाखों यात्री वहां दर्शनार्थ जाते है।

अमरनाथ समुद्रतल से लगभग सोलह हजार फुट की ऊँचाई पर स्थित है। चारों ओर पर्वतों के बीच में यहाँ लगभग साठ फुट लम्बी, तीस फुट चौड़ी तथा पन्द्रह फुट ऊँची एक प्राकृतिक गुफा है जिसमें हिम के प्राकृतिक पीठ पर हिम-निर्मित प्राकृतिक शिवलिङ्ग है। यह हिम निर्मित शिवलिङ्ग जाड़ों में स्वत: बनता है और बहुत धीरे-धीरे क्षीण होता है किन्तु ग्रीष्मकाल में भी वह पूरी तरह से लुप्त नहीं होता। अमरनाथ के इस हिमलिङ्ग में सबसे आश्चर्य की बात यह है कि यह हिमलिङ्ग गुफा के अन्दर स्वयं निर्मित होता है और हिमलिङ्ग तथा उसकी पीठ (हिम चबूतरा) ठोस पक्की वर्फ का होता है। जबकि गुफा से बाहर मीलों तक चारों ओर कच्ची वर्फ ही मिलती है।

अमरनाथ गुफा से कुछ नीचे उतरकर अमरगंगा बहती हैं। श्रद्धालु यात्री उसमें स्नान करके मंदिर (गुफा) में जाते हैं। गुफा में मुख्य शिवलिंग के अतिरिक्त दो और छोटे हिम के विग्रह बनते हैं जिन्हें पार्वती तथा गणपति की मूर्तियां कहा जाता है। गुफा में जहां-तहां बूँद-बूँद करके जल भी टपकता रहता है जिसके सम्बन्ध में कहा जाता है कि गुफा के ऊपर पर्वत पर श्री राम कुन्ड है और उसी का जल गुफा में टपकता है।

अमरनाथ गुफा के पास एक स्थान से सफेद भस्म जैसी मिट्टी निकलती है जिसे पवित्र मानकर

(शेष पृष्ठ ७६ पर)

पर्वतों की रानी मसूरी

उत्तर प्रदेश के पर्वतीय स्थानों में मसूरी को 'पर्वतों की रानी' कहा जाता है। प्राकृतिक सौन्दर्य की दृष्टि से मसूरी वस्तुत: अद्वितीय है। देहरादून से लगभग २२ मील दूरी पर समुद्र-तल से ६००० फुट ऊँचाई पर बसी हुई पर्वतों की रानी मसूरी प्रतिवर्ष गर्मियों में भारत के दूरस्थ स्थानों से हजारों सैलानियों को आकृष्ट करती है।

ईस्ट इंडिया कम्पनी के शासन काल में एक अंग्रेज मेजर ह्यिरसे ने इसके सौन्दर्य पर मुग्ध होकर इसे खरीदा था। बाद में उसने सन १८१२ में ईस्ट इन्डिया कम्पनी के हाथ इसे बेच दिया। उन दिनों यह अंग्रेज शासकों के गर्मियों में रहने के लिये एक सुन्दर प्राकृतिक स्थल-मात्र था। बाद को सन १९०१ में जब हरद्वार-देहरादून रेल लाइन बन गई तब इसका विकास एक सुन्दर पर्वतीय नगरी के रूप में हुआ।

गर्मियों में यहाँ का जलवायु बहुत आनन्ददायक होता है। विशेष रूप से मई और जून के महीने में जब मैदानों के भाग भयानक गर्मी से झुलसते होते हैं तब यहां बड़ी सुहावनी ठंडक होती है। सितम्बर और अक्टूबर का मौसम स्वास्थ्य की दृष्टि से यहाँ बहुत अच्छा होता है। यहां का सबसे पुराना बाजार लंढौर है जिसके पास ही 'कैमिल बैक' नामक सुन्दर चोटी है। यहां का फैशनेबुल बाजार कुड़ली है जहाँ कई बड़े होटल, नाचघर और फैशनेबुल सामानों की बड़ी-बड़ी दूकानें हैं। पर्वतश्रेणियों के बीच बनी हुई म्युनिसिपल पार्क भी दर्शनीय है। लायब्रेरी क्षेत्र जहाँ तिलक मेमोरियल इंस्टीट्यूट लायब्रेरी है वह एक ओर शिक्षार्थियों और साहित्य प्रेमियों को ज्ञानवर्धन के लिए आकर्षित करता है वहीं नीचे देहरादून घाटी के मनोहर दृश्य देखने वाले सैलानियों

को भी। रातको यहाँ से देखनेपर देहरादून नगर की जलती हुई बत्तियाँ दीपावली का दृश्य प्रस्तुत करती हैं।

मसूरी से लगभग ७ कि. मी. दूर अत्यन्त मनोरम कैम्पटी फाल है। फाल तक लोग घोड़ों से या पैदल जाते हैं। सुन्दर वृक्ष लताओं से घिरे हुए पर्वत शिखर से गिरता हुआ यह झरना बड़ा सुन्दर दृश्य प्रस्तुत करता है।

(पृष्ठ ७४ का शेष)

यात्री प्रसाद स्वरूप ले जाते हैं।

अमरनाथ की मुख्य यात्रा श्रावणी पूर्णिमा को होती है वैसे जुलाई के प्रारम्भ से अगस्त के अन्त तक प्रतिदिन ही यात्री वहां जाते रहते हैं।

अमरनाथ जाने के लिये श्रीनगर से मोटर बस द्वारा पहलगाम आना पड़ता है यहाँ से अमरनाथ सत्ताइस मील है और यह यात्रा पैदल या घोड़े से करना पड़ती है। अमरनाथ की यात्रा में प्रर्याप्त ऊनी कपड़े दो-तीन कम्बल और बरसाती रखना चाहिये। साथ में जलपान का समान, थोड़ी खटाई, सूखे आलू-बुखारे, टार्च तथा स्टोव आदि रखना चाहिये।

उत्तर भारत का एक पवित्र तीर्थ—स्थल

श्री वैष्णों देवी

डा० जवाहर आजाद

भारत के प्रत्येक कोने में अनेक तीर्थ-स्थल हैं, जिनके दर्शनार्थ लाखों यात्री प्रत्येक वर्ष जाते हैं। प्रत्येक तीर्थ का अपना अपना महत्व है, ! उत्तर भारत मेंवैष्णों देवी का प्रसिद्ध तीर्थ है, जहां लाखों भक्तजन श्रद्धा के साथ दुर्गम पहाड़ियों को पार करके जाते हैं।

वैष्णो देवी की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विभिन्न कथायें प्रसिद्ध हैं। कहते हैं पृथ्वी पर अनाचार और पाप की वृद्धि देखकर पंच महा-शक्तियों — काली, लक्ष्मी, 'सरस्वती गायत्री तथा सावित्री ने पापों के नाश के लिये अपनी सम्मिलित शक्ति से एक कन्या का प्रादुर्भाव किया और उसे रत्नाकर सागर के यहाँ जन्म लेकर संसार के कष्टों को दूर करने का आदेश दिया।

यथा समय उस कन्या ने सागर के यहाँ जन्म लिया और उसका नाम वैष्णवी रक्खा गया। बालिका ने बचपन से ही भगवान की तपस्या आरम्भ कर दी। कालान्तर में भगवान राम ने लंका से लौटते समय उसे दर्शन दिये और जनकल्याण के लिये माणिक पर्वत पर जाकर रहने का आदेश दिया।

तब से वैष्णवी माणिक पर्वत पर जाकर रहने लगी। वहीं उस समय के दुष्ट शासक भैरों से उसका घोर युद्ध हुआ और वैष्णवी ने उसका वध करके उत्पीड़ित जनता को अभय प्रदान किया।

माता वैष्णों का पवित्र दरबार जहाँ माता की सुन्दर प्राकृतिक गुफा बनी हुई है, जम्मू काश्मीर राज्य के

जिला ऊधमपुर में जम्मूनगर से उत्तर की ओर त्रिकूट पर्वत के नीचे स्थित है। सर्वप्रथम पठानकोट से १०८ कि० मी० जम्मू को जाना पड़ता है। अब से लगभग एक वर्ष पूर्व तक पठानकोट से जम्मू तक सिर्फ बस का ही मार्ग था, लेकिन अब जम्मू तक भारतीय रेलवे ने रेल का निर्माण किया है, जिससे यात्रियों को और अधिक सुविधा हो गई है। जम्मू से आगे कटड़ा नामक स्थान पर जो कि ५० कि० मी० की दूरी पर है, जाना पड़ता है। कटड़ा तक बस चलती है। कटड़ा से लगभग दस मील की पैदल पहाड़ी यात्रा प्रारम्भ होती है। जो सीढ़ियों व सड़क के रास्ते से गुफा पर जाकर समाप्त होती है कटड़ा से गुफा तक के मार्ग में निम्न स्थान आते हैं — वाण गंगा, चरण पादुका, आदि कुमारी, सांझी छत्र, भैरों मन्दिर व वैष्णव दरबार (या गुफा)।

यात्रा में आवश्यक समग्री

रबड़ के जूते, कन्धे पर लटकने वाला थैला, टार्च, शुद्ध धुले कपड़े (कुर्ता-धोती या पायजामा, गुफा के अन्दर जाने के लिये) भेंट के लिये नारियल, ध्वजा धूप, इत्र, केसर आदि (कटड़े में ये सब वस्तुएँ प्राप्य हैं) मौसम के अनुसार गर्म कपड़े, छड़ी (कटड़े से मिल जाती है) बिस्तर आदि ले जाने की आवश्कता नहीं, क्योंकि दरियाँ व कम्बल भवन पर मिल जाते हैं।

यूँ तो अब लोग पूरे साल ही यात्रा करते हैं। किन्तु अश्विन के नवरात्रि से (सितम्बर-अक्टूबर) दिसम्बर के मध्य या अन्त तक यात्री जाते रहते हैं। परन्तु मनोरम व सुहाना समय अक्टूबर-नवम्बर का ही है। दीवाली के बाद भैया दूज से बहुत भीड़ होने लगती है। अत: कई बार दर्शन करने के लिये एक-दो दिनों तक भी प्रतीक्षा करनी पड़ती है।

तीर्थों के देश भारत वर्ष का यह एक ऐसा तीर्थ है, जहाँ प्रत्येक धर्म के लोग समान श्रद्धा के साथ जाते हैं। हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, सभी साम्प्रदायों के लोगों की देवी वैष्णों में अपार श्रद्धा है। मैं लगभग प्रत्येक वर्ष मातेश्वरी श्री वैष्णो देवी को जाता हूं ! मैंने अनुभव किया है कि लोगों में अब भी धर्म के प्रति श्रद्धा अटूट है। वे अपने व्यस्त जीवन में से कुछ समय निकाल कर दूर दुर्गम व सुरम्य घाटियों कोपार कर पहाड़ों के आंचल में स्थित देवी वैष्णों के चरणों में बैठकर सुख-शान्ति की कामना करते हैं। अपने अनुभव के

आधार पर मैं भारतीय जगत के पाठकों व अन्य प्रभु भक्तों को निवेदित करता हूं कि श्री वैष्णो माता के पूर्ण तीर्थ स्थान में आज भी प्राचीन काल की भाँति स्वयंमेव मनको शान्ति और भगवती के चरणों का अटूट ध्यान आने लग जाता है। कटड़ा से यात्रा प्रारम्भ करते ही आत्मिक शांति मिलने लगती है सारे विश्व को भूल कर यात्री वैष्णों माता के ध्यान में लीन हो जाता है। इस घोर कलियुग में सभी कामनायें व काम वासनायें नष्ट प्रायः हो जाती हैं और मातेश्वरी की जय के अलावा कुछ भी मुँह से नहीं निकलता सारे रास्ते में यात्री जय माता की — जय जगदम्बे की जपता जाता है।
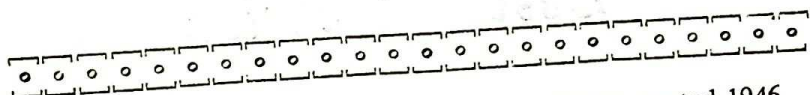
ज्वालामुखी

ज्वालामुखी का स्थान ५१ शक्ति पीठों में से एक है। कहते हैं यहाँ सती की जिह्वा गिरी थी ।

पठानकोट से रेलवे लाइन ज्वाला मुखी रोड स्टेशन को गई है। स्टेशन से ज्वालामुखी मंदिर लगभग २२ कि. मी. दूर है जहां तक बसें जाती हैं ।

ज्वालामुखी मंदिर के भीतर भूमि में से मशाल के समान ज्योति निकलती रहती है। इस ज्योति को देवी का स्वरुप माना जाता है। इस के अतिरिक्त अन्य मंदिर की दीवारों में कई स्थानों से भी ज्योति की रेखायें निकलती रहती हैं। इनमें से कई ज्वालायें स्वयं बुझती और प्रकाशित होती हैं, कुछ निरन्तर जलती रहती है।

भक्तों के अनुसार यह देवी का चमत्कार है, पर आधुनिक विज्ञान-वादी इस पर्वत में मिट्टी के तेल के सोते होना मानते हैं।

मंदिर के पीछे एक और छोटा मंदिर है जिसकी दीवारों से भी ज्वालायें निकलती हैं। मंदिर के सामने एक जलकुन्ड है जिसमें स्नान करना लोग पावन मानते हैं ।

ज्वालामुखी के मोटर स्टैंड पर रायबहादुर योधामल की धर्मशाला है। खाने-पीने आदि की सभी चीजें सरलता से मिल जाती हैं। ●

कांगड़ा

चित्रकला के प्रेमी कांगड़ा शैली के चित्रों से भली प्रकार परिचित हैं। पिछली शताब्दियों में चित्रकला का यह बहुत बड़ा केन्द्र रहा है।

पर्वत की गोद में बसा हुआ कांगड़ा प्राकृतिक सौंदर्य के लिये प्रसिद्ध है। यह पठानकोट से लगभग ५९ मील दूर है। कांगड़ा मंदिर तक रेल जाती है। स्टेशन से मंदिर डेढ़ मील दूर है। मार्ग पैदल का ही है।

यहाँ ब्रजेश्वरी देवी का मंदिर है। इसकी गणना भी ५१ शक्तिपीठों में की जाती है। कहते हैं यहाँ सती का मुंड गिरा था। यहाँ मंदिर में मुंड की ही प्रतिमा है।

छत्राढ़ी

कांगड़ा से आगे चम्बा की ओर यह सुन्दर स्थान है। यहाँ देवी का मन्दिर है जो लकड़ी का बना हुआ है। यह बहुत कलात्मक और सुन्दर है। पहले यह पूरा मंदिर एक खम्भे के ऊपर घूमता था। पर अब घूमने वाले यंत्र के खराब हो जाने के कारण उसका घूमना बन्द हो गया है।

चम्बा

प्राकृतिक सुषमा से भरपूर चम्बा नगरी रावी नदी के तट पर बसीहुई है। 'चम्बा की सुन्दरी' (चम्बा दी हूर) पर्यटकों के स्वप्नों का केन्द्र है। वस्तुत: यहां प्रकृति तथा मानव सौंदर्य का अद्भुत समन्वय है।

तीर्थ यात्रियों तथा भक्तों के लिये यहां श्री लक्ष्मीनारायण का प्राचीन मंदिर है। इसमें नारायण की श्वेत संगमरमर की सुन्दर प्रतिमा है। इसके अतिरिक्त कुछ और विशाल तथा कलापूर्ण मंदिर हैं जिनमें राधाकृष्ण, गौरीशंकर, त्र्यम्बकेश्वर, लक्ष्मी दामोदर तथा चक्र गुप्तेश्वर प्रसिद्ध हैं। ●

कुल्लू

पठानकोट से कुल्लू लगभग १७५ मील है। यहां तक पठानकोट से मंडी होकर बसें जाती हैं। कुल्लू समूद्रतल से ४७०० फूट ऊँचाई पर स्थित है।

चारों ओर हिममंडित ऊँचे-ऊँचे पर्वतों से घिरी हुई कुल्लू घाटी काश्मीर का अद्वितीय सौंदर्य स्थल है। प्रतिवर्ष हजारों पर्यटक यहां आते हैं।

व्यास नदी के तट पर प्राकृतिक सुषमा से भरपूर कुल्लू नगर बसा हुआ है। पर्यटकों और यात्रियों की सुख सुविधाओं का सभी सामान यहां

प्राप्य है । होटल, धर्मशालायें, बाजारें सभी कुछ सुलभ है । पर्यटकों के सैर सपाटे के लिये घोड़े मिल जाते हैं। यहां का जलवायु गर्मियों में विशेष रूप से बड़ा सुहाना होता हैं।

यहां का रघुनाथ मंदिर अत्यन्त प्रसिद्ध है । विजयादशमी को यहां की विशेष यात्रा होती है। उस अवसर पर आस-पास के स्थानों से देवताओं की सवारी सजधज के साथ यहां आती हैं और दस दिन तक बड़ा भारी मेला लगता है जिसमें यहां के लोक नृत्य देखने योग्य होते हैं।

मानसरोवर

भारतीय वाङ्मय में मानसरोवर का जितना वर्णन मिलता है उतना किसी अन्य नद-नदी का नहीं ।

कैलासपर्वते राम मनसा निर्मितं परम् ।
ब्रह्मणा नरशार्दूलं तेनेदं मानसं सरः ।
(रामायण, बाल० २४)

'हे राम, कैलाश पर्वत पर ब्राह्मा की इच्छा से निर्मित एक सरोवर है । मन से निर्मित होने के कारण इसका नाम मानस सर या मानसरोवर है।

हिन्दू भक्तों के लिये मानसरोवर तथा कैलाश का दर्शन बड़े साध की बात थी और कुछ वर्षों पूर्व तक भक्तजन हजारों कष्ट झेल कर भी कैलाश-मनोसरोवर जाते थे । चीन के तिब्बत पर अधिकार करने के बाद से अब उधर की यात्रा में अनेक कठिनाइयां उत्पन्न हो गयी हैं, इसलिये भारतीय यात्री अब बहुत

कम हां उधर करते हैं। भारतीय सीमा पर चीनी

मानसरोवर हिमालय के पार तिब्बती पठार में स्थित है। समुद्रतल से लगभग १२००० फुट की ऊँचाई पर स्वच्छ नील जल से भरा हुआ यह अण्डाकार विशाल सरोवर है। इसका बाहरी घेरा लगभग २२ मील है। यहां का दृश्य बड़ा ही मनोरम है। किन्तु यहां पर कोई वृक्ष पौधे नहीं हैं। मानसरोवर में हंस बहुत हैं। राजहंस भी यहां मिलते हैं।

अधिकारी यात्रियों के सामान की बड़ी छान बीन करते हैं और कैमरा दूरबीन आदि तो अलग पुस्तकें और समाचार पत्र पत्रिकायें तक नहीं ले जाने देते।

मानसरोवर पर खाने-पीने के सामान की बड़ी कठिनाई रहती है इसलिये यात्रियों को अपने साथ ले जाना पड़ता है। मार्ग दर्शक तथा दुभाषिये का ले जाना भी अनिवार्य है। ●

कैलाश

मानसरोवर से लगभग २० मील दूर कैलाश पर्वत है। कैलाश की आकृति एक विशाल शिवलिंग के समान है। चारों ओर के पर्वत शिखरों के बीच यह शिखर ऐसा लगता है जैसे कमल के बीच शिवलिंग स्थापित हो। जिन्हें इस परम पावन शिव धाम के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, उनका कहना है कि सम्पूर्ण हिमालय में ऐसा दिव्य, शोभायुक्त शिखर दूसरा नहीं है।

कैलाश पर्वत कसौटी के ठोस काले पत्थर का है और सदा हिम से ढका रहता है। मजे की बात यह है कि इसके आस-पास के सभी पर्वत कच्चे लाल-भूरे पत्थर के हैं।

कैलाश पर्वत की प्राकृतिक रचना बड़ी ही चमत्कारपूर्ण है। उसके शिखर के चारो कोनों में प्राकृतिक रूप से ऐसी मंदिरों की भाँति की चोटियां बनी हैं जैसी प्राय: बहुत से मंदिरों में चारों ओर बनी होती हैं।

कैलाश के शिखर की ऊँचाई सागरतल से लगभग १९००० फुट है जिस पर सामान्य यात्री का जा सकना सम्भव नहीं है। यात्री कैलास की परिक्रमा करते हैं जो लगभग ३२ मील की है। ●

नेपाल : जितने मानव उतने मंदिर

● शैलेन्द्र 'सुमन'

नेपाल राज्य भारत के उत्तराखण्ड में स्थित है। इस देश की आबादी लगभग १ करोड़ दस लाख है। सम्पूर्ण नेपाल तीन भागों में विभक्त है– दुर्गम पहाड़ी क्षेत्र, तराई क्षेत्र एवं जंगली क्षेत्र। यात्रा तथा पर्यटन के लिये, प्राकृतिक सौन्दर्य-दर्शन तथा शिकार करने के लिये नेपाल से अच्छी कोई जगह नहीं हो सकती। संसार की सबसे ऊँची पहाड़ी एवरेस्ट हिमालय पर ही स्थित है, जो बारहों महीने श्वेत हिम से ढकी रहती है। एवरेस्ट जाने का मार्ग नेपाल की राजधानी काठमाण्डू होकर ही है। काठमाण्डू नेपाल की सबसे बड़ी घाटी है।

प्राचीन ग्रंथों के अनुसार कहा जाता है कि समस्त काठमाण्डू बहुत पहले मान-सरोवर जैसी एक विशाल झील थी, जिसका नाम 'नागह्रद' या 'नागवास' था। बाद में चीन से बोधिसत्व मंजुश्री ने आकर अपनी तलवार से पर्वत को काटकर पानी बहने के लिये मार्ग बना दिया, जिससे पानी बह गया और झील घाटी के

रूप में बदल गया। बहुत पहले काठमाण्डू का नाम कान्तिपुर था। जिसे सन् ७१३ में जयदेव गुणकाम ने बसाया था। फिर लगभग सन् १६०० के आसपास राजा लक्ष्मी नरसिंह मल्ल ने यहीं पर एक काष्ठ मण्डप (जो गुरु गोरखनाथ का मंदिर है) बनवाया। इस मन्दिर के सम्बन्ध में किंवदन्ती है कि इसमें लगी सारी लकड़ी एक ही विशाल शालवृक्ष से निकली थी। यह पगोडा शैली का तिमंजिला मन्दिर मुख्यतः लकड़ी का बना हुआ है इसी कारण नेपाल की राजधानी का नाम 'काठमाण्डो' पड़ा।

नेपाल पहाड़ों, घाटियों, जंगलों एवं झीलों का देश है। नेपाल की पहाड़ियों में अनेक झीलें हैं जिसमें प्रकृति की सुन्दरता अपने असली रूप में दिखाई देती है। काठमाण्डू नेपाल का सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण नगर है। नेपाल के सभी निवासी हिन्दू-धर्म के अनुयायी हैं। सही माने में नेपाल एक धार्मिक देश है। यह कोई नयी बात नहीं है। हजारों वर्ष पहले से ही यहाँ बौद्ध तथा हिन्दू धर्म (जो कदापि दो नहीं है) को मानने वाले रहते आये हैं। नेपाल के लुम्बिनी नामक स्थान में ही भगवान गौतम बुद्ध का जन्म हुआ था। नेपाल के चार महत्वपूर्ण दर्शनीय स्थल भक्तपुर (भादगाँव) ललितपुर (पाटन) पोखरा तथा काठमाण्डू हैं। भक्तपुर काठमाण्डू से सात मील दूर है। भक्तपूर तथा ललितपुर काठमाण्ड की घाटी में ही बसे हुए हैं। भक्तपुर (भादगाँव) के विषय में अनुमान है कि यह कोई १,१०० वर्ष पुराना है।

ललितपुर

ललितपुर काठमाण्डू से करीब तीन मील दूर है। ईसा से करीब २५० वर्ष पहले सम्राट अशोक भी नेपाल गये थे। उन्होंने ही वहाँ 'ललितपाटन, नामक नया नगर बसाया, जिसे आज ललितपुर के नाम से जाना जाता है। यहाँ का हिरण्य-वर्ण महाविहार लगभग ८०९ वर्ष पुराना है। ललितपुर का ही कृष्ण-मन्दिर लगभग ३०० वर्ष पूर्व राजा सिद्धि नरसिंह मल्ल ने बनवाया था। यह मन्दिर अपनी कारीगरी के लिये विश्वप्रसिद्ध है। महाबौद्ध मन्दिर लगभग ५०० वर्ष पूर्व पण्डित अभय-राज ने बनवाया था। इस मन्दिर की विशेषता यह है कि इसमें लगभग

२३५० ईंटें लगी हैं और उनमें से प्रत्येक पर गौतम बुद्ध के जीवन के विभिन्न सुन्दर दृश्य खुदे हुए हैं।

भक्तपुर

ललितपुर की ही भाँति भक्तपुर भी अपने विशाल एवं भव्य मन्दिरों के लिए प्रसिद्ध है। यहां का नयात-पोला मन्दिर नेपाल का सबसे ऊँचा मन्दिर है। यह २५० वर्ष पूर्व राजा भूपतीन्द्र मल्ल के शासन-काल में पगोडा शैली में बने १२० फीट ऊँचे इस मन्दिर की पाँच मंजिलें हैं। यह इस प्रदेश का सबसे ऊँचा मन्दिर होने के कारण दूर-दूर से दिखायी पड़ता है। इसके अति-रिक्त यहां के चाँगुनारायण तथा भैरव के मन्दिर बहुत प्रसिद्ध हैं। चांगुनारायण वैष्णव मन्दिर है। अनुमान है यह मन्दिर अब से १६०० वर्ष पूर्व राजा हरिदत्त वर्मा ने बनवाया था। यह मन्दिर ५,५००
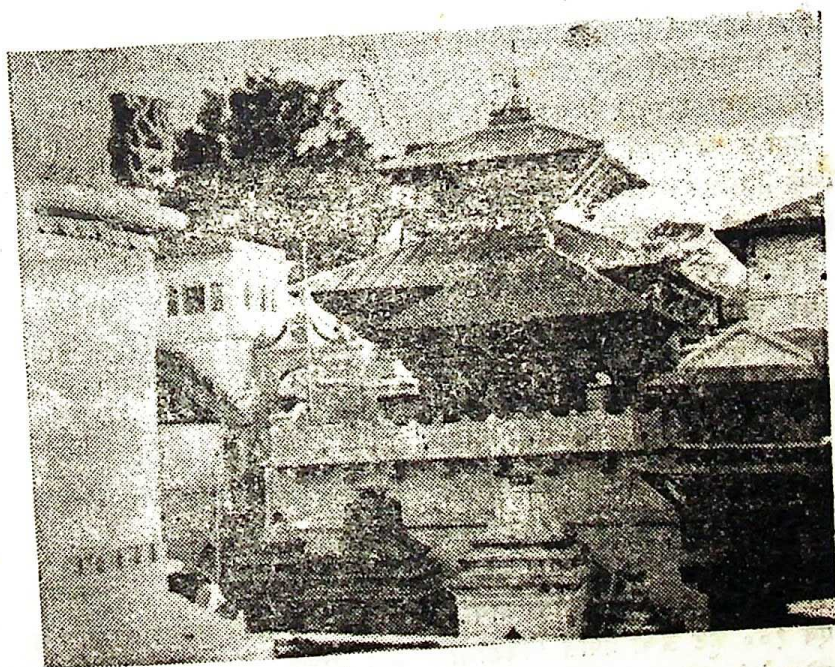
श्री पशुपतिनाथ मन्दिर, काठमाण्डू

फुट की ऊँचाई पर एक पहाड़ी पर स्थित है। नेपाल घाटी का प्रसिद्ध दत्तात्रेय का मन्दिर भक्पुर में ही है। यहाँ ब्रह्मा की पूजा होती है। शिवरात्रि के समय यहाँ मेला भी लगता है।

पोखरा

काठमाण्डू से दूर पोखरा घाटी एवं पाल्पा आदि घाटियाँ भी प्राकृतिक विहार के लिए उत्तम स्थान हैं। पोखरा, काठमाण्डू से ९६ मील दूर है। समुद्र-तल से कुल ३,५०० फुट ऊँची इस घाटी की तुलना स्वीट्जरलैण्ड तथा काश्मीर से की जाती है। यहाँ से अन्नपूर्णा तथा धौलागिरि के हिमशिखर सामने ही दिखाई पड़ते हैं। यहाँ पर तैरने, नौका चलाने, मछली पकड़ने तथा शिकार करने की खूब सुविधा है। यहाँ के रुपताल और बेगनास ताल के प्राकृतिक सौन्दर्य का पर्यटक खूब आनन्द उठाते हैं। लामजुंग में बड़ा पोखर और दूधपोखरी नामक दो तालाब हैं इनके निकट ही ६०० फुट की ऊँचाई से गिरने वाला प्रपात 'सीमागौन,' ३०० फुट ऊँचा प्रपात 'जार्थी,' एवं १०० फुट ऊँचा प्रपात 'यंत्रशाला खोला' है। ऐसे सुन्दर प्रपात नेपाल में अन्यत्र कहीं नहीं है। पोखरा के निकट ही 'चमेड़ो ओड्डर' नामक गुफाएँ हैं। इनमें चट्टानों की विचित्र बनावट देखने को मिलती है।

पाल्पा:—

काठमाण्डू से १४० मील पश्चिम में स्थित पाल्पा घाटी अपने प्राकृतिक सौन्दर्य, सुन्दर स्त्रियों, मधुर संगीत, मनोहारी नृत्यों, सुन्दर झीलों और प्राचीन मन्दिरों के लिये प्रसिद्ध है।

काठमाण्डू :

नेपाल राज्य की राजधानी एवं प्रमुख नगर है। यहाँ पर ही नेपाल का सबसे महत्वपूर्ण मन्दिर है—पशुपतिनाथ। यह मन्दिर वागमती नदी के किनारे बना हुआ है। हिमालय के वक्ष पर स्थित काठमाण्डू जनपद शिवरात्रि के अवसर पर अपने सम्पूर्ण यौवन पर आ जाता है। नगर से दो मील दूर एक छोटे से पर्वताकार टीले पर श्री पशुपतिनाथ का दिव्य-मन्दिर स्थित है। बहुत दूर से ही मन्दिर का स्वर्ण-कलश यात्रियों को अपने अनोखे आकर्षण से मुक्त आह्वान करता है। यह विराट मन्दिर जिसके प्रायः समस्त अंग सोने

से मण्डित हैं और जिसकी भूमि श्वेत संगमरमर के चौकोर पत्थरों तथा चाँदी के सिक्कों से जटित है। सिंह द्वार से अन्दर जाते ही पहले एक सुविशाल नन्दी प्रतिष्ठित मिलता है। देवाधिदेव महादेव का नन्दी मानों प्रभू की आज्ञा की प्रतीक्षा में हो। उसके आगे असली मन्दिर है। ऊँचे चबूतरे पर चारों ओर मोटी लौह शृंखलाओं एवं बीच-बीच में प्रदीप्त-स्तम्भों से मन्दिर घिरा है। शिवरात्रि तथा अन्य विशेष पर्वों पर इन प्रदीप स्तम्भों में असंख्य दीप जल उठते हैं। सुन्दर-सुगन्धित कक्ष के मध्य महादेव का लिङ्ग है। चमकते हुए काले पत्थर की सुन्दर मूर्ति के तीन तरफ मुँह बने हुए हैं। विग्रह के मस्तिष्क पर सहस्त्र धाराओं वाला रौप्य-पात्र है, जिसमें से रोज एक सौ आठ घड़े जल डालकर विग्रह को नहलाया जाता है। महाशिवरात्रि के दिन श्री पशुपतिनाथ को अपूर्व वेश भूषा से सजाया-संवारा जाता है। यहाँ के लोगों का विश्वास है कि वे ही उनके रक्षक, पालक तथा विनाशक हैं। नेपाली अपने राज्य एवं स्वयं को श्री पशुपतिनाथ के अधीन समझता है।

पशुपतिनाथ के मन्दिर के साथ ही लगा हुआ पंचमुखी महादेव का मन्दिर है। पूर्व वाले टीले पर गुह्येश्वरी देवी का मन्दिर है। इस मन्दिर से सम्बन्धित एक कहानी है—"कनखल में दक्ष प्रजापति ने एक बड़ा यज्ञ किया। उसमें उसने अपने दामाद शिव को निमंत्रित नहीं किया शिव की पत्नी सती फिर भी उस यज्ञ में सम्मिलित होने चली गयी। दक्ष ने सभी देवताओं के लिए यज्ञ भाग रखे किन्तु शिव का भाग नहीं रखा। इसी बात पर कहा-सुनी हो गयी क्रोध में आकर सती ने आत्महत्या कर ली शिव प्रेमाकुल हो सती के शव को लेकर पागलों की तरह फिरने लगे। तब विष्णु ने अपने चक्र से सती के शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर दिये। सती की देह का गुह्य भाग यहाँ आकर गिरा, जहाँ यह मन्दिर बना है।" काठमाण्डू में एक और मन्दिर है-स्वयंभू नाथ का। यह मन्दिर ५०० फुट ऊँची एक पहाड़ी पर बना है। लगभग ४०० सीढ़ियाँ चढ़कर इस मन्दिर तक पहुँचना होता है। इसका आकार शंकु की आकृति के एक ऊँचे कलश की-सी है, जो १२० फुट ऊँचा है। इसके शिखर पर स्वर्ण का एक तोरण है। स्वयंभूनाथ के मन्दिर में गौतम बुद्ध की एक विशाल प्रस्तर-मूर्ति है। बुद्ध की इतनी बड़ी

मूर्ति नेपाल में [illegible] कहा जाता है कि यह मन्दिर २००० वर्ष से भी अधिक प्राचीन है। इसके अलवा काठमाण्डू में तुलजा भवानी का मन्दिर है जो नगर के ठीक बीच में और पुराने राजमहल के पास बना हुआ है। गद्दी दरबार के सामने ही कुमारी देवी का मन्दिर है। पुरानी प्रथा के अनुसार यहाँ किसी अविवाहित लड़की को लाकर रखा जाता है जो जीवन भर कुंवारी रहती है। उसे ही कुमारी देवी कहा जाता है।

काठमाण्डू का मछीन्द्रनाथ का मन्दिर भी अत्यन्त भव्य है। यह मछीन्द्र बहल में बना हुआ है। मछीन्द्रनाथ को पद्मपाणि बुद्ध का अवतार माना जाता है। काठमाण्डू में ही विक्रमशील महाविहार, अन्नपूर्णा मन्दिर आदि कितने ही सुन्दर एवं महत्वपूर्ण मन्दिर हैं। काठमाण्डू से छः मील दूर सुन्दरी जल है। सुन्दरी जल जाते हुए बोधनाथ के स्तूप से दो मील उत्तर-पूर्व की ओर गोकर्ण नामक सुन्दर स्थान है। यहाँ लगभग ५५० वर्ष प्राचीन गोकर्णेश्वर महादेव का मन्दिर काठमाण्डू से दो-ढाई मील दूर बालाजू का जल उद्यान है। यहाँ पहाड़ की तली में बाईस झरने फूट [illegible] नी बहकर एक तालाब में भरता है। इस तालाब में शेषशायी विष्णु की एक सुन्दर प्रतिमा है जो जल में आधी डूबी रहती है। बालाजू के पास ही नागार्जुन पहाडी है। यहां से पर्वत मालाओं तथा घाटी का दृश्य बहुत सुन्दर दीखता है।

काठमाण्डू से कोई सात मील दूर शिवपुरी पर्वत की तलहटी में बूढ़ा नीलकंठ नामक स्थान पर भगवान विष्णु की पत्थर की बनी एक विशाल प्रतिमा है। इसमें भगवान विष्णु शेषनाग पर लेटे हुये दिखाई देते हैं। कार्तिक के महीने में यहाँ एक बड़ा मेला लगता है। यह स्थान मनमोहक है। इन मन्दिरों के अतिरिक्त नेपाल में अन्य सैकड़ों सुन्दर एवं भव्य मन्दिर हैं, जो नेपाल के राजाओं और प्रजा की धार्मिक भावनाओं का परिचायक हैं। अगर नेपाल को मन्दिरों का देश कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

काठमाण्डू अपने आस-पास फैली घाटियों के लिये भी सैलानियों के आकर्षण का मुख्य केन्द्र है। काठमाण्डू आने वाले यात्री सोनधारा में बस द्वारा उतरते हैं। सोनधारा से

एक सीधी-चौड़ी सड़क नारायण हिट्टी दरबार (वर्तमान राजमहल) की ओर जाती है। इस सड़क के दाईं ओर तुड़ीखेल का विस्तृत मदान है। सोनधारा से दाईं ओर को एक चौड़ी सड़क शहीद ढोका और उससे आगे सिंह दरबार की ओर चली जाती है। सिंह दरबार पहले राणा प्रधान मन्त्रियों का महल था। अब इसमें नेपाल सरकार का सचिवालय तथा आकाशवाणी केन्द्र है। इस विशाल भवन में १८०० कमरे हैं। नारायण हिट्टी दरबार (राजमहल) से आगे बाईं ओर जुद्ध सड़क फूटती है, जिसे आजकल 'न्यू रोड' कहा जाता है। 'न्यू रोड' आजकल काठमाण्डू का फैशन-केन्द्र है। 'न्यू रोड' के दूसरे छोर पर हनुमान ढोका दरबार (पुराना राजमहल) तथा कुमारी देवी का मन्दिर है। सर्वोच्च न्यायालय सिंह दरबार के निकट है।

प्राचीन एवं आधुनिक नेपाल : संक्षिप्त विवरण

नेपाल पर १३वीं शताब्दी से लेकर सन् १७३२ तक मल्ल-वंश का शासन रहा। मल्ल-वंश का अन्तिम राजा जय प्रकाश मल्ल था। जय प्रकाश मल्ल कुछ ही दिनों तक राज्य कर पाया होगा कि गोरखों के राजा पृथ्वी नारायण शाह ने काठमाण्डू पर आक्रमण कर दिया। सन् १७५६ में राजा पृथ्वी नारायण शाह का काठमाण्डू पर अधिकार हो गया। राजा पृथ्वी नारायण शाह को नेपाल का राष्ट्र-निर्माता कहा जाता है। नेपाल के राजा शाह वंशज हैं। राजा पृथ्वी नारायण शाह के बाद राणाओं का नेपाल पर एक छत्र राज्य रहा। नेपाल पर बलात् शासन करने वाला अन्तिम राणा मोहन शमशेर था। सन् १९५० में नेपाल में लकतंत्रीय क्रान्ति हुई। नेपाल की इस लोकतंत्रीय क्रान्ति के पश्चात् शासन की बागडोर पृथ्वी वीर विक्रम शाह के पुत्र त्रिभुवन वीर विक्रम शाह के हाथों में आई। श्री पृथ्वी वीर विक्रम शाह की मृत्यु सन् १९११ में ही हो गई थी उस समय श्री त्रिभुवन वीर विक्रम शाह अभी बच्चे थे। सन् १९५० में त्रिभुवन वीर विक्रम शाह ने भारत की सहायता से राणाओं के अत्याचारी शासन से नेपाल की प्रजा को मुक्त कराया। राणाशाही के विरुद्ध आन्दोलन को सफल बनाने में एक जर्मन महिला चिकित्सक ऐरिका ल्यूखटैग का बहुत बड़ा हाथ था। १३ मार्च १९५५ को राजा त्रिभुवन वीर विक्रम शाह का देहान्त हो गया।

उसके बाद युवराज श्री महेन्द्र वीर विक्रम शाह महाराजाधिराज बने। श्री ५ महेन्द्र का जन्म ११ जून, सन् १९२० में हुआ था। श्री ५ महेन्द्र ने सन् १९५८ में आम-चुनाव करवाया। इस चुनाव के पश्चात् नेपाली कांग्रेस का मंत्रिमण्डल बना, किन्तु इससे जनता को कोई लाभ नजर नहीं आया। इससे क्षुब्ध होकर १५ दिसम्बर को नेपाल नरेश श्री ५ महेन्द्र ने मंत्रिमण्डल भंग कर शासन फिर अपने हाथ में ले लिया। तत्पश्चात् राजा महेन्द्र ने नेपाल की समस्याओं को भली-भाँति देखा-परखा तथा विचार-विमर्श के पश्चात् पंचायती शासन-व्यवस्था लागू कर दी। जो जनता के लिये हितकर सिद्ध हुई।

श्री ५ महेन्द्र उत्कृष्ट कवि एवं अच्छे गीतकार भी थे। उनके लिखे गीत आज भी रेडियो-नेपाल से प्रसारित होते हैं। उनके गीतों को नेपाली फिल्मों में भी काफी लोकप्रियता मिली। उनका विवाह राणा हरि शमशेर की पुत्री इन्द्र राज्य लक्ष्मी देवी के साथ सन् १९४० में हुआ परन्तु दुर्भाग्यवश सन् १९५० में रानी का स्वर्गवास हो गया। उसके दो वर्ष बाद श्री ५ महेन्द्र ने स्वर्गीया रानी की छोटी बहन रत्ना राज्य लक्ष्मी देवी से विवाह किया।

श्री ५ महेन्द्र १३ मार्च, १९५५ को सिंहासनारूढ़ हुए थे। सिंहासनासीन होने के कुछ ही समय बाद उन्होंने अपनी प्रतिभा तथा कुशल राजनीति से देश को चौदह अंचल एवं पचहत्तर जिलों में संगठित किया। तत्पश्चात् प्रशासन में नवीनीकरण लाकर तथा विधान की मर्यादा कायम रखते हुए प्रशासनिक सुधार की नींव और भी मजबूत कर दी। भूमि सुधार और औद्योगीकरण लागू कर आर्थिक जगत में एक नई क्रान्ति ला दी। अभी श्री ५ महेन्द्र नेपाल को उन्नति की दिशा में और भी आगे बढ़ाने की सोच ही रहे थे कि अचानक मौत ने उन्हें आ घेरा। २०२८ साल माघ १७ गते तदनुसार सन् १९७२, ३० जनवरी को श्री ५ महेन्द्र का भरतपुर (नेपाल) में आकस्मिक एवं असामयिक निधन हो गया।

श्री ५ महेन्द्र की मृत्यु के पश्चात् उनके बड़े पुत्र श्री वीरेन्द्र वीर विक्रम शाह नेपाल के राजा हुए। श्री ५ वीरेन्द्र स्वर्गीया श्री ५ युवराज्ञी इन्द्र राज्य लक्ष्मी देवी शाह के पुत्र हैं। श्री ५ महाराजाधिराज वीरेन्द्र वीर विक्रम शाह का जन्म सम्वत् २००२

साल पौष १४ गते तदनुसार सन् १९४५ दिसम्बर २८ तारीख को राज दरबार काठमाण्डू में हुआ। श्री ५ महाराजाधिराज की प्राथमिक शिक्षा दार्जिलिङ्ग के 'सेण्ट जोजेफस कालेज' में सुसम्पन्न हुई। श्री ५ वीरेन्द्र को छात्र जीवन में ही २०११ साल चैत्र १ गते को पिता श्री ५ महेन्द्र ने नेपाल अधिराज्य की राजगद्दी का उत्तराधिकारी सार्वजनिक रूप से घोषित किया। दार्जिलिङ्ग के बाद इन्होंने 'इटन कालेज' इंगलैण्ड में उच्च शिक्षा प्राप्त की।

श्री ५ वीरेन्द्र का शुभ उपनयन संस्कार समारोह २०१९ साल चैत्र गते को वैदिक-विधि के अनुसार पूर्ण हुआ। २०२१ साल में इंगलैण्ड से अध्ययन पूरा करने के बाद स्वदेश लौटने के कुछ दिनों बाद २०११ साल आश्विन १ गते के दिन हनुमान ढोका गद्दी बैठक में श्री ५ वीरेन्द्र की पूर्ण वयस्कता का समारोह सम्पन्न हुआ। वर्तमान महाराजाधिराज का शुभ विवाह २०२६ साल फाल्गुन १६ गते को श्री ५ ऐश्वर्य राज्य लक्ष्मी देवी शाह के साथसुसम्पन्न हुआ। श्री ५ महाराजाधिराज ने महारानी के साथ पश्चिम जर्मनी, फ्रांस आदि कुछ यूरपीय देशों का अनौपचारिक भ्रमण किया। श्री ५ वीरेन्द्र के प्रथम पुत्र रत्न श्री ५ युवराज दीपेन्द्र वीर विक्रम शाह हैं। युवराजाधिराज दीपेन्द्र का जन्म २०२८ अषाढ़ १३ गते तदनुसार सन् १९७२, २६ जून सोमवार को हुआ।

अब नेपाल पूर्ण रूपेण स्वतन्त्र राष्ट्र है। नेपाल संयुक्त राष्ट्रसंघ का सदस्य भी है। नेपाल की राष्ट्र-भाषा गोरखाली है। इस समय नेपाल प्रगति के पथ पर है। राज-तंत्र के आधार शिला पर पालित इस छोटे से नेपाल राज्य ने कम समय में इतनी अधिक प्रगति की है कि विश्व के सभी राष्ट्र चकित रह गये हैं। वर्तमान नरेश श्री ५ वीरेन्द्र में अतुलित दूरदर्शिता, अदम्य उत्साह एवं अत्यधिक निर्भीकता का आभास परिलक्षित होता है। प्रजा की भलाई में सतत निमग्न श्री ५ वीरेन्द्र अद्वितीय व्यक्ति हैं। स्वदेश-विदेश की शिक्षा, अध्ययन से परिपक्व एवं उत्साही श्री ५ वीरेन्द्र वीर विक्रम शाह की छत्रछाया में नेपाल एवं नेपालियों का भविष्य उज्ज्वल रहेगा, इस विषय में समस्त देशवासी आश्वस्त हैं।

शिलांग

शिलांग असम तथा मेघालय दो राज्यों की राजधानी है। शिलांग जाने के लिये गौहाटी से ६३ मील की मोटर-यात्रा करनी पड़ती है।

शिलांग का सौंदर्य अवर्णनीय है। यहाँ पहुँचने पर ऐसा लगता है जैसे किसी स्वलप्रोक में पहुँच गये हों चारों ओर पहाड़ों से घिरी हुई सुन्दर घाटी में यह नगर बसा हुआ है। यहाँ प्राचीन और अर्वाचीन सभ्यता का अद्‌भुत समन्वय दिखाई पडता है। झोपड़ियों के साथ पक्के घर तथा पाश्चात्य वेशभूषा के साथ अदिवासी रंगविरंगी पोशाकें।

नगर के मध्य भाग को पुलिस बाजार कहते हैं। यहां पर सचिवालय, विधान सभा तथा अन्य प्रमुख दफ्तर हैं। सचिवालय के पास ही यहाँ की प्रसिद्ध सेंट्रल लाइब्रेरी है।

विधान सभा के पास ही यहाँ का सुन्दर बोटैनिकल गार्डेन है जिसमें संसार भर की वनस्पति देखने को मिलती है। इसी के पास घोडे की नाल के आकार का 'वार्ड लेक' सरोवर है।

शिलांग का बड़ा बाजार बहुत अच्छा है। प्राचीन सियेम राज्य के समय के कई पाषाण स्मारक तथा बैठने के लिये बनाये गये कई आधार-प्रकार के पत्थर यहाँ पर अभी भी हैं। इस बाजार में मुख्यत: महिलायें ही समान बेचती है जो दूर-दूर से सामान बेचने आती हैं।

नगर के आसपास बहुत से सुन्दर झरने हैं। ८० फुट की ऊँचाई से गिरने वाला गुम्मर प्रपात यहाँ का सबसे सुन्दर प्रपात है। यहाँ से ही पूरे नगर को बिजली दी जाती है। शिलांग के हैपी वैली स्थान से तीन मील दूर स्वीट प्रपात है। यह झरना ३२० फुट ऊँचे पहाड़ से गिरता है। इसका दृश्य बड़ा ही मनोरम है। चेरी रोड के दूसरी

ओर एलिफेंट प्रपात वर्षा काल में बड़ा ही सुन्दर दिखाई पड़ता है। इसकी उज्ज्वल जलधार पर्वतों पर सीढ़ियाँ बनाती हुई गिरती है। मौसमाई प्रपात तो न केवल शिलांग का वरन १८६७ के भूकम्प के पहले तक विश्व कर दूसरा सबसे बड़ा प्रपात माना जाता था। यह एक-सीधी शिला के ऊपर से १८०० फुट की ऊंचाई से गिरता है।

दार्जिलिंग

हिमालय पर्वतमाला के पूर्वी भाग का यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहाड़ी स्थान है। सिलीगुड़ी से दार्जिलिंग तक छोटी लाइन की एक शाखा गयी है। ५० मील की यह रेल यात्रा भी बड़ी आनन्ददायक होती है। ७००० फुट की ऊँचाई पर स्थित दार्जिलिंग तक पहाड़ों को काट-काट कर बनाये हुये चक्करदार मार्ग पर जब नैरो गेज की छोटी सी रेलगाड़ी चढ़ती है तो बड़ा ही भला लगता है। चारों ओर का प्राकृतिक दृश्य बड़ा ही सुहावना दिखाई पड़ता है।

दार्जिलिंग से कंचनजंगा चोटी पर स्वच्छ मौसम में सूर्योदय का दृश्य इतना हृदय स्पर्शी होता है कि उसका सुखद आनन्द पाने की लालसा में हजारों पर्यटक दार्जिलिंग जाते

है। आब्जरवेटरी हिल से कंचनजंगा और कालिमपांग का दृश्य बड़ा ही मनोरम दिखाई पड़ता है।

आब्जरवेटरी हिल का चक्कर लगाती हुई यहाँ की प्रमुख सड़क है माल रोड। इसके नीचे भोटियों की एक गुफा है। इसमें बुद्ध की मूर्ति है तथा बौद्ध हस्तलिपियों का महत्वपूर्ण संग्रह है।

आब्जरवेटरी से दो मील की दूरी पर बर्च हिल पार्क है। यह एक सुन्दर प्राकृतिक उद्यान है। पार्क के पास ही पर्वतारोहण की संस्था है जहाँ ऐवरेस्ट विजेता तेनजिंग लोगों को पर्वतारोहण की शिक्षा देते हैं।

कालिमपांग—दार्जिलिंग के पूर्व में ३० मील दूर पर स्थित है। यह जलवायु की दृष्टि से बहुत अच्छा स्थान है। यहाँ का जलवायु स्वास्थ्यवर्धक भी है। दार्जिलिंग से कालिमपांग जाते समय चित्ताकर्षक पहाड़ी दृश्यों और सुन्दर चाय-उद्यानों में से होकर गुजरना पड़ता है। यहाँ की दस्तकारी की वस्तुयें बड़ी आकर्षक होती हैं जिन्हें लोग विशेष रूप से अपने स्वजन मित्रों को उपहार में देने के लिये ले जाते हैं। ●

मूगा बनाने वाली कामिनियों का देश कामरूप

● डा० विश्वनाथ याज्ञिक

"जाग मछन्दर गोरख आया" की प्रबोधात्मक लोक-कथा में कामरूप कामाख्या में महारानी किलोत्तमा के एक छत्र राज्य: "जादू बंगाली" से अभिभूल मत्स्येन्द्र का वहाँ उलझाव आसाम की मातृ-प्रधान परम्पराओं एवम् तांत्रिक प्रथाओं के वर्चस्व को इंगित करते हैं। आसाम की जन-जातियाँ महाभारत, रामायण तथा इतर पुराण साहित्य में म्लेच्छ, किरात अथवा चिन नाम से अभिहत हैं जो इनके मंगोल मूल को इंगित करते हैं। ईसा से दो सहस्र वर्ष पूर्व यह जातियाँ चीन तथा तिब्बत से ब्रह्मा और तनदन्तर गौड़ (बंग देश) तथा प्राग्ज्योतिष (कामरूप आसाम) में आबसी । इनकी बिभिन्न बोलियाँ भी भारतीय-महाचीन वंश से उद्भूत हैं जिनकी मुख्य उपशाखाएँ "मौन-खमेर" तथा "बर्मी-तिब्बतीय" आज भी आसाम के पर्वतीय क्षेत्रों में विद्यमान हैं। आसाम में अन्तिम जाति आई "अहोमों की और इनकी भाषा रही "शान" जो चीनी-स्यामी उपवंश से सम्बन्धित रही है।

जैसे जैसे गाङ्गीय मैदान से: आर्य फैले वैसे वैसे वे मिथिला, उत्तरी मगध, बंग होते हुए कामरूप (आसाम) में छाते गए। फलतः यह

की पूर्व जातियों को मैदानों से भागकर पर्वतों की शरण लेनी पड़ी। यही कारण है कि वहाँ की आदिम जातियाँ: गारो, खासी, लूशिया, कुल्की नाग तथा जैयन्तिया: मुख्यत: पर्वत वासी हैं। यह लोग सभी चावल से बनाई गई सुरा (-जू) पीकर, कन्द फल मत्स्य मांसादि का भोजन कर अपना जीवन नृत्य-संगीत में निमग्न रहकर व्यतीत करते हैं। यह चावल की खेती "झूम" प्रथा से करते हैं जिसमें वन के एक भाग में वृक्षों को लगा कर उन्हें जला दिया जाता है: उसकी भस्म उर्वरक का कार्य करती है और छितराकर बीज वो दिए जाते हैं। प्रति वर्ष स्थानान्तरण होने से वन सम्पदा की काफी क्षति होती है और अन्ततोगत्वा भूमि के बन्जर होने की भीषण समस्या पूर्णतय: सम्भावित है। कहीं कहीं क्यारियों में भी खेती की जाती है।

आसाम प्रवासिनी इन जन जातियों पर हिन्दू धर्म का प्रभाव स्पष्टरूप से परिलक्षित होता है। परब्रह्म परमेश्वर की परिकल्पना लूशियों के पाथियन तथा गारों के "तातार रूगा" में स्पष्ट झलकती है। यह सर्वशक्तिमान अधीश्वर के रूपमें प्रतिष्ठित हैं। साथ ही बहुदेवेश्वरवाद में विश्वास होने के कारण अन्य देवताओं और प्राकृतिक शक्तियों को भी सम्यक अर्चना प्रदान की जाती है। अग्नि, वायु, वर्षा, तड़ित पृथ्वी, जल सम्पूज्य हैं; इसी से भूत-प्रेत में विश्वास जमाए यह लोग जादू-टोने तन्त्र-मन्त्र के प्रति भी सहज रूप से श्रद्धालू हैं। "कमाख्या में भेड़ा बना लेने" की कथाएं और "जादू-बंगाला" इसी मान्यता को उजागर करते हैं।

सामाजिक परम्परायें:– मछन्दर काल की तिलोत्तमाओं का प्राधान्य आज भी वहाँ है क्योंकि गारो, खासी जातियों में वंश परंपरा मातृ-मूलक है। सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी कनिष्टतम पुत्री होती है। वंश उपनाम भी माता के कुल के अनुसार चलता है। विवाहोपरान्त पुरुष को ससुराल जाकर अपने श्वसुर का "नौकरम" बन कर रहना पड़ता है। इस प्रकार वह पितृ वंश का प्रतिनिध मात्र रहता है और श्वसुर के मरणोपरान्त सास का पति भी उसे बनना पड़ता है। इस प्रकार वह माँ और पुत्री का एक साथ पति होकर श्वसुर वंश में उपजीवी बनकर काल

यापन करता है। इनमें विवाह विच्छेद भी अत्यन्त सरल तथा सुगम है। गारों में साठ रूपए की धनराशि पारंपरिक "दाय" रूप में पति को देनी पड़ती है। खासियों में पति-पत्नी दोनों पाँच पाँच कौड़ियाँ देते हैं। और पति को तलाक के लिए पंचों के सम्मुख इन दस कौड़ियों को पृथ्वी पर बस फेंकना पड़ता है। पितृ प्रधान समुदायों-लूशियों, कुल्किओं और नागाओं—में स्त्रियों को पत्नी धन के रूप में गोधन (मिथान) देय होता है जो तलाक के समय स्त्रीपक्ष को अपने दामाद को लौटाना पड़ता है, यदि दोष नारी का हो। पुरूष के दोषी होने पर उसको "मिथान" क्षति सहन करनी पड़ती है।

नरवलि की प्रथा जन जातियों में तान्त्रिक पद्धति की देन है। गौहाटी के समीपस्थ कामख्या में नरवलि की जाती रही है और सदिया के समीप तामेश्वरी देवी के सम्मुख मिरिस जाति द्वारा दी जाने वाली नर बलि तांत्रिक प्रभाव की धारणा को पुष्टकरती है। कर्नल गौर्डन के कथनानुसार बलि कोपली नदी को दी जाती थी और आज भी वह बलि-शिला जयन्तिया शैल में गरमपानी के समीप कोपिली सरिता के किनारे पर देखी जा सकती है। खासियों, जैमी नागाओं, कूकियों में प्रचलित इस प्रथा के मूल में नागराज-यू-थ्लेन-की गाथा है। इस नाग की महत्ता हिन्दू सर्प देवता शेषनाग के समान ही है। अंतर यह है कि "थ्लेन" दुष्टात्मा है।

यू-थ्लेन की कथा का क्रेन्द्र एक छोटा ग्राम "रङ्गजिरते हैं इस व्यापारिक क्रेन्द्र में देश भर से लोग आते थे। विषम संख्या में आने वाले लोगों में से एक मनुष्य सदैव घट जाता था। दानवारि "यू-ब्ली" से प्रार्थना करने पर दयालु परमेश्वर ने शिलांग के देवता—"ली-शिलोंग से जांच करने को कहा सिमरोह तथा किरसान चौधरियों के साथ खोजबीन करने पर उसको पता चला कि एक नाग एक खोह में बैठा नर भक्षण करता था। सुमनस की आज्ञानुसार जननायक सिमरोह ने एक लोहे की गर्म छड़ नाग के मुँह में घुसेड़ दी। तदनन्तर सभी लोगों को उस नाग को खा डालने की आज्ञा दी गई। भुजंग की काया के टुकड़े कर सबने खा लिये परन्तु एक बुढ़िया ने अपनी पौत्री के लिए फन का एक अंश बचा लिया। घर जाकर उसने उसको चूल्हे के

वृंद्धा नें किसी को कहते सुना कि जीवित रहूँ या मर जाऊँ? —इसका स्पष्ट उत्तर भी सुनाई दिया—"जी उठो, क्योंकि मानव ने मेरे आदेश की अवहेलना की हैं।" भयभीत स्त्री ने जब घड़े में झाँक कर देखा तो उसने साँप के माँस के लोथड़े को राक्षस के रुप में जीवित पाया। नाग ने अपनी समुचित सुश्रुषा की आज्ञा देते हुए उस नारी को सम्पदा तथा समृद्धि प्रदान करने का आश्वासन दिया।

बुढ़िया ने वैसाही किया। एक दिन सर्प ने शिर पर चिह्नांकित एक बकरी की बलि चाही बकरी लाई गई परन्तु नाग को संतोष नहीं हुआ उसे मनुष्य के स्वादिष्ट मांसकी आवश्यकता थी तभी से सर्पराज को मनुष्य की बलि देने की प्रथा प्रारम्भ हुई। सर्पराज की तुष्टि मनुष्य के रक्त, नाखून और केशों से होती थी। अत: खासी, नागा, कूकियों तथा लूशियों में नरमुण्ड प्राप्त करना शौर्य का प्रतीक बन गया। नागराज को अपंग व्यक्ति का रुधिर ग्राह्य नहीं; उसे चाहिए स्वस्थ मनुष्य का शोणित। नागराज "थ्लेन" को रुधिर पान की इच्छा होनें पर गाँव में बीमारी तथा अन्य कष्टों का आगमन होता है इन उत्पातों को दूर करने के लिये नर-बलि देना ही एक मात्र उपाय माना जाता है। फलत: बलि देने वाला हत्यारा एक विशेष प्रकार का आसव पान कर एक लाठी लेकर रात को मनुष्य का शिकार करने निकलता है। इस लाठी में लोहा वर्जित माना जाता है क्योंकि लोहे के त्रिशूल से ही भुजंग की हत्या हुई थी। शिकारी अपने साथ एक चाँदी की कँची, चाँदी का भाला और बाँस का पात्र लेता है। वह हल्दी से पीले किए चावल भी रखता है। वह अपने उपग्राह्य पर मंत्रों से फूके पीले-अक्षत छिड़क कर उसको वशीभृत करता है फिर शिकार (मनुष्य) की हत्या कर कँची से उसके केश काट लेता है और भाले से उसके नासिका-रन्ध्र में से अस्र संकलित करता है।

जहाँ हत्या संभव नहीं हो पाती वहाँ शिकार के बाल तथा वस्त्र को काटकर सर्पराज को भेंटकर सन्तोष कर लिया जाता है। मान्यता यह है कि ऐसा करने पर अथवा उसका द्वार खटखटा देने पर ही वह मनुष्य धीरे धीरे क्षीण होकर अन्तत: मर जाता है। पूजन तथा बलि प्रदान

संशोधन

कृपया पृष्ठ १०३ की प्रथम पंक्ति को पृष्ठ १०२ की प्रथम पंक्ति मान कर पढ़ें।

समीप रख दिया और [illegible] याद नहीं रही । एक दिन करने का समय मध्यरात्रि का होता है । कुटुम्ब का मुखिया ढोल बजाते हुए—'कोक्नी कोक्पा' का जाप करते हुए नागराज थ्लेन का आवाहन करता है । इस प्रार्थना से प्रमुदित होकर नागराज शनै: शनै: आकार वृद्धिकर पूर्ण सर्पराज बन जाता है और भोग स्वीकार करता है । नैवेद्य में समर्पित उपायन का भक्षण पैर से प्रारम्भ होकर शिर की ओर होता है और जब तक नागराज भोजन करते रहते हैं तब तक भोज्य निरन्तर हँसता रहता है । नैवेद्य नागराज द्वारा समाप्त होते ही उपभोग्य की मृत्यु हो जाती है । इस प्रकार का अंध विश्वास आज भी आसाम की आदिम जातियों में पाया जाता है ।

रथ पर्व:— जगन्नाथ पुरी की रथ यात्रा की भाँति ही जैयन्तिया के लोग सप्ताह भर उत्सव मनाने के बाद अंतिम दिन बाँसो से बने और रंग-बिरंगे कागजों से आवृत रथ निकालते हैं जिनको सरोवर में प्रवाहित किया जाता है । एक दूसरे पर जल और कीचड़ उछाला जाता है ।

समाजसेवी तरुण संगठन:— जेमी नागाओं के अविवाहित किशोर-किशोरी आपस में स्वतंत्रता पूर्वक मिलते जुलते हैं । विवाह पूर्व यौन संबंध भी होता हैं । और परिणय बंधन से बाहर जनमे बच्चों को हेय नही समझा जाता, परन्तु दाम्पत्य संबंध हो जाने पर पत्नी को पति के प्रति एकनिष्ठ रहना अनिवार्य है । जन जातियों में अनुशासन, सेवा तथा समाज कल्याण के कार्यो के सम्पादनार्थ तरूणों के संगठन "डेका चाँग्स "बडे महत्वपूर्ण हैं । गारो के "नौक पेट्स: लुशाई के "जौल बक्स" नागाओं के "मोरंग" तथा मिकिरों के "मारों" में युवक-युवतियाँ अपने बड़ों का सम्मान करना सीखते हैं, सामुदायिक सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग लेते हैं तथा कृषि, पथ-निर्माण आदि सामाजिक सेवा के कार्यों में भाग लेते हैं । इन आदिम जातियों में स्त्रियाँ गृह संचालत के साथ साथ अर्थोपार्जन में कंधे से कंधा भिड़ाकर पुरुषों की सहचारिणी बनती हैं । पतिपरायणा तथा कर्त्तव्याभिमुख आदिम जातीय यहाँ की नारी सचमुच अपने नर को सुग्गा बनाकर रखने में सक्षम है ।

ऊषा प्यार अपार ले आयी

● अशोक कुमार पाण्डेय 'अशोक'

दिनराज नहीं हुआ, ऊषा के भाल पे
बिन्दु का सौम्य श्रृंगार है ये।
अटकी लतिका है नहीं तरु पे,
उर में पड़ा सुन्दर हार है ये।
कण ओस नहीं तन पे शुभ शोभित,
स्वेद की मंजु कतार है ये।
नभ लालिमा है नहीं यौवन सिंधु में,
तुंग तरंग का ज्वार है ये॥

* * *

भेंटने को रवि प्रीतम को यह,
पंकजों का उपहार ले आयी।
और पिन्हाने उन्हें सुमनों से,
सुसज्जित सुन्दर हार ले आयी।
मंजुमयी अलि - गुंजन में,
ऊषा यहाँ प्यार अपार ले आयी।
अंग अनंग विहंगम वर्ग की,
चाह भरी चहकार ले आयी॥

मिजोरम

पुरानी लोक कथाओं में वर्णित तोता बना देने वाली कामिनियों के देश कामरूप के ही सुन्दर पवर्तीय भागों में मिजोरम का सुन्दर प्रदेश है। आठ हजार वर्गमील के क्षेत्र में फैला हुआ मिजोरम जनवरी १९७२ में केन्द्र शासित क्षेत्र बना दिया गया है।

मिजोरम गहरी घाटियों और सुन्दर ऊँची-ऊँची चोटियों से भरा है। इसका आकार बहुत कुछ जीभ के समान है। इसकी आबादी लगभग तीन लाख हैं। यहाँ के निवासी मँझोल कद के हृष्ट-पुष्ट और सुन्दर होते हैं। रंग कुछ पीलापन लिये हुए होता है। मिजोरम की स्त्रियाँ अधिक सुन्दर होती हैं।

मीजो कहाँ से आये :-

कहा जाता है कि मीजो लोग पहले वर्मा के घनघोर जंगलों में रहते थे वहाँ से वे अच्छी उपजाऊ जमीन की खोज में असम प्रदेश में आकर रहने लगे। मिजो सभ्यता और भाषा बर्मा की कुकी-चिन ओर चिन जातियों के लोगों की सभ्यता और भाषा से बहुत मिलती है। वैसें कुछ लोगों का कहना यह भी है कि वे पहले चीन की दीवार के पास के किसी क्षेत्र में रहते थे पर विद्वानों ने इस बात को सही नहीं माना है। क्योंकि मिजो और चीनी लोगों में भाषा रहन-सहन और संस्कृति में कहीं से भी कोई समानता दिखाई नहीं पड़ती।

पहले यहां के लोग प्राय: मैदानी इलाकों पर हमले किया करते थे और लूट पाट किया करते थे किन्तु सन् १८३० के लगभग से इन लोगों ने कछार जिले के लोगों के साथ व्यापार शुरू कर दिया और उनसे चावल आदि लेकर बाँस बेंत और जंगल में पैदा होने वाली बहुत सी चीजें देने लगे। मिजो

लोग वैसे बड़े सीधे-सादे होते हैं। वे नहीं चाहते कि कोई उन्हें धोखा दे। यदि कभी मैदान के व्यापारी इन्हें धोखा देते थे तो प्राय: लूटपाट की घटनायें हो जाती थीं।

मिजो मुखिया ही शासक :

भारतीय संविधान लागू होने अर्थात १९५० तक मिजो समाज का शासन पीढ़ी दर पीढ़ी होने वाले मुखिया लोगों द्वारा चलाया जाता था वैसे मुखिया को जनता ही चुनती थी लेकिन सामान्यतया एक मुखिया के मरने के बाद उसका लड़का ही मुखिया बन जाता है। मुखिया गाँव के कुछ समझदार व्यक्तियों के साथ अपना मंत्रिमंडल बनाता था और ज़मीन का बँटवारा, आपसी झगड़े तथा चोरी और कत्ल जैसे अपराधों का वही न्याय करता था किसी मिजो परिवार में बीमारी आने पर भी मुखिया बुलाया जाता था जो मिजो लोगों के अनुसार दुष्ट आत्माओं को भगाकर उनका इलाज करता था।

सामाजिक स्वरूप :-

पूर्वांचल की अन्य जनजातियों के विपरीत यहाँ का समाज नारी प्रधान न होकर पुरुष प्रधान है। यहां स्त्रियों को उत्तराधिकार प्राप्त नहीं हैं। नियमानुसार सारी सम्पति सबसे छोटे पुत्र को मिलती है। यदि पिता चाहे तो कुछ हिस्सा दूसरे पुत्रों में भी बाँट सकता है। पुत्र न होने पर सम्पत्ति सबसे निकट के पुरुस सम्बन्धी को मिल जाती है पर पुत्री को नहीं मिल सकती। वैसे औरतों का काम घर में रसोई बनाना तथा खेतों में काम करने तक ही सीमित है, पर वे सच्चे अर्थ में पति के हृदय पर शासन करती हैं। इसलिये गाँव के बड़े-बड़े कामों तक में मर्द स्त्रियों से सलाह लेते हैं। मिजो समाज में विवाह के समय पत्नी का मूल्य चुकाने की प्रथा है जो उसकी खरीदारी नहीं है अपितु मूल्य इसलिये चुकाया जाता है कि वैवाहिक जीवन सुखी हो और तलाक के लिये कुछ अंकुश रहे। वैसे मिजो समाज में तलाक बड़ा सरल है। केवल 'तलाक' कह देने से ही पत्नी से पति को छुटकारा मिल सकता है केवल उसे पत्नी को मूल्य के रूप में दिया हुआ धन छोड़ना पड़ता है। इसी प्रकार पत्नी भी पति से पाया हुआ अपना मूल्य पति को वापस लौटा कर छुटकारा पा सकती है।

मिजो आधुनिक परिवेश में :-

अंग्रेजी शासन काल से ईसाई मिशनरियों ने मिजो लोगों में अपना धर्म प्रचार आरम्भ कर दिया था। फलत: उनकी पुरानी संस्कृति का धीरे-धीरे लोप होने लगा। साथ ही मिशनरियों ने उन्हें अपने ढंग से पढ़ाना-लिखाना भी आरम्भ किया जिससे वे अपनी पुरानी संस्कृति को नापसंद करने लगे। मिजो समाज की एक विशेष संस्था 'ज़ाबलक', जहाँ तरुण-तरुणियाँ एक साथ रहकर, अनुशासन, नाच-गाना, शिकार और अन्य सामाजिक कार्य कलापों की शिक्षा प्राप्त करते थे, समाप्त हो गयी।

किन्तु मिशनरियों के प्रभाव से मिजो लोगों को अपना जीवन आज के युग के अनुसार ढालने में अवश्य सहायता मिली। रहन-सहन, व्यापार, खेती आदि में उन्होंने नए ढंग अप-नाए और अब राजनीतिक दृष्टि से भी वे अधिक जागरूक हो गये हैं। फलस्वरूप असम प्रदेश के अन्तराल का यह भाग मिजोरम अब केन्द्र शासित एक स्वतंत्र इकाई है।

ऐजल यहाँ का प्रमुख नगर है और शासन के सभी प्रमुख कार्यालय यहाँ पर हैं। पर्वतों की गोद में बसा हुआ यह छोटा सा नगर अपने प्राकृतिक सौंदर्य तथा भोले-भाले मुखड़ों वाले निवासियों के विशेष रूप से सुन्दर स्त्रियों और गोल-मटोल सुन्दर भोले बच्चों के कारण अत्यन्त आकर्षक है।

आवागमन के साधनों की अभी बहुत कठिनाई है जिसमें धीरे-धीरे सुधार हो रहा है। पर्यटकों के लिये डाक बंगले और होटल मिल जाते हैं। खाने-पीने की वस्तुयें मिल जाती हैं पर मैदान में रहने वाले लोगों को अवश्य ही कुछ असुविधा होती है।

खजुराहो और उसकी कला

— अम्बिका प्रसाद दिव्य

खजुराहो मध्य प्रदेश के अन्तर्गत छतरपुर जिले का एक महत्वपूर्ण स्थान है। यह छोटा सा ग्राम किसी समय चंदेल राजाओं की राजधानी था। इसमें उनके समय के कुछ खण्डहर आज भी खड़े हैं। इन खण्डहरों को देख कर चन्देलों की समृद्धि तथा वैभव के जैसे विशाल चित्र हमारी कल्पना में आते हैं वैसे आज बुन्देलखण्ड में कहीं भी देखने को नहीं मिलते।

चन्देलों का राज्य, जैसा कि प्राचीन शिला लेखों से पता चलता है, नवीं शताब्दी से तेरहवी शताब्दी तक रहा। इस वंश में एक से एक प्रतापी राजा हुए। इनमें जयशक्ति, हर्ष, यशोवर्मन, धंग, गंड तथा विद्याधर के नाम विशेष उल्लेखनीय है। इनके समय में खजुराहो की विशेष उन्नति हुई।

जयशक्ति और विजयशक्ति दो भाई थे। महोबा में जो एक शिलालेख मिला है उसमें इन्हें जेजा और वेजा करके लिखा हैं। जयशक्ति को जेज्जक और विजयशक्ति को विज्जक भी कहा गया है। उपरोक्त शिलालेख से ज्ञात होता है कि जेज्जक के कारण ही इस प्रान्त का, जिसे आज बुन्देलण्ड कहते हैं, जेजाक-भुक्ति नाम पड़ा। यही नाम आगे चलकर जुझौत मात्र रह गया।

इन शासको की देखरेख में खजुराहो ने जो गौरव तथा वैभव प्राप्त किया वह बुन्दलेखण्ड की किसी भी रियासत को कभी भी प्राप्त नहीं हुआ था। प्राचीन शिला लेखों में इसका नाम खंजूरपुर या खंजूरवाहक मिलता है। कहा जाता है कि इसके सिंह द्वार पर खजूर के दो स्वर्णवृक्ष बनाये गये थे और इसी कारण इसका नाम खजूरपुर

या खजूरवाहक पड़ा था। यह भी अनुमान किया जाता है कि यहां खजूर वृक्ष की पैदावार अधिक रही होगी जैसा कि अब भी हैं।

इसका प्राचीनतम उल्लेख ग्रीक विद्वान टाल्मी के भारत के भूगोल वर्णन में मिलता है। उसने बुन्देलखण्ड का वर्णन सुन्दरावती के नाम से किया है और टेमसिस' कुपीनिया, यमप्लेटरा तथा नवुनन्दनगर इत्यादि नगरों का उल्लेख किया है। टेमसिस से कालिंजर का बोध होता है। यह बुन्देलखण्ड के अन्तर्गत ही है। पश्चात् चीनी यात्री हुएनसांग ने भी अपने भारत यात्रा वर्णन में इसका उल्लेख किया है। हुएनसांग ने ६३०-४३ ई. के बीच भारत का भ्रमण किया था उसने बुन्देलखण्ड का जिसे उस समय जैजाकभुक्ति कहते थे, चीचेट करके वर्णन किया है और उसकी राजधानी खजुराहो बतलाई है। हुएनसांग के पश्चात् खजुराहो का उल्लेख महमूद गजनवी के साथी आबूरिहा के यात्रा वर्णन में मिलता है आबूरिहा यहां सन १०२२ में आया था। उसने खजुराहो का नाम खजुराहा करके लिखा है और उसे जुझौत की राजधानी लिखा है। आबूरिहा के पश्चात् सन १३१५ के लगभग इब्नबतूता यहां आया उसने खजुराहो का नाम खजुरा लिखा है। इन विदेशी यात्रिओं के उल्लेखों के अतिरिक्त चन्देलवंश के राजकवि चन्द के महोबा खण्ड नामक काव्य-ग्रथ में भी खजुराहो का अच्छा वर्णन मिलता है। स्मरण रहे कि यह चन्द पृथ्वी राज रासो के लेखक चन्दबरदाई से पृथक थे।

कहा जाता है कि चन्देलों के पूर्वपुरुष चन्द्रब्रम्ह का जन्म खजुराहो ही में हुआ था। चन्द्रब्रम्ह की मां काशी से आई थी और उन्होने कर्णवती अर्थात केन नदी के किनारे जो कि खजुराहो से कुछ ही दूर से निकली है तप किया था। तप

के फलस्वरूप चन्द्रब्रम्ह का जन्म हुआ। जब चन्द्रब्रम्ह सोलह वर्ष के हुए तो इनकी मां ने मानडव यज्ञ कराया। इस यज्ञ के लिये ८४ वेदियाँ बनाई गई थी और कुए में भरकर रहट के द्वारा वेदियों तक निरन्तर घी पहुंचाया गया। घी पहुंचाने के लिये पत्थर की जो पर-नालियां बनाई गई थीं वे आज भी खजुराहो में पड़ी हैं।

इन वेदियों पर बाद में ८४ विशालकाय मन्दिर बनवाये गये। इन मन्दिरों में से कुछ अब भी खड़े हुये हैं। खजुराहो के खण्डहरों में यही विशेष हैं और इनके कारण ही खजुराहो आज भी सुप्रख्यात है और हमारे लिए दर्शन तथा अध्ययन की चीज बना हुआ है। इन मन्दिरों को खजुराहो का बोलता हुआ इतिहास कहे तो अत्युक्ति नहीं होगी। पत्थर में इनके समय के रहन सहन, आचार विचार, रीति रिवाज, नैतिक तथा धार्मिक जीवन सभी के उभरे हुए चित्र, दूर से ही बोलते हुए से दिखाई पड़ते हैं। ये मन्दिर कितने विशाल, कितने भव्य तथा कलापूर्ण हैं, कहते नहीं बनता।

खेद है- चोरासी मन्दिरों में से केवल तीस पैंतीस मन्दिर ही अब शेष रह गये हैं। अन्य या तो काल की गति से स्वयं ही या मुसलमान शासकों के प्रहारों से धराशायी हो गये। आज जब खजुराहो में ये खण्डहर हमको आश्चर्य में डालते है तो जब खजुराहो अपनी पूर्ण यौवनावस्था में रहा होगा उस समय उसे देख कर हमारे क्या विचार होते, इसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते। ये मन्दिर भुवनेश्वर के सुप्रसिद्ध मन्दिरों की इन्डोआर्यन पद्धति पर बने हैं और एक एक मन्दिर में छोटी बड़ी इतनी अधिक मूर्तियाँ हैं कि उनका गिनना भी कठिन है। ये सभी मन्दिर आकृति और बनावट में प्राय: एकसे ही हैं और एक ही मत के प्रतीक से ज्ञात होते हैं। कई मन्दिर इनमें से पन्चायतन शैली के हैं और पूर्ण-तया वैदिक शिल्पशास्त्र के अनुकूल हैं।

समस्त मन्दिर तीन समूहों में विभक्त किये जा सकते हैं। पश्चिमी समूह, पूर्वी तथ दक्षिणी समूह विशेष दर्शनीय है। इनमे नीचे लिखे मन्दिर विशेष उल्लेखनीय हैं–

चौसठ योगनियों का मन्दिर

यह मन्दिर शिवसागर नाम की झील के उत्तर पूर्व में एक ऊँचे टीले

पर स्थित है। मन्दिर तो धराशायी हो चुका है, अब उसका भग्नावशेष मात्र है। इसमें कहा जाता है कि भगवती चण्डिका देवी की तथा उनकी दासी ६४ योगनियों की विशाल मूर्तियां पृथक पृथक खानो में स्थापित थी परन्तु अब वे सब की सब लापता हैं। केवल खाने खाली पड़े हुए दिखलाई देते हैं। हां एक बड़े खाने में तीन मूर्तियां पड़ी हैं उनसे यह बात सिद्ध होती है कि वह मन्दिर चौसठ योगनियों का ही था। इन मूर्तियों में से एक महिष-मर्दिनी की है, दूसरी महेश्वरी तथा तीसरी ब्रम्हाणी की। कहा जाता है खजुराहो के मन्दिरों में यह मन्दिर सबसे अधिक प्राचीन है।

कन्दरिया महादेव मन्दिरः—

यह मन्दिर चौसठ योगनियों के मन्दिर से कुछ ही दूरी पर उत्तर की ओर स्थित है। यह खजुराहो के सभी मन्दिरों से विशाल और भव्य है। यह ईसा की दसवीं शती का बना हुआ है। यह पन्चायतन शैली का था, परन्तु चारों कोने के सहायक मन्दिरों का अब नामो निशान भी नहीं यह बाहर भीतर देवी देवताओं तथा अप्सराओं की मूर्तियों से आच्छादित है।

देवी जगदम्बा का मन्दिर

यह भी उपरोक्त मन्दिर के समीप ही है और उसी शैली का बना हुआ था, परन्तु इसके भी सहायक मन्दिरों का अब पता नहीं। इसकी सजावट भी कन्दरिया मन्दिर के समान ही कलापूर्ण तथा दर्शनीय है। यह मन्दिर पहले विष्णु भगवान की स्थापना के लिए बनवाया गया था, परन्तु आज विष्णु के स्थान पर श्री लक्ष्मी ज़ी की मूर्ति स्थापित है जिसे लोग अज्ञानवश काली अथवा देवी जगदम्बा के नाम से पूजते हैं।

चित्र गुप्त का मन्दिरः—

यह जगदम्बा के मन्दिर से कुछ ही दूरी पर उत्तर की ओर स्थित है। आकार प्रकार में भी उपरोक्त मन्दिर के समान ही है। इसके गर्भ मन्दिर में सूर्य की एक पाँच फुट ऊची मूर्ति स्थापित है।

विश्वनाथ का मन्दिरः—

यह मन्दिर भी चित्र गुप्त के मन्दिर के समीप ही है। यद्यपि यह कन्दरिया मन्दिर से कुछ छोटा है, परन्तु रूपरेखा में उसी के समान है। यह भी पन्चायतन शैली का

बना हुआ था परन्तु सहायक मन्दिरों में से दो लापता है। इसकी सजावट भी अन्य मन्दिरों के समान ही कलापूर्ण है। इसके मण्डप के अन्दर दो शिलालेख जड़े हुए हैं। एक विक्रम सम्बत १०५६ का है, दूसरा १०५८ का। १०५६ के शिलालेख में नन्नुक से धग तक चन्देल राजाओं की नामावली दी गई है। इसी लेख से पता चलता है कि यह मन्दिर धग का बनवाया हुआ था और इसमें हीरे मणि का शिवलिंग स्थापित किया गया था परन्तु अब शिवलिंग का पता नहीं।

लक्ष्मण जी का मन्दिर:—

यह भी समीप ही है और आकार प्रकार में विश्वनाथ के मन्दिर के समान ही है। यह भी पंचायत शैली का बना हुआ है। सौभाग्य से इसके चारों सहायक मन्दिर अब भी खड़े हैं। इसकी मूर्तियां विशेष सुन्दर और कलापूर्ण हैं। इसके मण्डप के अन्दर भी एक शिलालेख पड़ा है जिससे पता चलता है कि यह धग के पिता यशोवर्मन का बनवाया हुआ था। इसके अन्दर विष्णू की जो मूर्ति स्थापित है वह कन्नौज के राजा देवपाल से प्राप्त की गई थी जिसे यशोवर्मन के पिता ने हराया था

मलंगेश्वर का मन्दिर:—

यह लक्ष्मण जी के मन्दिर के पार्श्व में दक्षिण की ओर स्थित है। इमर्गे एक विशाल शिवलिंग स्थापित है जिसकी आज भी बड़ी श्रद्धा और भक्ति से पूजा होती है। इस मन्दिर में कला की कोई विशेष चीज दर्शनीय नहीं। इस संमूह में ओर भी छोटे छोटे मन्दिर हैं।

पूर्वी समूह खजुराहो ग्राम के अति सन्निकट है, इसमें तीन वैदिक मन्दिर हैं तथा तीन जैन मन्दिर वैदिक मन्दिरो में ब्रम्हा, वामन तथा जावारि के मन्दिर हैं। इसके अतिरिक्त हनुमान जी की एक बहुत विशाल मूर्ति है। इस मूर्ति की पीढ़ी के नीचे एक छोटा सा लेख है जिसमें हर्ष सम्वत् ३१६ पड़ा है जो ९२२ ई के बराबर होता है। खजुराहो के अब तक मिले हुए शिलालेखों में यह सबसे प्राचीन शिलालेख है। सल्लक्षणवर्मन ने जिसका कि नाम चन्देल वंशावली में दिया जा चुका है पहली ही बार अपने ताबे के द्रव्यों में हनुमान जी की मूर्ति अंकित कराई थी। इससे पहले हनुमान जी की कोई स्वतन्त्र मूर्ति भारतीय कला में नहीं मिलती। अतः हनुमान जी की मूर्ति के प्रचार का श्रेय चन्देलोंको ही है।

ब्रम्हा का मन्दिरः—

यह मन्दिर खजुराहो सागर के तीर पर स्थित है तथा ९वी और १० वी शताब्दी का बना हुआ है। इसमें जो मूर्ति स्थापित हैं वह शिव की है परन्तु लोगों ने उसे ब्रम्हा की मूर्ति समझ रक्खा है। इसकी भी कला उच्च कोटि की है।

वांमन मन्दिरः—

यह ब्रम्हा के मन्दिर से एक फर्लांग उत्तर पूर्व की ओर बना हुआ है। यह रूपरेखा में जगदम्बा तथा चित्रगुप्त के मन्दिर के समान है परन्तु उन दोनों से कहीं अधिक विशाल है। उसके अन्दर वामन भगवान की चार फीट आठ इंच ऊँची एक सुन्दर मूर्ति स्थापित है।

जावारि मन्दिर:—

यह खजुराहो ग्राम के समीप खेतों के बीच में स्थित है। अन्य मन्दिरों की अपेक्षा यद्यपि कुछ छोटा है परन्तु कला कौशल में कम नहीं। इसके अन्दर विष्णु भगवान की चतुर्भुजी मूर्ति स्थापित है। यह १० वीं शताब्दी का बना हुआ है।

जैन मन्दिरों में घण्टाई, आदिनाथ तथा पारसनाथ के मन्दिर हैं। पारसनाथ सबसे अधिक विशाल है।

दूल्हा देव का मन्दिर:—

खजुराहो के मन्दिरों में यह दक्षिणी समूह का मन्दिर सबसे अधिक सुन्दर माना जाता है। इसे नीलकंठ का मन्दिर भी कहते हैं। यह दूल्हा देव का मन्दिर क्यों कहलाया? कहा जाता है कि एक बारात इसके समीप से निकल रही थी। अचानक ही दूल्हा पालकी पर से गिर पड़ा और मर गया। वह भूत हुआ और उसी समय से यह मन्दिर दूल्हादेव का मन्दिर कहा जाने लगा।

जतकारी का मन्दिर:—

यह मन्दिर जतकारी ग्राम से करीब ३ फर्लांग की दूरी पर दक्षिण की ओर है। इसमें विष्णु की एक विशाल मूर्ति जो ९ फीट की ऊँची है, स्थापित है। इन मन्दिरों के अतिरिक्त और भी कई छोटे-छोटे मन्दिर तथा खंडहर पड़े हैं जिनमें प्रत्येक के पीछे उस भव्य अतीत युग का महत्वपूर्ण इतिहास छिपा हुआ है।

इन मन्दिरों के शिल्प और स्थापत्य कला में जीवन की अनेक झाकियों के साथ श्रंगार को ही विशेष स्थान दिया गया है और श्रंगार की मूर्तियां ही हमारी आंख को सबसे पहले आकृष्ट करती हैं। इनमें कोक की अनेक कलाओं का खुल कर प्रदर्शन किया गया है। श्लील और अश्लील की उस समय क्या परिभाषा रही होगी, कुछ कहा नहीं जा सकता। कुछ इसे वाम मार्गियों का खेल बतलाते हैं। जो भी हो कारीगरी आज हमारे कुतूहल तथा अध्ययन की चीज बनी हुई है।

खजुराहो की स्त्रियां अपार सुन्दरी, अचल योवना, श्रंगारप्रिया तथा अनंगोपासिका हैं। वे न क्षीणकाय हैं न स्थूल। उनकी शरीर रचना स्वस्थ और सुडौल है। उनके अंग प्रत्यंग एक विशेष सांचे में ढले हुए से प्रतीत होते हैं। वे एक निश्चित शास्त्र के अनुकूल बनाये गये हैं, प्रकृति जैसी अनियमितता

उनमें नहीं। उनकी भृकुटियां धनुषाकार कानों तक खिची हुई रेखायें मात्र हैं। उनकी आँखो में यौवन, अनंग और कटाक्ष हैं। वे रूप गर्विता के समान सदा अपने ही रूप को देखती और सम्भालती हुई सी प्रतीत होती हैं। इनकी अन्तर्तरंगे श्रृंगार के द्वारा किसी नैसर्गिक आनन्द की ओर उन्मुख है। उनकी मुद्राओं तथा भावभंगिमाओं में कर्कशता, कठोरता तथा क्रोध को कहीं भी स्थान नहीं है। स्त्रियोचित कोमल लाज्जा अवश्य उनके मुखों पर दिखती है और यही खजुराहो के कारीगर के हृदय में स्त्रीत्व का सम्मान है।

रूप और श्रृंगार के साथ खजुराहो की स्त्रियों की भावभंगिमायें तथा अंग प्रत्यग की विचित्र मुद्रायें देखते ही बनती हैं। स्त्री के खड़े होने, बैठने, चलने फिरने में एक विशेष सौन्दर्य की योजना है। सीने और नितम्ब में खजुराहो का कलाकार सौन्दर्य का विशेष अनुभव करता है। प्रत्येक मुद्रा में सीने और नितम्बों को उसने प्रधानता दी है। नितम्ब भाग को सामने लाने के लिए उसने शरीर को इतना मरोड़ दिया है कि कहीं कहीं पर वह प्रकृति के भी विपरीत हो गया है। कटि इतनी कोमल और लचीली है कि वह यौवन भार को सम्भाल ही नहीं सकती।

श्रृंगार मूर्तियों के अतिरिक्त पूजा, शिकार, मल्लयुद्ध, हाथियों के युद्ध, फौज की यात्रा इत्यादि अनेक प्रकार की जीवन की घटनाओं को व्यक्त करने वाली मूर्तियाँ भी खजुराहो में दृष्टिगोचर होती हैं। इससे ज्ञात होता है कि खजुराहो के कलाकार का उद्देश्य जीवन के सभी अंगो पर प्रकाश डालने का था। उसकी दृष्टि जीवन की सम्पूर्णता की ओर थी। एक जगह तो पत्थर ढोते हुये मजदूरों तक का चित्रांकन किया गया है। इस प्रकार खजुराहो के मन्दिर अपने समय की एक इन्साइक्लोपीडिया के स्वरूप हैं।

कृष्ण लीला भूमि :

मथुरा-वृन्दावन

ब्रज भूमि को श्री कृष्ण की जन्म भूमि होने का गौरव प्राप्त है। इस प्रदेश पर लगभग ४०० वर्ष ई० पू० से मगध साम्राज्य के अन्तर्गत नन्द, मौर्य, शुंग, शक तथा कुषाण वंश के अधीश्वरों का शासन रहा जिनके समय में यहां अनेक मंदिरों भवनों का निर्माण हुआ। शक-कुषाण काल में (लगभग १०० ई० पू० से २०० ईसवी तक) मथुरा भारत का बहुत बड़ा कला केन्द्र रहा है।

मुस्लिम शासन काल में मथुरा भक्ति का केन्द्र बना और अनेक भक्त कवियों और गायकों का यहाँ प्रादुर्भाव हुआ। सूरदास, हरिदास, नन्ददास आदि भक्त साधकों ने ब्रज भूमि को अपनी वाणी से पावन किया।

वर्तमान में मथुरा अपने पावन मंदिरों एवं प्राचीन कलाकृतियों के
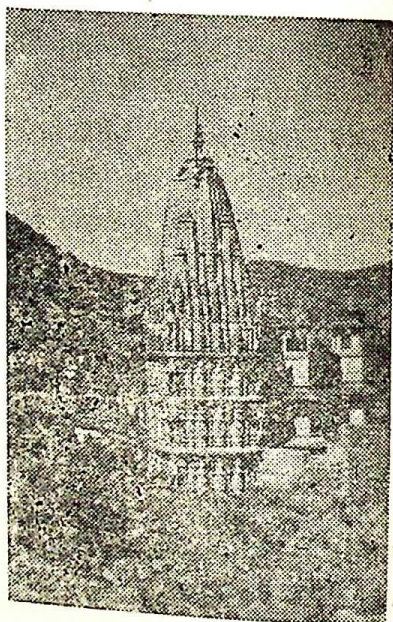
लिये दूर दूर से हजारों यात्रियों को आकर्षित करता है। यहाँ के कुछ प्रमुख दर्शनीय स्थल हैं:—

द्वारिकाधीश मंदिर :—

यह मंदिर नगर के मध्य में

स्थित है और यहाँ का प्राचीनतम तथा प्रमुख मंदिर है। कहते हैं यहीं पर आकर सूरदास जी भगवान कृष्ण की मूर्ति के सामने बैठकर अपने पद गाया करते थे। बाद को सन् १८१४ में ग्वालियर के सेठ गोकुलदास जी ने यहाँ पर एक भव्य मंदिर का निर्माण करा दिया। श्रावण झूला के अवसर पर यहां की झाँकी देखने योग्य होती है और लाखों भक्तगण यहां दूर-दूर से दर्शनार्थ आते हैं।

विश्राम घाट :—

यमुना के तट पर यह अत्यन्त पवित्र प्राचीन घाट है। कहा जाता है कंस को मारने के पश्चात श्री कृष्ण ने इसी स्थान पर विश्राम किया था। तभी से यह विश्राम घाट कहलाता है। यहाँ द्वितीया के पर्व (भाई दूज) पर यहाँ सहस्रों लोग स्नान करते हैं और लोक श्रुति के अनुसार इस दिन जो भाई-बहन यहां साथ-साथ स्नान करते हैं वह यम यातना से मुक्त हो जाते हैं। रात्रि के समय विश्राम घाट पर यमुना की आरती का दृश्य बड़ा ही सुन्दर होता है।

श्री कृष्ण जन्म भूमि :—

यह मथुरा का सबसे पवित्र स्थान है जो कटरा केशवदेव में स्थित है। यहीं पर कंस की कारागार में श्रीकृष्ण का जन्म हुआ था। यहाँ कृष्ण का एक भव्य मंदिर था जिसे १०१७ ई० महमूद गजनवी ने नष्ट कर दिया था। उसके बाद कई बार उस मंदिर का पुनर्निर्माण किया गया पर फीरोज तुगलक और सिकन्दर लोदी जैसे धर्मांध मुस्लिम शासकों ने उसे बार-बार नष्ट कर दिया। ओरछा नरेश महाराजा वीर सिंह देव बुन्देला ने पुनः उस मंदिर का बड़ी लागत लगाकर निर्माण कराया, परन्तु उसे भी १६५९ में औरंगजेब ने तुड़वाकर उसके स्थान पर एक मस्जिद बनवा दी जो आज भी मौजूद है।

बिड़ला मंदिर :—

वृन्दावन जाने वाले मार्ग पर मथुरा से कुछ दूर हट कर बिड़ला परिवार द्वारा बनवाया हुआ गीता मंदिर आधुनिक स्थापत्य कला का सुन्दर नमूना है। यह भव्य विशाल मंदिर दूर से ही लोगों को आकृष्ट करता है। गीता स्तम्भ पर सम्पूर्ण गीता खोदी गयी है। हाथ में गीता लिये हुये श्री कृष्ण की बड़ी ही दिव्य मूर्ति यहां है।

वृन्दावन

मथुरा से आठ मील उत्तर की ओर वृन्दावन छोटा पर साफ-सुथरा नगर है। यह नगर तथा इसके आस-पास के क्षेत्र श्री कृष्ण के बाल्य काल का लीला-क्षेत्र रहा है। यहां पर आज भी कई प्राचीन मंदिर दर्शनीय हैं।

गोविन्द देव मंदिर :—

इस मंदिर का निर्माण जयपुर के राजा मानसिंह ने सन १५९० में कराया था। यह सात मंजिलों का लाल पत्थर का बड़ा ही सुन्दर मंदिर था। बाद को औरंगजेब ने इसे तुड़वा दिया और इसकी ऊपरी चार मंजिलें बिल्कुल बरबाद कर दीं। नीचे की जो तीन मंजिलें भग्न दशा में बची हैं उन्हें देखने से ही अनुमान होता है कि यह मंदिर अपनी पूर्वावस्था में कितना सुन्दर और विशाल रहा होगा।

रंगजी का मंदिर :—

इसे सेठ लक्ष्मीचन्द्र और राधाकृष्ण ने सन १८५१ में बनवाया था। दक्षिणी भारत की शैली पर बना हुआ यह बहुत विशाल और सुन्दर मंदिर है। इसके चारों ओर परकोटा है। बीच में ५० फुट ऊंचा एक स्वर्ण स्तम्भ है।

शाहजी का मंदिर :—

इस मंदिर को लखनऊ के सेठ कुन्दन लाल ने १८७६ में बनवाया था। आधुनिक शैली पर बना हुआ संगमरमर का यह अत्यन्त सुन्दर मंदिर है। इसमें सामने की ओर संगमरमर के एक पत्थर से बने हुये बड़े कलात्मक विशाल स्तम्भ दर्शनीय हैं।

निधुबन :—

तानसेन तथा बैजूबावरा के गुरू प्रख्यात संगीतज्ञ स्वामी हरीदास की यहाँ समाधि है।

गोकुल

मथुरा से ६ मील दूर यमुना के पार गोकुल आज एक छोटा सा कस्बा है। किसी समय यह नन्दराय की राजधानी था और श्री कृष्ण का यहां लालन-पालन हुआ था। नन्द का महल तथा गोकुलनाथ मंदिर यहां दर्शनीय हैं।

—: नन्दग्राम

मथुरा से ३१ मील दूर है।

श्री कृष्ण के पालक पिता नन्द यहाँ रहा करते थे। यहाँ नन्दबाबा का यमुना के पास एक सुन्दर मंदिर है।

बरसाना

मथुरा से २६ मील दूर बरसाना है। यहाँ श्री राधा जी रहती थीं। राधाकृष्ण की प्रेम लीलाओं का यह पावन क्षेत्र आज भी अपने प्राकृतिक वैभव को संजोये राधा कृष्ण की लीलाओं से संबंधित मंदिरों और भवनों के कारण भक्तों को आकृष्ट करता है। श्री लाड़ली जी का मंदिर, मोर कुटी, जयपुर मंदिर, मान मंदिर आदि मंदिर दर्शनीय हैं।

गोवर्धन

श्री कृष्ण के गोवर्धन धारण की प्रसिद्ध कथा का क्षेत्र गोवर्धन तीर्थयात्रियों का पवित्र स्थान है। यह पर्वत सात मील लम्बा है। हरदेव जी का यहाँ प्राचीन मंदिर है। राजा मानसिंह द्वारा बनवाई हुई एक झील जिसे मानसी गंगा कहते हैं अपने चारों ओर के प्राकृतिक सौंदर्य के कारण यात्रियों को बरबस अपनी ओर आकृष्ट करती है। इसके अतिरिक्त कुसुम सरोवर तथा राधा कुंड में भी बड़े कलात्मक भव्य मंदिर बने हैं।

SERVING THE
COUNTRY AND ITS
INTERNATIONAL TRADE
S.C.I.
CARGO LINER SERVICES TO ALL THE
FIVE CONTINENTS
PASSENGER-CUM-CARGO SERVICE TO:
EAST AFRICA ■ MALAYSIA ■ SINGAPORE
■ CEYLON ■ ANDAMAN ISLANDS
COLLIERS AND TANKERS ON INDIAN COAST
TANKERS AND BULK CARRIERS ON OVERSEAS TRADES
The Shipping Corporation Of India Ltd.
STEELCRETE HOUSE, DINSHAW WACHA ROAD, BOMBAY-120
Branches at Calcutta & Mombasa. Agents at all principal ports of the world.
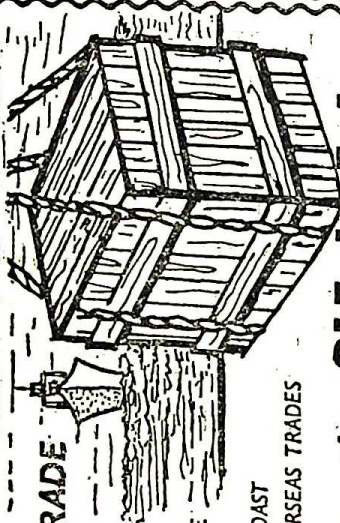
वाराणसी

अत्यन्त प्राचीन काल से वाराणसी भारतीयों के लिये आस्था और पवित्रता, ज्ञान और धर्म का केन्द्र रहा है। यह हिन्दुओंके प्रमुख तीर्थों में से है तथा संसार के प्राचीनतम नगरों में से एक है। वेदों में भी काशी (वाराणसी) नगरी का उल्लेख मिलता है। बोद्ध धर्मावलम्बियों का भी यह अत्यन्त पावन स्थान है। यहां से लगभग पांच मील दूर स्थित सारनाथ में गौतम बुद्ध ने अपना पहला प्रवचन किया था। वाराणसी शैवमतावलम्बियों का केन्द्र रहा है। भगवान शंकर इस नगरी के अधिष्ठाता के रूप में पूज्य हैं, वाराणसी के राजा की शंकर के प्रतिनिधि के रूप में प्रतिष्ठा रही है और आज भी महाराजा का स्वागत ,हर-हर-महादेव' के घोष से किया जाता है।

गंगा के किनारे बने हुये यहाँ के घाटों की अपनी एक निराली शोभा है और प्रत्येक घाट का ऐतिहासिक और धार्मिक महत्व है। दशाश्वमेध, मणिकर्णिका, हरिश्चन्द्र, अस्सी आदि प्रमुख एवं पावन घाट हैं। राजा-महाराजाओं तथा सम्पन्न भक्तों द्वारा बनवाये हुये प्राचीन घाट अपने विशाल महलों और मंदिरों के कारण आकर्षण के प्रमुख केन्द्र हैं और शताब्दियों से भक्तों तथा पर्यटकों को समान रूप से आकर्षित करते रहे हैं।

वाराणसी अत्यन्त प्राचीनकाल से विद्वानों और संस्कृत के आचार्यों की नगरी रही है। इस नगर को तीन-तीन विश्वविद्यालयों का नगर होने का गौरव प्राप्त है। 'भारत कला भवन' नाम से एक बड़ी कला वीथी भी यहां है जिसमें भारतीय चित्रकला की सभी शैलियों के प्रतिनिधि चित्रों का बड़ा संग्रह है।

यहाँ के रेशमी वस्त्र तथा जरी के काम की साड़ियाँ देश-विदेशों में प्रसिद्ध हैं।

यहाँ के पावन घाटों के अतिरिक्त अन्य पवित्र एवं महत्वपूर्ण स्थल मिम्न हैं :—

विश्वनाथ मन्दिर:—

वाराणसी के मंदिरों में सबसे पावन एवं प्रमुख मंदिर है। विश्वनाथ मंदिर की ख्याति २००० वर्ष से भी अधिक से पूरे भारत में रही हैं। प्राचीन मंदिर को मुस्लिम शासकों ने कई बार नष्ट-भ्रष्ट किया और बाद को औरंगजेब ने उसके स्थान पर मंदिर के ही ईंट पत्थर से एक मस्जिद बनवा दी जो आज भी वर्तमान है। वर्तमान विश्वनाथ मंदिर को इंदौर की महारानी अहिल्याबाई ने अट्ठारहवीं शताब्दी में बनवाया। बाद को पंजाब के सिख नरेश महाराजा रणजीत सिंह ने मंदिर के शिखर भाग को सोने का मुलम्मा किये हुये ताँबे के पत्र से मढ़वा दिया।

विश्वनाथ मंदिर के निकट ही अन्नपूर्णा देवी का प्राचीन और पवित्र मंदिर है। इससे कुछ आगे बढ़ते ही यहाँ की प्रसिद्ध बाजार है जो साधारणतया विश्वनाथ की गली के नाम से प्रसिद्ध है और इसमें सिंदूर और प्रसाद की सामग्री से लेकर रेशमी साड़ियों और आभूषण तक की दूकाने हैं।

संकटमोचन हनुमान मन्दिर:-

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के निकट प्राकृतिक लता-द्रुमों के मध्य बड़े ही शान्त और सुखद वातावरण में यह मंदिर है। इसमें हनुमान जी की जो मूर्ति है उसके संबंध में कहा जाता है कि उसे भक्त कवि तुलसीदास ने स्थापित किया था।

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय:-

यह भारत का प्रमुख विश्वविद्यालय है। इसकी स्थापना पं० मदन मोहन मालवीय ने की थी। ११०० एकड़ भूमि पर बने हुये इस विशाल विश्वविद्यालय में लगभग ८००० विद्यार्थी पढ़ते हैं। यहां शिक्षा के वर्तमान सभी विषयों की शिक्षा दी जाती है और अपने अच्छे स्तर के कारण यहां सहस्त्रों की संख्या में विदेशी छात्र भी अध्ययन करने आते हैं।

नया विश्वनाथ मन्दिर:—

यह बिड़ला परिवार द्वारा बनवाया हुआ आधुनिक शैली का बड़ा ही भव्य मंदिर है। इसमें संगमरमर पर अच्छी कलाकृतियाँ

हैं तथा धर्म ग्रन्थों की सूक्तियां खुदी हुई हैं।

सारनाथ:—

यहाँ अब प्राचीन बौद्ध विहार के भग्नाशेष मात्र ही रह गये हैं जिन्हें देखने से इस स्थान के प्राचीन वैभव का अनुमान होता है। सम्राट अशोक द्वारा बनवाया हुआ १०० फुट ऊँचा स्तूप जिस पर कभी बौद्ध धर्म सूक्तियाँ खुदी हुई थीं, आज भी खड़ा है। यहीं पर अशोक का वह प्रसिद्ध धर्म चक्र भी था जिसके ऊपरी खण्ड पर बने सिंहों की मूर्ति और चक्र को हमारे राष्ट्रीय चिह्न रूप में प्रयोग किया जाता है। यह स्तूप भग्न दशा में यहाँ है। इस स्तम्भ की चर्चा चीनी यात्री ह्वेनसाँग ने अपने यात्रा विवरण में इस प्रकार की है—'यह वैदूर्य के समान चिकना और शीशे के समान चमकदार है।'

सारनाथ में आज सबसे अधिक दर्शनीय मूलगंध कुटी विहार है, जिसे महाबोधि सोसाइटी ने आधुनिक शैली पर बनवाया है। इसकी भीतरी दीवारों पर एक जापानी कलाकार ने बुद्ध के सम्पूर्ण जीवन की घटनाओं को बड़े कलात्मक चित्रों में अंकित किया है।

राम की पावन नगरी :

अयोध्या

भगवान राम की जन्म भूमि होने के कारण अयोध्या का नाम प्रत्येक हिन्दू बड़ी श्रद्धा से लेता है। ऐतिहासिक महत्व के साथ-साथ इसका धार्मिक महत्व भी कम नहीं है। सहस्त्रों वर्षों पूर्व सूर्यवंशी राजाओं से लेकर मध्य युग तक यह बड़े शूरवीर प्रतापी, राजाओं की राजधानी रही है और तत्कालीन भारतीय राजनीति की केन्द्र रही है। प्राचीन काल में इसका नाम साकेत था। यद्यपि उस काल के कोई चिन्ह विशेष यहाँ आज नहीं हैं, पर कहीं-कहीं खुदाई में कुछ शिलालेख अवश्य प्राप्त हुये हैं। पुष्यमित्र शुंग के शिलालेख इस दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण हैं।

सरयू के तट पर बनी हुई इस नगरी में बहुत से प्राचीन मन्दिर दर्शनीय हैं जिनमें से कुछ प्रमुख हैं—

राम जन्म भूमिः—

कहते हैं इसी स्थान पर महाराजा दशरथ का महल था और राम का जन्म यहीं हुआ था। यहाँ राम-सीता का प्राचीन मन्दिर था जिसे मुस्लिम शासक बाबर ने तुड़वा कर मस्जिद बनवा दी थी किन्तु अब फिर कुछ भाग को मन्दिर का रूप प्रदान किया गया है।

हनुमान गढ़ीः—

यह हनुमान जी का भव्य मन्दिर है जिसकी रचना बहुत कुछ किले

की शैली पर की गयी है। यह एक ऊँचे टीले पर चार कोट का दुर्ग है। ६० सीढ़ियाँ चढ़ने पर हनुमान जी का मन्दिर है जिसमें हनुमान जी की बैठी हुई मूर्ति है। श्रद्धालु भक्तों की यहाँ हर समय भीड़ रहती है।

कनक भवनः—

अयोध्या का यह मुख्य मन्दिर है जिसे ओड़छा नरेश ने बनवाया था। यह अत्यन्त विशाल एवं भव्य है। इसमें श्री राम सीता की सुन्दर मूर्तियाँ हैं। श्रावण के झूले पर यहाँ बड़ी सजावट होती है।

प्रयाग

प्राचीनतम नगरों में काशी के बाद प्रयाग का वर्णन प्राचीन ग्रन्थों में मिलता है। इसे समस्त तीर्थों में अत्यधिक पवित्र माना जाता है, इसी कारण इसे 'तीर्थराज' कहा गया है। गंगा, यमुना और सरस्वती (जो अब अदृश्य है) के संगम पर बसे हुये इस नगर का आज भी बहुत बड़ा धार्मिक महत्व है। त्रिवेणी संगम पर प्रति वर्ष माघ मास में सहस्त्रों श्रद्धालु भक्त जन स्नान करने आते हैं और अधिकांश लोग एक माह तक वहाँ रहकर भगवद् भजन करते हैं तथा साधु संतो का सत्संग लाभ करते हैं। प्रत्येक बारहवें वर्ष मकर संक्रान्ति के अवसर पर यहां कुम्भ का बहुत बड़ा मेला लगता है जिसमें दूर-दूर से लाखों यात्री आते

बन गया है।

आगरे के कुछ प्रसिद्ध दर्शनीय स्थान हैं—

ताजमहल—यमुना के तट पर श्वेत संगमरमर की बनी यह जगत प्रसिद्ध इमारत है। संगमरमर पर बने बेलबूटे तथा पच्चीकारी अद्वितीय है।

किला—आगरा फोर्ट स्टेशन के सामने यह ऐतिहासिक किला आज भी अपनी शान के लिये विख्यात है। इसके अन्दर मोती मस्जिद, रानी जोधाबाई का महल, दीवाने खास आदि कई दर्शनीय स्थान हैं।

एतमादुद्दौला का रोजा—यह यमुना के पार है और कला की दृष्टि से बहुत सुन्दर है।

राधा स्वामी की समाधि—दयाल बाग में संत राधा स्वामी के अनुयाइयों द्वारा बनवाई हुई यह समाधि आधुनिक कला का उत्कृष्ट नमूना है। इसे बनते हुये ४० वर्ष से अधिक हो चुके हैं पर अभी भी निर्माण कार्य चल रहा है। पूर्व आयोजित आठ मंजिली यह इमारत पूर्ण हो जाने पर निस्संदेह आधुनिक भवनों में अद्वितीय होगी।

फतेहपुर-सीकरी—अगरा से कुछ मील दूर स्थित इस स्थान में प्रसिद्ध संत शेख सलीम चिश्ती का मकबरा है। शेख सलीम चिश्ती की कृपा से ही अकबर को पुत्र-रत्न की प्राप्ति हुई थी जिसका नाम उसने सलीम रक्खा था। सलीम ही, जैसा कि सर्वविदित है, आगे चलकर जहाँगीर कहलाया और अकबर के बाद मुगल साम्राज्य का उत्तराधिकारी बना। यह मकबरा एक मस्जिद के प्रांगण में स्थित है, और अकबर के शासन-काल में निर्मित हुआ था। शेख सलीम चिश्ती का हिन्दू और इस्लाम दोनों ही धर्मों के मतावलम्बी आदर करते हैं।

यहाँ बीरबल का महल तथा अकबर के बनवाये कुछ अन्य सुन्दर भवन हैं।

नैमिषारण्य

तीर्थों के इतिहास में धार्मिक और सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यन्त प्राचीन और महत्वपूर्ण स्थान है नैमिषारण्य । वेदों को छोड़कर सभी प्राचीन संस्कृत धर्म ग्रन्थों में नैमिषारण्य का वर्णन मिलता है ।

उत्तर रेल की बालामऊ-जंक्शन स्टेशन से नैमिषारण्य के लिये रेल मार्ग है। वैसे यह सीतापुर तथा हरदोई से मोटर मार्ग से भी सम्बन्धित है ।

नैमिषारण्य का मुख्य तीर्थ चक्र तीर्थ है । यह एक प्राचीन सरोवर है जिसका मध्य भाग गोलाकार है और उससे बराबर जल निकलता रहता है । सरोवर के किनारे-किनारे अनेक मंदिर हैं ।

चक्रतीर्थ से कुछ दूर पर ही ललिता देवी का प्रसिद्ध मंदिर है । हर अमावस्या को तीर्थ यात्री चक्र तीर्थ में स्नान कर ललिता देवी का दर्शन करना पुण्य मानते हैं ।

नैमिषारण्य को आध्यात्मिक रूप देने वाले संत
जगदाचार्य नारदानन्द जी सरस्वती

कृष्ण द्वैपायन जहां बैठ कर पुराणों की रचना करते थे उसे व्यास गद्दी कहते हैं । व्यास गद्दी से कुछ दूर पर ही पांडवों के प्राचीन किले के खंडहर हैं । कहते हैं अपने अज्ञात-वास के दिनों में पाँडव वहाँ कुछ काल रहे थे और उन्होंने यहाँ पर एक किला भी बनवाया था ।

वर्तमान में नैमिषारण्य का महत्व

पूज्य स्वामी नारदानन्द जी द्वारा स्थापित अध्यात्म विद्यापीठ एवं आश्रम से और भी बढ़ गया है। ऋषिकुल पद्धति पर वेदशास्त्रों की शिक्षा, हिन्दू धर्म तथा संस्कृति का प्रचार, नैतिकता एवं सदाचार का व्यवहारिक ज्ञान जन साधारण को देने में इस आश्रम ने अद्वितीय कार्य किया है।

अध्यात्म विद्यापीठ नैमिषारण्य रेलवे स्टेशन से पश्चिम की ओर रेलवे लाइन के बगल जाने वाले मार्ग से प्राय: आधा मील पर प्राचीन ऋषि आश्रमों जैसे शान्ति पूर्ण वन्य वातावरण में स्थित है। इस आश्रम का महत्व इसी से स्पष्ट है कि यहां भू०पू० राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन अनेक मंत्रीगण तथा राज्यपाल एवं थाईलैंड के राजदूत प्रिंस प्रेम पुराछत्र भी जा चुके हैं।

सीतापुर

नैमिषारण्य से लगभग ३० किलोमीटर दूर और उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ से ८५ किलोमीटर पर यह एक प्रसिद्ध औद्योगिक नगर है। स्वाधीनता के बाद जिन नगरों ने बड़ी तेजी से औद्योगिक प्रगति की, सीतापुर उनमें से एक है। मूंगफली की उपज इसके आस-पास के क्षेत्र में अधिक होने के कारण यह एक बड़ी मंडी तो है ही साथ ही यहां बहुत से तेल मिल हैं। अभी हाल ही में यहाँ वनस्पति घी बनाने का एक बड़ा कारखाना भी खुल गया है।

सीतापुर को ख्याति देने में यहाँ के प्रसिद्ध प्लाईवुड कारखाने को श्रेय है जो सीतापुर प्लाईवुड मैन्यु-

फैब्रिक्स लिमिटेड के नाम से देश विदेश में अपने उत्तम उत्पादन के लिये प्रख्यात है। इस कारखाने ने अपने सभी उत्पादनों के नाम सीतापुर के 'सीता' शब्द से ही रक्खे हैं जैसे 'सीताटैक्स', 'सीतावुड', 'सीतालैम' आदि। इस कारखाने के पार्टनर श्री हेनरी थामसन जहाँ इस कारखाने और उसके उत्पादन के विकास में पूरी रुचि लेते हैं वहाँ सीतापुर के जन कल्याण तथा सामाजिक प्रगति के लिये भी योग-दान करते हैं। अभी हाल ही में उन्होंने एक स्थानीय कन्याविद्यालय के भवन निर्माण में कुल दरवाजे और खिड़कियाँ दान स्वरुप देने की घोषणा की है।

इस समय सीतापुर को संसार के मानचित्र में महत्वपूर्ण स्थान दिलाने में सीतापुर नेत्र चिकित्सालय का बहुत बड़ा योगदान है। इसकी स्थापना विश्व-प्रसिद्ध नेत्र चिकित्सक डा० महेश प्रसाद मेहरा ने की थी। डा० मेहरा, जिन्हें अँग्रेज शासकों ने उनकी योग्यता एवं जन हितार्थ की हुई सेवाओं के लिये राय साहब, राय बहादुर तथा केसरी हिन्द की उपा-धियों से अलंकृत किया था तथा स्वाधीनता के बाद भारत सरकार ने पद्मश्री और पद्म भूषण से सम्मानित किया, इस चिकित्सालय को अपने अथक परिश्रम, लगन और योग्यता से एक विशाल नेत्र चिकि-त्सालय के रुप में विकसित करने में पूर्णतया सफल हुये। भारत के कोने-कोने से रोगी यहाँ आते हैं और कई एक तो अपनी नेत्र ज्योति खोकर भी यहाँ आकर पुनः नेत्र ज्योति प्राप्त करते हैं।

नगर छोटा होता हुआ भी यहाँ बाहर से आनेवालों के लिये ठहरने तथा खाने-पीने की सब सुविधायें उपलब्ध हैं।

मिश्रिख

सीतापुर से लगभग १३ मील दूर पर यह एक प्राचीन तीर्थ है। यहाँ पर दधीचि कुन्ड है। कहते हैं महर्षि दधीचि इसी स्थान पर तपस्या करते थे और देवासुर संग्राम के समय इन्द्र के बज्र बनाने के लिये देवताओं ने यहीं आकर दधीचि से अस्थियाँ मांगीं थी। महर्षि ने गाय से अपना मांस चटवा कर उन्हें अपनी अस्थियाँ दान की थीं। यहाँ दधीचि ऋषि का एक मन्दिर भी है। कहा जाता है दधीचिकुन्ड में समस्त तीर्थों से लाकर मिश्रित जल डाला गया था इसीलिये इसका मिश्रित या मिश्रिख नाम पड़ा।

बाँगरमऊ

कानपुर से बालामऊ जाने वाली शाखा लाइन पर यह एक छोटा कस्बा है। यहाँ राजराजेश्वरी श्री विद्या मन्दिर नामक एक प्राचीन अद्भुत मन्दिर है। इसका निर्माण तन्त्र शास्त्र की रीति से हुआ है। मुख्य मन्दिर के बरामदे से संलग्न दोनों ओर दो शिवमन्दिर हैं। पूर्व की ओर के मन्दिर में शिवलिङ्ग स्थापित है, इस मूर्ति में श्वेत, लाल, पीले रंग के तथा चन्द्रबिन्दु आदि के चिन्ह अंकित हैं। पश्चिम की ओर के मन्दिर में रक्तवर्ण पंचमुख चतुर्भुज शंकर की मूर्ति है।

मुख्य मन्दिर में अष्टधातु की जगदम्बा की सुन्दर प्रतिमा है। आसन के नीचे चतुर्दल कमल पर

ब्रह्माणी की मूर्ति है। कमल दलों पर 'वं शं षं सं' बीजाक्षर अंकित हैं।

पास ही षटदल कमल पर श्री विष्णु की मूर्ति है। इसके दलों पर 'वं भं मं यं रं लं' अक्षर अंकित हैं। बीच में षोडशदल कमल पर भगवान शंकर विराजमान हैं। दलों पर 'अ से अ: तक के सोलह स्वर वर्ण अंकित हैं। इसके बायीं ओर नीलवर्ण दशदल कमल पर 'डं से फं' तक के वर्णों के साथ रुद्र की मूर्ति है। आगे बायें फाटक में द्वादशदल लाल कमल पर 'कं से ठं' तक वर्ण तथा ईश्वरमूर्ति स्थापित है। इन पञ्चदेवताओं के ऊपर श्वेत कमल है। उसमें 'हं क्षं' के बीजाक्षर हैं तथा सदाशिव लेटे हैं। शिव की नाभि से निकले कमल पर जगदम्बा की मूर्ति विराजमान है। कुन्डलिनी योग के आधार पर बना हुआ अपने ढंग का यह अद्वितीय मन्दिर है।

गोला गोकर्णनाथ

पूर्वोत्तर रेल की लखनऊ-बरेली शाखा पर गोला गोकर्णनाथ छोटा कस्बा है। यह एक प्राचीन तीर्थ है। यहाँ प्रति वर्ष महाशिवरात्रि के अवसर पर तथा चैत्र शुक्लपक्ष में बड़ा भारी मेला लगता है। शिवरात्रि पर दूर-दूर से काँवरार्थी काँवर लेकर पैदल अथवा साइकिल से गोकर्णनाथ आते हैं।

यहाँ एक बहुत विशाल सरोवर है जिसके निकट ही गोकर्णनाथ महादेव का विशाल मन्दिर है। मंदिर में मूर्ति बहुत गहरे गड्ढे में स्थित है जिसमें हाथ डालकर स्पर्श करने से ही मूर्ति का आभास मिलता है।

जनश्रुति के अनुसार एवं वाराह-पुराण में वर्णित कथा के आधार पर रावण ने जब इन्द्र पर विजय प्राप्त की तब वह स्वर्ग से गोकर्णलिंग ले आया किन्तु मार्ग में उसे एक

स्थान पर रख कर नित्यकर्म को गया। नित्यकर्म से निवृत्त हो जब वह उसे उठाने लगा तो वह मूर्ति नहीं उठी अन्तत: क्रोध में रावण उस मूर्ति में अँगूठा गड़ा कर चला गया। कहते हैं इसी से गोकर्णनाथ की मूर्ति में ऊपर गड्ढा है।

कुसुम्भी

कानपुर-लखनऊ रेल लाइन पर कुसुम्भी स्टेशन है। यहाँ दुर्गा देवी का प्रसिद्ध मन्दिर है। यहाँ चैत्र की पूर्णिमा को बड़ा भारी मेला लगता है। मंदिर के सामने एक तालाब है। यहाँ स्त्रियां अपने बच्चों का मुंडन संस्कार कराती हैं।

दुर्गाकुसहरी

कुसुम्भी स्टेशन से २ मील पर दुर्गा कुशहरी नाम से दुर्गाजी का एक विशाल मंदिर है। यहाँ पर चैत्र पूर्णिमा को बड़ा भारी मेला लगता है और आस पास के क्षेत्र से भक्त गण बड़ी संख्या में आते हैं।

शाहजहाँपुर

हावड़ा-अमृतसर मेन लाइन पर स्थित शाहजहाँपुर नगर का महत्व स्वाधीनता संग्राम के इतिहास से गहरा सम्बन्ध होने के कारण अत्यधिक है। १८५७ के मुक्ति आन्दोलन में भी विद्रोहियों का यह गढ़ रहा है और अँग्रेजी शासन से वीरो ने डटकर लोहा लिया। तत्पश्चात बीसवी शताब्दी के आरम्भ में जब क्रान्तिदलों की देश के विभिन्न भागों में स्थापना हुई तब फिर शाहजहाँपुर क्रान्तिकारियों का प्रमुख केन्द्र बना। १९२० के आस पास में यहाँ की गतिविधियाँ काफी तेज हो गयीं और श्री राम-प्रसाद 'विस्मिल' के नेतृत्व में यहाँ की क्रान्तिकारी पार्टी अंग्रेजों के विरुद्ध पूरे जोर शोर से कार्य करने लगी। प्रसिद्ध काकोरी ट्रेन डकैती कांड की योजना यहीं बनाई गयी और यहीं से रामप्रसाद विस्मिल के नेतृत्व में चुने हुये नौजवानों ने जाकर काकोरी में सरकारी खजाना लूटा था। उस कांड में वाद को शाहजहाँपुर के तीन वीरों को फाँसी की सजा हुई थी। ये वीर थे—श्री

राम प्रसाद बिस्मिल, श्री अश्फाक उल्ला खाँ तथा ठा० रोशनसिंह। खेद है कि शाहजहाँपुर के नागरिकों ने अपने नगर को गौरवान्वित करने वाले इन वीरों का कोई स्मारक नहीं बनवाया। इधर हाल में नगर-पालिका कार्यालय के बाहर इन तीनों वीरों की छोटी मूर्तियाँ स्थापित की गयी हैं जो खुले स्थान में होने तथा पत्थर की न होने के कारण दीर्घकाल तक रह सकेंगी इसमें संदेह है।

नगर की पश्चिमी सीमा पर स्वामी शुकदेवानन्द द्वारा संस्थापित मुमुक्षु आश्रम यहाँ का प्रमुख आकर्षण तथा पावन स्थान है। यहाँ पर ऋषिकुल पद्धति पर शिक्षा देने के साथ साथ आधुनिक सभी विषयों की शिक्षा के लिये एक महाविद्यालय भी है।

शाहजहाँपुर शक्कर उत्पादन का बहुत बड़ा केन्द्र है। आभूषणों की भी मंडी होने से यहाँ का सर्राफा बाजार प्रसिद्ध है।

बरेली

शाहजहाँपुर से लगभग ४५ मील दूर पर रुहेलखंड क्षेत्र का एक बड़ा नगर है। उत्तर रेल और पूर्वोत्तर रेल का जंक्शन होने से नैनीताल आदि पर्वतीय क्षेत्रों को जाने का यहाँ से मार्ग है।

पर्वतीय क्षेत्रों के निकट होने से यहाँ लकड़ी का सामान तथा बेंत की टोकरियाँ आदि बहुत प्रसिद्ध हैं। आस पास के क्षेत्रों में यहाँ के मिशन अस्पताल की बड़ी ख्याति है।

मुरादाबाद

उत्तर प्रदेश के पश्चिमी क्षेत्र का मुरादाबाद एक बड़ा औद्योगिक केन्द्र है। कलई के बर्तनों के लिये यह देश विदेश में प्रसिद्ध है। कलई के नक्काशीदार तथा आधुनिकतम डिजाइनों के बर्तन विदेशों को निर्यात किये जाते हैं जो विदेशी मुद्रा अर्जित करने में सहायक है।

गढ़मुक्तेश्वर

मुरादाबाद-दिल्ली रेल लाइन पर गढ़ मुक्तेश्वर छोटा स्टेशन है। गंगा के तट पर स्थित गढ़मुक्तेश्वर का ऐतिहासिक महत्व है। यह पांडवों की राजधानी प्राचीन हस्तिनापुर का एक भाग था। यहाँ मुक्तेश्वर महादेव का प्रसिद्ध मंदिर है। मंदिर के पास ही झारखंडेश्वर नामक प्राचीन शिवलिंग स्थापित है। कार्तिक पूर्णिमा को यहाँ गंगा के तट पर बहुत बड़ा मेला लगता है।

हस्तिनापुर

यह स्थान मेरठ से लगभग २२ मील दूर है। यह पांडवों की राजधानी थी। परवर्तीकाल में यह जैन मुनियों का कार्यक्षेत्र भी रहा। यहीं आदि तीर्थंकर ऋषभदेव को राजा श्रेयांस ने इक्षुरस का दान दिया था इसलिये इसे दान तीर्थ भी कहते हैं। महाभारत काल के कोई चिन्ह अब यहाँ नहीं मिलते पर आस पास के क्षेत्रों में अब भी जैन प्रतिमायें विद्यमान हैं।

मेरठ

मेरठ कभी अपने चाकू और कैंची के उत्पादन के लिये प्रसिद्ध रहा है। पर इधर मेरठ का विकास एक औद्योगिक नगर के रूप में हो रहा है और अनेक लघु उद्योग यहाँ पनप रहे हैं। पुस्तक प्रकाशन के क्षेत्र में (विशेष रूप से पाठ्य पुस्तकें) मेरठ ने बड़ी प्रगति की है।

कलियर

रुड़की से कुछ मील दूर कलियर में शाह अलाउद्दीन साबिर, जो कलियर के पीर के नाम से विख्यात हैं, की प्रसिद्ध दरगाह है। यह मुस्लिम संत ५९४ हि० में पैदा हुये थे और उनका देहान्त ६९० हि० में हुआ था। कलियर की दरगाह में प्रति वर्ष एक बहुत बड़ा उर्स होता है और दूर-दूर से मुसलमान यहाँ आते हैं।

ब्रह्मावर्त्त

कानपुर से लगभग २८ किलोमीटर दूर गंगा के किनारे पर छोटी सी बस्ती है बिठूर, उसका ही प्राचीन नाम ब्रह्मावर्त्त है जो अब पुनः अपने प्राचीन नाम से ही विख्यात है। कहते हैं यहीं पर महर्षि वाल्मीकि का आश्रम था और रामायण की रचना उन्होंने गंगा तट के इसी पावन स्थान पर की थी। सन् १८५७ के मुक्ति संग्राम के अनेक संस्मरण ब्रह्मावर्त अपने में संजोये है। महान पराक्रमी वीर नानासाहब का यहाँ राज्य था और मुक्ति संग्राम का यहाँ से संचालन हुआ था। महारानी लक्ष्मीबाई भी यहाँ उन्हीं दिनों कुछ काल तक रहीं थीं।

खुदाई के फलस्वरूप बहुत से प्राचीन औजार तथा ताँबे के वाणफलक आदि यहाँ बड़ी संख्या में प्राप्त हुये हैं।

कार्तिक की पूर्णिमा को यहां बहुत बड़ा मेला लगता है।

भीमकुण्ड : प्रकृति का आयाम बोध

● जगदीश किंजल्क

भीमकुन्ड मध्य प्रदेश के छतरपुर जिले के अन्तर्गत बिजावर तहसील में प्रकृति के अन्तराल में छिपा हुआ एक बहुत ही मनोरम एवं दर्शनीय स्थान है। यदि कला की दृष्टि से खजुराहो दर्शनीय है तो प्राकृतिक छटा और विचित्रता की दृष्टि से भीमकुन्ड। कुछ दिन पूर्व मुझे इसे देखने का सुयोग प्राप्त हुआ। दूसरे दिन प्रात: ९ बजे के लगभग हम लोग जीप में बैठ कर भीमकुन्ड की यात्रा के लिये रवाना हुये। हम लोग कुछ नये आनन्द का अनुभव करते हुये कुछ ही घन्टों में भीमकुन्ड पहुच गये। वहाँ पर एक कोठी बनी हुई है उसके पार्श्व में हमारी जीप खड़ी कर दी गई। शीघ्र ही जीप से उतर कर हम सब लोग भीमकुन्ड को देखने के लिये उत्कंठा से आगे चले।

समतल जमीन पर चलते-चलते एक छोटा गड्ढा सा हमें उतरना पड़ा। इस गड्ढे के समक्ष ही हमें तीन विशाल द्वार दिखाई पड़े। बीच का द्वार लगभग आठ फीट ऊँचा और दस फीट चौड़ा होगा और उसके दायें बायें के द्वार इतने ही ऊँचे होते हुये लगभग चार-चार फीट चौड़े होंगे। ये तीनों द्वार समानान्तर दूरी पर हैं। इन द्वारों के भीतर देखते ही भीमकुन्ड की भयंकर विशालता सहसा ही हमारी दृष्टि में आई। उसे देखते ही कुछ अवाक् सा रह गया। यह मानव कृति नहीं वरन् प्रकृति की बर्बर कृति है। ऐसी विशाल और अद्भुत रचना की कल्पना भी कर सकना मानव के लिये सम्भव नहीं। इस अद्भुत कुन्ड की रचना कब हुई और कैसे हुई यह कह सकना सम्भव नहीं। यही अनुमान लगाया जा सकता है कि यहाँ कभी ज्वालामुखी का विस्फोट हुआ होगा। कब हुआ होगा? हजारों वर्ष पूर्व ही कभी। पृथ्वी के अन्तराल से निकली हुई अग्नि की ज्वालायें दो धाराओं में पृथ्वी पर

पिघलता हुआ सारा मलवा लेकर बही होंगी। एक सीधी और एक तिरछी होकर। यही इस स्थान की रचना का एक मात्र कारण कल्पित किया जा सकता है।

हम बीच के द्वार से लगभग एक फुट की सीढ़ियों को उतरते हुए कुन्ड की ओर बढ़ने लगे। हमें लगभग ६५ सीढ़ियाँ पार करनी पड़ीं। इसका अर्थ था कि समतल भूमि से हम ६५ फीट से भी कुछ अधिक गहराई पर नीचे उतर आये। यहाँ प्राय: सौ फीट चौड़ा एक विशालकाय कक्ष सा जैसे प्रकृति नटी का सभा भवन हो, हमारे सामने खड़ा हुआ सा प्रतीत होने लगा। मैं आश्चर्य से चारो ओर देखने लगा। मैंने बहुत से प्राकृतिक स्थानों को देखा है पर यहाँ जैसी विचित्रता कहीं नहीं मिली। इस कक्ष के ऊपर देखते ही एक विशालकाय रन्ध्र से सूर्य का प्रकाश आ रहा था और सूर्य की परछाई कुन्ड में प्रतिबिम्बित हो रही थी। नीचे पृथ्वी की खोल जो एक विशालकाय छत से ढकी हुई थी उसमें यह रन्ध्र था और यह लगभग १२ फीट मोटी होगी। यह निर्माण प्रकृति का ही है, मानव निर्मित कुछ भी नहीं। परन्तु ऐसा प्रतीत होता है जैसे किसी प्रबुद्ध शिल्पकार ने इसकी रूप रेखा तैयार की हो और उसे रच कर तैयार कराया हो। यदि ज्वाला मुखी की उग्र ज्वाला पृथ्वी के अन्तराल से एक ही दिशा को निकलकर प्रवाहित हुई होती तो पृथ्वी में एक कूप सा ही बन कर रह जाता। परन्तु अग्नि की जो धारा दूसरी दिशा से निकल भागी उस ने इस कुन्ड को ऐसा विचित्र रूप दे दिया जो आज हमारे आकर्षण का केन्द्र बन गया। इस विशाल खोल में मनुष्य ने भी अपनी कुछ कलाकृति दिखलाई है और उसमें भित्तियों का निर्माण कर कई सुन्दर कक्ष काट दिए हैं। वाम पार्श्व में एक कक्ष है जो लगभग १२ फुट लम्बा और १२ फुट चौड़ा होगा। इसकी ऊँचाई भी लगभग १२ फीट होगी। इसके दोनों पार्श्वों में तीन-तीन द्वार हैं। इसके आगे कुछ रिक्त स्थान है। फिर आगे कुछ चढ़ाव पर शंकर गुफा की ओर जाना पड़ता है। शंकर गुफा का पता नहीं कि वह पृथ्वी के अन्तराल में कहाँ तक धसती हुई चली गई है। उसमें प्रकाश का कोई साधन नहीं। वह सदैव घनीभूत अन्धकार से अच्छादित रहती है। परन्तु तब भी मनुष्य ने उसके अन्दर भी जाने का प्रयास किया है, पर अधिक दूर नहीं जा सकता। मैंने

भी अन्दर जाने का प्रयास किया पर अधिक दूर नहीं जा सका। उसके भीतर जाना संकट से खाली नहीं। श्वास अवरुद्ध होने लगती है और विषैले जीव जन्तुओं का भी भय रहता है। कभी-कभी शेर भी वहां घुस कर बैठा करता था जैसा कि वहाँ के लोगो से ज्ञात हुआ परन्तु अब वहां नहीं है।

शंकर गुफा के जीने से उतर कर नीचे आने में वाम पार्श्व में ही चट्टानों का कटाव देखते बनता है। एक विशाल चट्टान जो लगभग ४० फीट स्थूल है तीन धाराओं विभक्त है। चट्टान पर पानी के प्रभाव से हो या ज्वालामुखी की अग्नि के प्रभाव से हो, जो कटाव के चिन्ह बने हैं वे दर्शनीय हैं। ऐसा प्रतीत होने लगता है जैसे मनुष्य ने ही उस पर अपनी छेनी चला कर कुछ स्थूल रचना की हो, कुछ स्थूल मूर्तियों का आकार डाला हो। कटाव को देख कर कुछ ऐसा ही भ्रम होने लगता है और खजुराहो का सहज ही स्मरण होने लगता है। परन्तु यह प्रकृति की ही सारी अस्पस्ट रचना है। चट्टानों का रंग प्रायः काला है। कुछ-स्थानों को छोड़ कर इन चट्टानों के नीचे फिर एक दालान है जिसमें ४ द्वार हैं। यह दालान एक सुन्दर मन्दिर का रूप प्रस्तुत करती है और इसके अन्दर शिवजी की मूर्ति स्थित है। यह मूर्ति लगभग दो फुट ऊंची होगी। इस दालान के सामने एक ७ फुट चौड़ा चबूतरा है। इस चबूतरे से प्रायः ८ फुट नीचे उतर कर कुण्ड की ओर चलना पड़ता है। फिर द्वार के सम्मुख दिशा में ४ द्वारों वाला एक दूसरा विशाल कक्ष निर्मित किया गया है। इसमें भी एक शिव जी की मूर्ति स्थापित है। इस मन्दिर के पार्श्व में एक एक फुट की १५ सीढ़ियाँ चढ़कर एक दूसरे कक्ष को आते हैं जिसमें ५ द्वार हैं। यहा पर भी खड़े होकर देखने से सामने पत्थर का कटाव बहुत ही विचित्र प्रतीत होता है। विशालकाय चट्टान लगभग ७० फीट मोटी होगी और यह ७ परतों में विभक्त है। है। इसकी परतें विभिन्न मोटाइयों की हैं। यह पाषाणों का प्राकृतिक कटाव है जो हमारे कौतूहल को जगाता है। इन चट्टानों का गठन कटाव इत्यादि सभी आश्चर्य में डालने वाला है। कहीं कहीं तो चट्टान ने पानी की टपकती हुई बूंद का आकार ले रक्खा है।

इन चट्टानों के नीचे वह जल-

कुण्ड है जो हमारे विशेष आकर्षण का केन्द्र है। यह अण्डाकार कुण्ड प्राय: ५० फीट लम्बा है और २५ फीट चौड़ा। इसकी वास्तविक लम्बाई और चौड़ाई को सही-सही नहीं नापा जा सकता क्योंकि दूसरी ओर खड़े होने के लिए भी स्थान नहीं है और पानी ही पानी है। इस कुण्ड की गहराई को कहा जाता है कि अथाह है क्योंकि ज्वालामुखी का विस्फोट पृथ्वी के ही असीम अन्तराल से हुआ होगा। इसका पानी नील वर्ण का दिखाई पड़ता है परन्तु वह गंगा जल के समान ही उज्जवल है और पीने में स्वादिष्ट तथा शरीर को लाभप्रद है। इस जल में तैरने वाला व्यक्ति भी विशेष रूप से शुभ्र दिखाई पड़ने लगता है। दक्षिण की ओर यह कुण्ड पृथ्वी के अन्तराल में जाने किस गहराई तक घुसता हुआ चला गया है और कहा जाता है कि इस दिशा में पानी का आकर्षण तथा बहाव है। जो कोई इस बहाव की ओर चला जाता है फिर उसका लौटना सम्भव नहीं रहता। लोग कहते हैं कि इस कुण्ड में एक बार तीन व्यक्ति ऊपर के रन्ध से कूदे थे और उनमें से एक दुर्भाग्य वश इस कुण्ड के बहाव की ओर चला गया था फिर उससे निकल कर उसका शव भी नहीं आया। सन् १९५३ में आसाम में एक भूकम्प आया था। उसका प्रभाव इस कुण्ड में भी देखा गया था। पहले उसमें तोपों के दागने जैसी गड़गड़ाहट का शब्द सुनाई पड़ा था फिर एक साथ ही उस कुण्ड का जल उबल पड़ा था और ऊपरी कक्षों में भर गया था। गंगा जी के समान रेणुका भी ऊपर आ गई थी। पार्श्व के मन्दिर की शिवमूर्ति भी उसमें बहकर डूब गई थी। प्रत्येक दर्शक के मुंह से यह आश्चर्यजनक घटना कही जाती है और यह हमारे कौतूहल को और भी अधिक बढ़ा देती है। कुछ घंटों के बाद यह उबलता हुआ जल यथा स्थान पहुंच गया था और वह तोपों जैसी गड़गड़ाहट का शब्द भी शान्त हो गया था।

हम सब लोगों ने कुण्ड पर बैठ कर भोजन किया और फिर कुण्ड में उतर कर जल पान। अब हमारे लौटने की तैयारी थी। कुण्ड के दृश्यों को आँखों में भर कर हम लोग फिर ऊपर की सीढ़ियों से चढ़ चले। द्वार पर एक बाबा जी ने अपना आश्रम भी बना रक्खा है। इसमें कुछ छात्र संस्कृत की शिक्षा पाते हैं। कुण्ड के विशाल सौन्दर्य

(शेष पृष्ठ १४४ पर)

चित्रकूट

चित्रकूट सदा से ही पावन तपोभूमि रही है। उसका महात्म्य इससे और भी बढ़ता है कि वहाँ श्री राम चन्द्र जी ने अपने वनवास काल में निवास किया था। यहीं पर भक्त कवि तुलसी दास ने राम चरित मानस की रचना की थी।

चित्रकूट जाने के लिये मध्य रेलवे के करवी स्टेशन से जाने में सुविधा रहती है। वैसे चित्रकूट स्टेशन भी है पर वहाँ से बस्ती जाने का मार्ग अच्छा नहीं है। चित्रकूट की बस्ती का नाम सीतापुर है। यह करवी स्टेशन से ५ मील है। यहाँ ठहरने के लिये कई अच्छी धर्मशालायें हैं।

दर्शनीय स्थान

सीतापुरः—यह पयस्विनी गंगा के किनारे बसा है और चित्रकूट की मुख्य बस्ती है। यहाँ रामघाट, कुशघाट, राघव घाट आदि अनेक पक्के घाट हैं। राघवघाट यहाँ का मुख्य घाट है। कहते हैं इसी घाट पर श्री राम ने अपने पिता दशरथ को तिलांजलि दी थी।

कामदगिरि :— सीतापुर से डेढ़ मील दूर कामता नाथ या कामदगिरि नामक पर्वत है। यह परम पवित्र माना जाता है इसलिये इस पर चढ़ना वर्जित है। इसकी केवल परिक्रमा की जाती है। पूरा परिक्रमा मार्ग पक्का है। परिक्रमा में अनेक छोटे-बड़े मंदिर आते हैं। इसी मार्ग पर कई स्थानों पर चरण चिन्ह मिलते हैं जिन्हें पंडे और पुजारी श्री रामचन्द्र के बताते हैं। एक पत्थर में बहुत से पदचिन्ह हैं। कहते हैं यहाँ श्री राम भरत से मिले थे और पाषाण द्रवित होने से उनमें चरण चिन्ह बन गये।

चरण पादुका के पास ही लक्ष्मण पहाड़ी है जिस पर लक्ष्मण जी का मंदिर है। कहते हैं इसी पहाड़ी पर बैठकर लक्ष्मण जी रात को पहरा देते थे।

अनुसूया जी :— सीतापुर से आठ मील दूर पहाड़ी पर अनसूया जी तथा महर्षि अत्रि का आश्रम है। यहाँ अत्रि, अनसूया, दत्तात्रेय, दुर्वासा तथा चन्द्रमा की मूर्ति है। यह स्थान घने जंगल में है इसलिये जंगली पशुओं का भय रहता है। रात में यात्री यहाँ नहीं रहते।

गुप्त गोदावरी :— अनसूया जी से ६ मील दूर गुप्तगोदावरी है। एक अंधेरी संकरी गुफा में १५-१६ गज भीतर सीताकुन्ड है जिसमें झरने का जल सदा गिरता रहता है। गुफा के भीतर दीपक लेकर जाना पड़ता है।

भरत कूप :— यह चित्रकूट से चार मील है। श्री राम के राज्याभिषेक के लिये भरत जी समस्त तीर्थों का जल ले गये थे। अत्रि ऋषि के आदेश पर वह जल इस कुंये में डाला गया था तब से यह कूप सर्व तीर्थ स्वरूप माना जाता है।

राम शय्या :—एक शिला पर दो व्यक्तियों के लेटने के चिन्ह हैं और बीच में धनुष का चिन्ह है कहते है श्री राम और सीता ने इस शिला पर एक रात्रि विश्राम किया था।

हनुमान धारा :— चित्रकूट से पूर्व की ओर संकर्षण पर्वत पर कई आश्रम तथा पावन स्थल हैं। इसी पर एक पतली धारा हनुमान जी के आगे कुन्ड में गिरती है। हनुमान धारा से सौ सीढ़ी ऊपर जाकर सीता रसोई है।

(पृष्ठ १४२ का शेष)

को शब्दों में वर्णित नहीं किया जा सकता है, न चित्र ही उसकी विशालता या निर्माण का कोई समूचा रूप सामने रख सकते हैं। यह वर्णनीय है. इसका निर्माण विचित्र है। इसकी परिकल्पना किसी एक ऐसे मस्तिष्क की देन है जो मानव के परे है।

विन्ध्याचल

विन्ध्य पर्वत श्रृंखला में मिर्जापुर जिले के अंतरगत विन्ध्याचल पावन तीर्थस्थल है। विन्ध्याचल उत्तर रेल का स्टेशन भी है। वैसे मिर्जापुर से यह चार मील दूर है और पक्की सड़क से जुड़ा हुआ है। बस्ती छोटी है। चार-पाँच धर्मशालायें भी हैं और पंडों के यहाँ भी यात्री ठहरते हैं। सुविधाओं की दृष्टि से बहुत से यात्री मिर्जापुर में ठहरना भी पसन्द करते हैं।

विन्ध्याचल में गंगा के तट से मिला हुआ ही वहाँ का बाजार है। गंगातट से दो फलाँग दूर एक पहाड़ी पर विन्ध्यवासिनी देवी का प्रसिद्ध प्राचीन मंदिर है। मंदिर में सिह वाहन पर खड़ी लगभग ४ फुट की देवी की मूर्ति है। विन्ध्यवासिनी देवी की गणना १०८ शक्ति पीठों में से है।

मंदिर से संलग्न एक प्राँगण है जिसके पश्चिम भाग में बारहभुजा देवी हैं, दूसरी ओर खर्परेश्वर शिव हैं तथा दक्षिण ओर महाकाली और उत्तर ओर धर्मध्वजा देवी हैं। नवरात्र में विन्ध्यवासिनी देवी मंदिर में बहुत बड़ा मेला लगता है। वैसे भक्त लोग सदा ही यहाँ हजारों कीं संख्या में नित्य ही आते रहते हैं।

विन्ध्यवासिनी देवी मंदिर से कुछ दूर विन्ध्येश्वर महादेव का मंदिर है। विन्ध्याचल से दो मील दूर पर कालीखोह है जहाँ महाकाली का मंदिर है। इन्हें चामुण्डा देवी भी कहते हैं।

कालीखोह के पास ही भैरव जी का स्थान है। यहाँ से १२५ सीढ़ी उपर चढ़ कर गेरुआ तालाब है। इसका जल सदा गेरुये रंग का रहता है। यात्री इसमें अपने कपड़े रंग लेते हैं।

कालीखोह से लगभग एक मील पर अष्टभुजा देवी का मंदिर है। कहते हैं जब कंस से बचाने के लिये वसुदेव श्रीकृष्ण को नन्द के यहाँ रख आये और नन्द पत्नी यशोदा की नवजात कन्या को ले आये और कन्या

जन्म का समाचार पाकर कंस उसे मारने के लिये उसे पत्थर पर पटकने लगा तो वह कन्या उसके हाथ से छूट कर आकाश में चली गयी और अपना अष्टभुजा रूप प्रकट किया। वही अष्टभुजा देवी विन्ध्याचल में विराजमान हैं।

मिर्जापुर

विन्ध्याचल से चार मील दूर यह एक विकासशील नगर है। यहाँ कई बाँध बना कर बिजली उत्पादन का कार्य चल रहा है। मिर्जापुर जिले के अंतरगत रेनूकूट, चुर्क आदि में कई बड़े कारखाने स्थापित किये गये हैं।

गोरखपुर

गोरखपुर पूर्वोत्तर रेल का प्रमुख स्टेशन है। पूर्वोत्तर रेल का मुख्य कार्यालय होने से नगर के विकास में बड़ा योग मिला हैं। इधर हाल में ही खाद का बहुत बड़ा कारखाना भी यहाँ स्थापित हो गया है।

यहाँ श्री गोरखनाथ जी का प्रसिद्ध मंदिर है। बाबा गोरखनाथ की यह मुख्य तप:स्थली है। मंदिर और उसके आस-पास का उद्यान आदि दर्शनीय है।

गोरखपुर की ख्याति को बढ़ाने में यहाँ के प्रसिद्ध गीता प्रेस का भी बड़ा योगदान है। हिन्दू धर्म की सस्ती और उपयोगी पुस्तकें जन-साधारण के लिये उपलब्ध कराने में इस संस्था ने बहुत बड़ा कार्य किया है। गीता-प्रेस का कार्यालय देखने लोग अवश्य जाते हैं। प्रेस का कलापूर्ण द्वार तथा लीला चित्र मंदिर दर्शनीय हैं। इसमें भगवान श्री राम तथा श्री कृष्ण की लीला के पूरे चित्र हैं। सभी अवतारों शंकर और दुर्गा आदि के तथा अनेक संतों और भक्तों के हाथ के बने कलापूर्ण चित्र लीला क्रम से लगाये गये हैं।

●

कुशीनगर

गोरखपुर जिले का कसिया नामक स्थान ही प्राचीन कुशीनगर है। गोरखपुर से कुशीनगर लगभग ३६ मील है और यहाँ तक बसें जाती हैं। यहाँ भगवान बुद्ध का स्मारक है। खुदाई से निकली हुई प्राचीन मूर्तियों के अतिरिक्त यहाँ मायाकुँवर का कोटा परिनिर्वाण स्तूप तथा विहार स्तूप दर्शनीय हैं।

कुशीनगर में महात्मा बुद्ध ने महापरिनिर्वाण प्राप्त किया था।

●

लुम्बिनी

यह स्थान नेपाल की तराई में स्थित है। पूर्वोत्तर रेल के नौगढ़ स्टेशन से लुम्बिनी १७ मील दूर है और यहाँ तक बस मार्ग है। यह गौतम बुद्ध का जन्म स्थान है। बौद्ध भक्तों का यह पावन तीर्थ स्थल है। यहाँ देश-विदेश के हजारों बौद्ध प्रतिवर्ष आते हैं। यहाँ के प्राचीन विहार अब नष्ट हो चुके हैं। केवल का एक स्तभ है जिस पर खुदा है 'भगवान बुद्ध का जन्म यहाँ हुआ था।' एक प्राचीन समाधि स्तूप भी है जिसमें बुद्ध की एक मूर्ति है। वर्तमान में बने हुये दो स्तूप और हैं।

श्रावस्ती

पूर्वोत्तर रेल की बलरामपुर स्टेशन से श्रावस्ती जाना पड़ता है। बलरामपुर से यह स्थान १२ मील दूर है और यहां तक बसें जाती हैं। आजकल का सहेठ-महेठ ग्राम ही प्राचीन श्रावस्ती है। प्राचीन काल में यह कोशल राज्य की राजधानी थी। श्री रामचन्द्र के पुत्र लव ने इसे अपनी राजधानी बनाया था।

श्रावस्ती बौद्ध एवं जैन दोनों का तीर्थ है। महात्मा बुद्ध यहाँ दीर्घकाल तक रहे थे और उनके जीवन से संबंधित अनेक चमत्कारों की घटनायें यहाँ पर हुईं थीं।

श्रावस्ती में ही जैन धर्म के तीसरे तीर्थंकर सम्भवनाथ जी का जन्म हुआ था। इसलिये जैन धर्मावलम्बी भी श्रावस्ती दर्शनार्थ आते हैं।

देवीपटन

पूर्वोत्तर रेल के बलरामपुर स्टेशन से १४ मील उत्तर देवीपाटन का स्थान है। यहाँ पटेश्वरी देवी का प्रसिद्ध मंदिर है। कहते हैं महाराजा विक्रमादित्य ने पटेश्वरी देवी की स्थापना की थी। किन्तु उस प्राचीन मंदिर को औरंगजेब ने ध्वस्त कर दिया। परवर्तीकाल में उसके स्थान पर वर्तमान मंदिर बनवाया गया।

पिपरावाँ

नौगढ़ स्टेशन से १३ मील दूर पिपरावाँ गाँव है। यहाँ बुद्ध के आठ मुख्य स्मारक स्तूपों में एक स्तूप है। यह स्मारक शाक्यों द्वारा बनाया गया था जिन्होंने बुद्ध के निर्वाण पर उनकी अस्थियों में से एक भाग पाया था और उसी पर यह स्तूप बनाया।

रामपुर

पूर्वोत्तर रेल पर मुँडरवा छोटा स्टेशन है। इससे दो मील दूर रामपुर गाँव है। यहाँ एक भग्न स्तूप है। कहते हैं महात्मा बुद्ध के वास्तविक स्मारकों के आठ भागों में एक यहाँ पर समाधिस्थ रक्खा हुआ है। यहीं से चुराया हुआ बुद्ध का दाँत अब श्रीलंका के कैंडी नगर के 'टूथटेम्पिल' में सुरक्षित है।

कपिलवस्तु

यह बौद्ध धर्मावलम्बियों का तीर्थ स्थल है। यह नेपाल राज्य के तैलिरा ग्राम में है। यहाँ पर कई विशाल बौद्ध भग्नावशेष हैं। यह स्थान लुम्बिनी से १५ मील दूर पश्चिम में है। यह कभी बुद्ध के पिता महाराज शुद्धोदन की राजधानी थी।

झाँसी

सन् १८५७ के मुक्ति संग्राम में अंगरेजों के दाँत खट्टे करने वाली वीर रानी लक्ष्मीबाई के नाम के साथ ही झाँसी का नाम भी इतिहास में अमर हो गया है। महारानी लक्ष्मीबाई को लोग 'झाँसी की रानी' के नाम से ही अधिक जानते हैं। झांसी के प्रसिद्ध किले के भीतर और बाहर का कण-कण झाँसी की रानी की वीरता के संस्मरण अपने में सँजोये है। किले का दर्शन करते ही मन में श्रद्धा, गर्व और गौरव की मिश्रित अनुभूति होती है।

किला एक ऊँची पहाड़ी पर स्थित है। अन्दर जाने के लिये सेना के कार्यालय से आज्ञापत्र लेना पड़ता है। किले के कुछ भाग में सेना के कार्यालय आदि होने से दर्शक को जाने को नहीं मिलता किन्तु ऐतिहासिक महत्व के सभी स्थान देखने को मिलते हैं। किले में एक मन्दिर भी है जहाँ महारानी नित्य पूजन को जाती थीं। कई स्थान ऐसे हैं जिन्हें देखकर महारानी के साहस और वीरता पर आश्चर्य मिश्रित गर्व होता है। ऐसा ही एक स्थान है वह बुर्ज जहाँ से बहुत गहराई में ढलवाँ चट्टान पर अपने दत्तक पुत्र को पीठ पर बाँध कर घोड़े से छलाँग लगाकर महारानी अंगरेजों के घेरे को तोड़ कर किले से निकल गई थीं।

गीत

—बच्चन लाल 'बचन'

इन सूखे-सूखे अधरों पर,
वह मृदुल मन्द मुस्कान कहाँ।
अब तो है पतझर जीवनमें,
जग सूना-सूना लगता है।
था चाँद किरण से नहलाता-
वह घूंघट में क्या फबता है।
कलियों का छुप-छुप शरमाना,
भौरों का गुन-गुन गान कहाँ।
अब लहरों का वह कोलाहल,
पल-पल में तट चुम्बन करना।
बिखराती मलयवात सौरभ-
झर-झर बहता जीवन झरना।
छीना वह सारा सुख किसने,
मिल सकता स्नेहिल दान कहां।
देते गलबहियां शशि-रवि थे,
उषा नित थाल सजाती थी।
अधरों का चुम्बन कर किरणे-
निद्रा से मुझे जगाती थीं।
अब कहाँ प्रभा की मधु बेला,
पीने को वह मधु-पान कहाँ।
तरु शाखाओं से रह-रह कर,
चिड़ियों का नित कलरव करना।
डाल-डाल से अमराई के-
कोयल का पंचम स्वर भरना।
गुँजित होता था उर उपवन,
वह मीठी-मीठी तान कहाँ।

कानपुर

गंगा के पावन तट पर बसा हुआ कानपुर नगर उत्तर प्रदेश का एक बहुत बड़ा औद्योगिक नगर है। कई प्रमुख रेल लाइनों का जंक्शन होने से इसका विकास उत्तरोत्तर एक बड़े औद्योगिक नगर के रूप में हुआ है। कपड़े की कई मिलें तो यहाँ पहले से ही थीं। इधर हाल में वनस्पति घी, लोहे तथा टिन से निर्मित वस्तुओं और टेलीविजन तक बनाने के कारखाने स्थापित हो गये हैं।

कानपुर १८५६ के मुक्ति संग्राम का एक प्रमुख क्षेत्र रहा है। विठूर के वीर राजा नाना साहब की सेनाओं ने यहाँ अगरेंजों को बुरी तरह परास्त किया था। नानासाहब से निबटने के लिये बनारस से कैप्टन नील अँगरेजी सेना लेकर चला। मार्ग में उसने इलाहाबाद में जनता पर बर्बर अत्याचार किये। नानासाहब ने हारे हुये अंगरेजों को इलाहाबाद भेजने का प्रबन्ध कर दिया था। परन्तु जब वे लोग नावों में सवार हुये उसी समय इलाहाबाद में अँग्रेजों के अत्याचारों का समाचार कानपुर पहुंचा और उत्तेजित भीड़ ने अँग्रेजों पर गोलियाँ चला दीं। कुछ स्त्रियाँ और बच्चे बचा कर एक स्थान पर रख दिये गये। पर जब सैनिकों को यह पता चला कि यह लोग गुप्त रूप से समाचार इलाहाबाद भेजते हैं तो उन्होंने क्रोध में उन्हें मार कर एक कुंये में डाल दिया। बाद को अँग्रेजों ने उस कुंये पर खूब बढ़ा-चढ़ा कर उनकी हत्या की दास्तान लिखवाई और उसका नाम 'मेमोरियल वेल' रक्खा।

कन्नौज

इस नगर और इसके जनपद का प्राचीन नाम 'कान्य कुब्ज' था। कन्नौज का महत्व ई० सातवीं शती से अधिक बढ़ा जब यहाँ सम्राट् हर्ष-वर्धन का शासन स्थापित हुआ। ह्वेनसांग ने इस नगर का हर्षकालिक विवरण लिखा है। उस समय कन्नौज में अनेक संघाराम थे, जिनमें लगभग हजार भिक्षु रहते थे। नगर में दो सौ देव-मन्दिर भी थे। गुर्जर प्रति-हार राजाओं के शासन-काल में भी कन्नौज में कला की बड़ी उन्नति हुई। नागभट्ट द्वितीय, मिहिर-भोज, महेंद्रपाल आदि बड़े प्रतापी शासक हुए। कन्नौज उस समय हिन्दू धर्म का प्रसिद्ध केन्द्र बना। शिव-विष्णु और देवी के बहुत से मन्दिर उस बने जिनके अवशेष आज भी बड़ी संख्या में मिल रहे हैं।

वर्तमान में कन्नौज इत्र और तेल का अंतरराष्ट्रीय ख्याति का बाजार है।

संकिसा

शिकोहाबाद फरुखाबाद रेल शाखा पर स्थित पखना स्टेशन से पाँच किलोमीटर दूर संकिसा नामक स्थान है। इसका प्राचीन नाम सांकाश्या था। संसार के समस्त बौद्धों के लिये यह अत्यन्त पावन स्थान है। कहते हैं भगवान बुद्ध त्रयस्त्रिश स्वर्ग (तेईस देवों के स्वर्ग) से जब पृथ्वी पर लौटे तो उन्होंने इसी स्थान पर पदार्पण किया था।

बौद्ध काल में यहाँ असंख्य देवालय, स्तूप और बौद्ध विहार बने। चीनी यात्री फाहियान तथा ह्वेनसांग भी सांकाश्या आये थे। इन दोनों यात्रियों ने यहाँ के विहारों आदि का बड़ा ही रोचक वर्णन किया है।

सांकाश्या का उल्लेख रामायण में भी है इससे इसकी प्राचीनता का बोध होता है। यहाँ हिन्दू देवी देवताओं के मन्दिर भी हैं। एक टीले पर जिसे आजकल किला कहते हैं कुछ प्राचीन भग्नावशेष हैं। यहीं पर बिसारी देवी का मन्दिर है। बिसारी देवी मन्दिर के पास प्रस्तर की बनी हाथी की मूर्ति विवेष आकर्षक है। पास ही अशोक की लाट भी है। उसके स्तम्भ का अब पता नहीं है। केवल ऊपर का हाथी ही रह गया है।

प्रत्येक शरद-पूर्णिमा को यहाँ बौद्धों का बड़ा भारी मेला लगता है। हिन्दुओं के लिये भी यह स्थान बहुत महत्व का है। प्रतिवर्ष यहाँ श्रावणी मेला लगता है जब बिसारी देवी का पूजन-समारोह होता है।

भीतर गाँव

कानपुर से लगभग २४ मील दूर भीतरगाँव है। गुप्तकालीन मंदिरों के लिये भीतरगाँव का अपना विशेष महत्व है।

गुप्तकालीन प्रमुख मंदिर बाजार के दूसरी ओर दाहिने मार्ग पर स्थित है। इस मंदिर की विशेषता यह है कि पूरा मंदिर ईटों का बना हुआ है। मूर्तियां भी ईटों में ही उत्कीर्ण की गयी हैं। इनकी ईटे एक विशेष प्रकार की मिट्टी से बनी हैं जिसके कारण ये मूर्तियाँ डेढ़ हजार वर्ष से हवा पानी और अनेक प्राकृतिक परिवर्तनों को सहकर भी खड़ी हैं।

इस मंदिर की अधिकांश मूर्तियाँ नष्ट कर दी गयी हैं। जो कुछ मूर्तियां हैं वे बाहरी भाग में हैं। अन्दर खाली गोल गुंबदनुमा छतवाला चौकोर कक्ष है जिसमें बाद को मरम्मत कराई गयी है।

इस मंदिर का अनुमानित निर्माण काल छठी शताब्दी है पर स्थानीय लोगों का कहना है कि यह २००० वर्ष पूर्व बना था।

प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता कनिंघम के अनुसार यह मंदिर विष्णु मंदिर रहा होगा। उसने मंदिर के बाहरी भाग पर बारह अवतार, दुर्गा तथा गणेश की मूर्तियों का होना सिद्ध कया है। एक टेराकोटा में हाथी और मगर की पौराणिक कथा का अंकन है। एक अन्य में पौराणिक कथाओं की पंक्तियों के साथ नारी मूतियों की एक माला जैसी मंदिर के चारों ओर चली गयी है जिसको देखने से लगता है कि इन पंक्तियों का विषय खजुराहो की भाँति 'काम' है।

हमारा बुन्देलखंड

—विजय लक्ष्मी 'विभा'

जो बुन्देलखंड है प्यारो,
सब देशन से न्यारो,
तन मन हु पे करत निछावर,
जो निकरत गैलारो।

विन्ध्याचल की ई में घाटी,
है विधना ने ऐसीं पाटी,
ई में नदियां छैली छबीली,
पहरे साड़ी हीं सी नीली,
चलती कहुं घाल कें धूंघट,
कहूं शरीर उघारो।

खड़े कहूं पे दुर्ग पुराने,
जिनने देखे उनने जाने,
कितने वे इतिहास छिपाये,
हरबोले कछु जिन्हें बखाने,
बजत रहो जो ढोल पड़ो हो,
जैसे ऊको धारो।

खजुराहो के मंदिर न्यारे,
देख देख सब दर्शक हारे,
शिल्प कला है कैसी उनकी,
केसें उनमें रूप उभारे,
मूर्तिकला की कला अनोखी'
उनको देख विचारो।

दुर्ग अजयगढ़ को जो देखो,
और लगाओ मनमें लेखो,
अन्तःपुर है प्रकृति नटीं को'
ईकी शोभा देख सरेखो,
कालींजर है ऐसई नौनो,
छवि को उड़त फुहारो।

छत्रशाल से वीर बुन्देला,
उनकी कोन करे अवहेला,
वीर भूमि है वीर प्रसवनी,
लगो इतै वीरन को मेला,
आल्हा ऊदल वीर इतह के,
जिनको चलो दुधारो।

पन्ना को है नाम उजागर,
जो अनूप हीरन को आगर,
जहाँ कहुं खोदो हैं निकरत,
हीरन भरी इते पे गागर,
भरी न जाने कितनो धातै,
देखो माटीं टारो।

लोग इते के आल्हा गावें,
रामायण को पढ़े पढ़ावें,
चर्चा दिव्य इतै पै होवैं,
दिव्य ज्योति को सदा जगावै,
खेले कूदे नाचे गावैं,
सब जन महिना वारौ।

जा धरती हैं धाय हमारी,
माता जैसी हमको प्यारी,
दूध दहीं की कमी न ई में,
गया भैसैं घर घर सारी,
देखो आके ई की सुषमा,
आओ पथिक पधारो।

देवाशरीफ

बाराबंकी से लगभग १३ किलोमीटर दूर पर स्थित देवा मुसलमानों का एक पवित्र तीर्थ स्थल है। यहाँ पर प्रसिद्ध मुस्लिम संत हाजी वारिस अली शाह की मजार है। उनका वार्षिक उर्स प्रति वर्ष कार्तिक महीने में होता है। इस अवसर पर यहाँ बहुत बड़ा मेला लगता है जो कई दिनों तक चलता है और उसमें मुसलमान ही नहीं हिन्दू भी बहुत बड़ी संख्या में आते हैं। यहाँ तक कि कभी-कभी विदेशी पर्यटक भी उसमें आते हैं। इस मेले में पशु-प्रदर्शनी, मुशायरा, कवि-सम्मेलन, संगीत-सम्मेलन तथा औद्योगिक प्रदर्शनियाँ आदि मेले के आकर्षण और शोभा को बढ़ाती हैं। ●

पारिजात वृक्ष

जिला बाराबंकी के अन्तर्गत तहसील रामनगर के बुढ़वल स्टेशन से लगभग ८ मील पर ग्राम किन्तूर के समीप पारिजात वृक्ष स्थित है। ऐसा कहा जाता है कि इसे महाभारत काल में पांडु के पुत्र अर्जुन ने अपने वनवास-काल में नन्दन वन से लाकर पृथ्वी पर अरोपित किया था। यह वृक्ष वास्तव में बड़ा विशाल एवं विचित्र है इसकी प्रत्येक पंखुड़ी में पाँच-पाँच पत्तियाँ हैं इसका तना अत्यधिक चिकना है। इस वृक्ष के समीप स्थित मंदिर के संतों का कहना है कि इस वृक्ष से मिला हुआ एक प्राचीन कूप भी था जो कि वृक्ष के बढ़ने से बंद हो गया।

राज्य सरकार की ओर से बुढ़वल स्टेशन से पारिजात वृक्ष तक जाने के लिये पक्के मार्ग का भी निर्माण किया गया है। यहाँ तक बसे जाती हैं अब यहाँ बिजली का भी प्रबन्ध हो गया है जिससे दर्शनार्थियों को बड़ी सुविधा हो गयी है। प्रति वर्ष हजारों व्यक्ति इसका दर्शन करके सुख शान्ति का अनुभव करते हैं। ●

It is not Talk of Town

BUT OF

All Corners Far and Near.

*

Kamal Metal Industries

Manufacturers of Printed and Plain Containers

Specialists in Colour Printing of Containers

●

364/112, Bowli Bazar, Saadatganj, Lucknow.

वाराह क्षेत्र सोरों

कासगंज से नौ मील पर सोरों पूर्वोत्तर रेल का स्टेशन है। इसे शूकर या वाराह क्षेत्र भी कहते हैं। इसकी गणना भारत के पवित्र तीर्थों में होती है। पौराणिक कथा के अनुसार सृष्टि के आदि में सर्व प्रथम पृथ्वी का अविर्भाव यहीं हुआ था। इस तीर्थ में श्री वाराह भगवान का एक अति प्राचीन दर्शनीय मंदिर है। इस मंदिर में वाराह भगवान की चतुर्भुज विशाल मूर्ति है। भगवान के वाम भाग में लक्ष्मी जी की मूर्ति है। मंदिर के निकट ही हरिपदी पर वाराहघाट है।

हरिपदी गंगा अब एक विशाल सरोवर के रूप में है। कभी यहाँ गंगा का प्रवाह था। किन्तु अब गंगा यहाँ से काफी दूर पर बहती है। हरिपदी के चारों ओर अनेक मंदिर (छतरियाँ) और घाट हैं। मंदिरों में श्री योगेश्वर, श्री सोमेश्वर, श्री सीताराम और श्री बटुकनाथ के मंदिर विशेष उल्लेखनीय हैं। श्री सीताराम मंदिर के निकट पुराण प्रसिद्ध गृद्धवट तीर्थ है जहाँ एक अत्यन्त प्राचीन बट वृक्ष है। इसका महत्व प्रयाग के अक्षयवट और वृन्दावन के श्रीवट के समान माना जाता हैं। योगमार्ग तथा सूर्यकुण्ड भी यहाँ के प्रसिद्ध स्थान हैं।

यहीं पर सूर्यवंशी महाप्रतापी राजा भगीरथ का, जो गंगा को स्वर्ग से पृथ्वी पर पर लाये थे, मंदिर है। नये मंदिरों में श्री द्वारिकानाथ का मंदिर दर्शनीय है। नंददास जी द्वारा स्थापित श्यामायन (बलदेव जी का) मंदिर भी यहां है।

मार्गशीर्ष शुक्ल ११ को सोरों में बहुत बड़ा मेला लगता है जिसमें दूर-दूर से सहस्त्रों लोग आते हैं। स्थानीय लोगों का कहना है कि भक्त कवि तुलसीदास की यह जन्म भूमि है।

कुरुक्षेत्र

कुरुक्षेत्र को यदि प्राचीन भारतीय इतिहास का केन्द्र कहें तो अत्युक्ति न होगी। यहीं पर वैदिक ऋषियों ने सर्वप्रथम वेद मंत्रों का उच्चारण किया था, यहीं ब्रह्मादिक देवताओं ने यज्ञ किये थे और यही वह स्थान है जहां पाण्डवों और कौरवों का जगत् प्रसिद्ध महाभारत युद्ध हुआ था और अट्ठारह अक्षौहिणी सेना के वीरों के रक्त से इसकी धरती सिंचित हुई थी। यही वह पावन भूमि है जहाँ भगवान श्रीकृष्ण ने गीता का अमर संदेश दिया था।

आधुनिक युग में भी कुरुक्षेत्र धर्म और संस्कृति का केन्द रहा तथा इतिहास की अनेक प्रमुख घटनाओं से सबंधित रहा।

३०० ई० पू० यूनानी राजदूत मेगस्थनीज यहां आया था और उसने यहाँ की सुव्यवस्था, सुख-वैभव तथा सच्चरित्रता की प्रशंसा अपने यात्रा विवरण में की है। महाराजा हर्ष के समय में सातवीं शताब्दी में चीनी यात्री ह्वेनसांग जब भारत आया तो वह भी यहाँ आया था और यहाँ की धार्मिक प्रगति और यहाँ के प्रमुख नगर थानेसर की आर्थिक सम्पन्नता की प्रशंसा की थी।

परवर्तीकाल में पानीपत कैथल और करनाल के इतिहास प्रसिद्ध युद्ध इसी क्षेत्र की भूमि पर हुये थे।

दर्शनीय स्थल

ब्रह्मसर या कुरुक्षेत्र सरोवर

कुरुक्षेत्र रेलवे स्टेशन से एक मील दूर लगभग १४५० गज लम्बा तथा ७०० गज चौड़ा विशाल ब्रह्मसर नामक सरोवर है जो आजकल कुरुक्षेत्र सरोवर के नाम से ही प्रसिद्ध है। इस सरोवर में दो द्वीप भी हैं। इन द्वीपों में अनेक प्राचीन मंदिर तथा ऐतिहासिक महत्व के स्थान हैं

इस में भगवान् विष्ण का मंदिर, श्रवणनाथ मठ तथा चन्द्रकूप आदि प्रमुख तीर्थ स्थल हैं।

सरोवर के तट पर एक ओर प्राचीन मठ धर्मशालायें हैं, यहीं पर कुरुक्षेत्र जीर्णोद्धार सोसाइटी की ओर से स्थापित कुरुक्षेत्र पुस्तकालय है जिसे गीताभवन भी कहते हैं। दक्षिणी ओर के तट पर गुरु नानक देव की स्मृति में बना हुआ एक गुरुद्वारा भी है। कहते हैं यहां श्रीनानकदेव जी, गोविन्दसिंह जी तथा कई अन्य सिक्ख गुरु पधारे थे। श्री विड़ला द्वारा गीता मंदिर का भी निर्माण हो रहा है।

संनिहित सर:—यह ब्रह्मसर से छोटा है पर यात्री सर्वप्रथम यहीं आते हैं। सूर्य ग्रहण के अवसर पर बहुत बड़ी संख्या में यात्री यहाँ आकर स्नान करते हैं।

चन्द्रकूप:—ब्रह्मसर के बड़े द्वीप पर यह प्राचीन कूप हैं कहते हैं युधिष्ठर ने यहाँ पर महाभारत के बाद विजय स्तम्भ बनवाया था जो अब नहीं है।

भद्रकाली मंदिर:—पाँडवों ने विजय की कमना से यहाँ माँ काली का पूजन किया था।

भीष्म शर-शैय्या:— थानेसर से लगभग डेढ़ मील पर स्थित इस स्थान के संबंध में कहा जाता है कि यहीं भीष्म शर शैय्या पर सोये थे। यात्री यहां के पवित्र सरोवर में स्नान तथा पूजन करते हैं।

अमींन या चक्रव्यूह:— यह अमीन गाँव में हैं। कहते हैं द्रोणाचार्य ने यहीं पर चक्रव्यूह की रचना की थी।

वाणगंगा:—ब्रह्मसर से लगभग तीन मील दूर है। कहते हैं भीष्म की शर-शैय्या के समय अर्जुन ने यही पर बाण मार कर धरती से जल की धार निकाली थी। यहाँ पर पक्का सरोवर तथा एक मंदिर है।

कुरुक्षेत्र की पावन भूमि पर वैसे तो पग-पग पर तीर्थ और पवित्र स्थान हैं पर यहाँ का सबसे बड़ा महात्म्य है सूर्यग्रहण के अवसर पर यहाँ के पावन सरोवरों में स्नान करना। इस अवसर पर यहाँ बहुत बड़ा मेला लगता है। कहा जाता है इस मेले की परम्परा तब से चली आती है जब एक बार सूर्यग्रहण के अवसर पर श्रीकृष्ण अपने सब यदुवंशियों के साथ द्वारिका से कुरुक्षेत्र पधारे थे।

दिल्ली

भारतवर्ष की वर्तमान राजधानी दिल्ली को सुदूर अतीत से ही भारत की राजधानी होने का गौरव प्राप्त है। कितने ही राजवंशों ने इसे अपनी राजधानी बनाया था। लगभग ३००० वर्ष पूर्व महाभारत काल की पांडवों की राजधानी इन्द्रप्रस्थ इसी स्थान पर थी। तत्पश्चात अनेक हिन्दू राजाओं ने इसे अपनी राजधानी बनाया। बारहवीं शताब्दी से तुर्कों के दिल्ली पर आक्रमण आरम्भ हो गये और उसके बाद से अनेक मुस्लिम राजवंशों ने यहां शासन किया और दिल्ली को अपनी राजधानी बनाया और अंग्रेजों के आने से पूर्व तक दिल्ली ही भारत की राजधानी थी। अंग्रेजों ने भी आरम्भ में अपने विजित राज्य की राजधानी कलकत्ता बनाई, किन्तु बाद को पूरे देश पर अधिकार हो जाने के बाद उन्होंने भी दिल्ली को ही राजधानी बनाया।

दिल्ली को जहाँ सहस्रों वर्षों से राजधानी होने का गौरव रहा है वहीं वह अनेक बार उजड़ी और फिर से बसी है।

दर्शनीय स्थान

कुतुब मीनार:—नई दिल्ली से लगभग १० किलोमीटर दूर महरौली कस्बे के निकट विश्व-प्रसिद्ध सर्वोच्च मीनार है जो कुतुब मीनार के नाम से विख्यात है। बहुत से

विद्वानों के अनुसार इसे हिन्दू सम्राट पृथ्वीराज ने बनवाया था और कीर्ति स्तम्भ कहते थे। किन्तु इतिहासकारों ने इसे गुलाम वंश के शासक कुतुबुद्दीन द्वारा बनवाया हुआ लिखा है जिसे उसकी मृत्यु के बाद उसके दामाद इल्तुमिश ने सन १२११-३६ में पूर्ण कराया था।

जो भी हो यह मीनार स्थापत्य कला की दृष्टि से अद्वितीय है। इसकी सात मंजिलें थीं जिसमें से दो मंजिले बाद को गिर गईं। फिर भी यह इतनी ऊँची है कि ऊपर से नीचे देखने पर आदमी एक छोटे बच्चे सा दिखाई पड़ता है। इसके चारों ओर की दीवारों पर बड़े कलात्मक बेलबूटे बने हैं तथा कुरान की आयतें खुदी हैं।

कुतुब मीनार के पास ही हिन्दू राज्य काल के खंडहर हैं जिनमें चौथी शताब्दी का एक लौह स्तूप निर्माण कौशल एवं तत्कालीन भारतीय बिज्ञान का अद्भुत इतिहास लिये खड़ा है। आज के विकासशील देशों के कुशल वैज्ञानिक भी इसे देखकर आश्चर्य चकित हो जाते हैं कि इतना बड़ा इस्पात का स्तम्भ एक खण्ड में कैसे ढाला गया होगा।

लाल किला:—दिल्ली का ऐतिहासिक लाल किला दिल्ली स्टेशन के निकट है। लाल पत्थर की चहारदीवारी और इसके चारों ओर की गहरी खाई से घिरा हुआ लाल किला पर्यटक को दूर से ही आकर्षित करता है।

किले के भीतर अनेक भव्य दरबार और उद्यान हैं जिनमें से दीवाने आम, दीवाने खास, रंग-महल, मोती मस्जिद तथा शाही हमामखाना प्रमुख हैं। प्राचीन चित्रों, मूर्तियों एवं कलात्मक वस्तुओं का एक सुन्दर संग्रहालय शीशमहल

में स्थित है।

जामा मस्जिद:— लाल किले के सामने सड़क के पार लाल पत्थर की बनी हुई विशाल जामा मस्जिद है। इसके विशाल प्रांगण मे एक साथ हजारों मुसलमान प्रत्येक शुक्रवार को तथा अन्य धार्मिक अवसरों पर नमाज पढ़ते हैं।

अंग्रेजी शासन काल में नई दिल्ली में कुछ भव्य भवनों आदि का निर्माण हुआ जिनमें से राष्ट्रपति भवन, पार्लियामेंट भवन, तथा आस-पास के उद्यान दर्शनीय हैं। नई दिल्ली के नेशनल म्यूजियम में देश के भिन्न-भिन्न स्थानों से प्राप्त ऐतिहासिक वस्तुओं और मूर्तियों आदि का बड़ा सुन्दर संग्रह है। वहीं पास ही जयपुर के ज्योतिष शास्त्र तथा खगोल विद्या के प्रेमी महाराजा जयसिंह द्वारा बनवायी हुई आवजरवेटरी है जो जन्तर मन्तर के नाम से प्रसिद्ध है।

इधर हाल के वर्षों में यहाँ के चिड़ियाघर का भी विकास हुआ है और उसमें दूर-दूर से पशु-पक्षियों को लाकर रक्खा गया है।

महात्मा गाँधी के समाधि-स्थल राजघाट तथा जवाहर लाल नेहरू के शान्ति वन को देखने तथा श्रद्धा सुमन चढ़ाने भी पर्यटक आते हैं। राजघाट में गाँधी स्मारक संग्रहालय में महात्मा गांधी की निजी वस्तुओं एवं चित्रों आदि का संग्रह है।

पुरानी इमारतों में हुमायूँ का मकबरा, पांडवों का पुराना किला, निजामुद्दीन की मजार भी दर्शनीय हैं।

स्वाधीनता के बाद, विशेष रूप से पिछले दशक में नई दिल्ली में बहुत से सरकारी तथा गैर सरकारी बहु मंजिली भव्य भवनों का निर्माण हुआ है, सुन्दर पार्कें बनाई गई हैं तथा नगर को स्वच्छ और सुन्दर बनाने की दिशा में बहुत काम हुआ है और अब प्रत्येक देशवासी अपनी राजधानी दिल्ली पर गर्व कर सकता है।

'वैसी अच्छी जगह और कहीं नहीं है। वहां से दून वियू मिलता है। नहीं समझा? देहरादून दिखाई पड़ता है। रात के अंधेरे में जगमगाता हुआ दून! ओह कितना वंडरफुल सीन होता है।'

'लेकिन हुजूर मेरा खेत? मेरा घर...वह घर जिसने मुझे और मेरे बाप दादा को ही नहीं आपको भी कभी छाया दी थी। नहीं-नहीं उसे बचाइये। मैं बर्बाद हो जाऊँगा। मेरे खेत की फसल तैयार खड़ी है बस कुछ ही दिन की देर है।'

'ठीक है, लेकिन काम को जल्दी ही खत्म करना है। तुम कहीं और अपना खेत और घर बना लेना।

'यह आप कह रहे है साब?... मैं अहसान जताना नहीं चाहता। लेकिन मजबूर होकर कह रहा हूं कि एक दिन जिसने आपको जीवन दान दिया, आप उसे थोड़ी सी जमीन नहीं दे सकते।' और वह फफक कर रो उठा—'मुझे बर्बाद करके आपको क्या मिलेगा?,

मोनी हतबुद्धि सी खड़ी थी। उसकी समझ में नहीं आ रहा था क्या करे! कुछ सोचकर उसने मिसेज हंट के पैर पकड़ लिये, गिड़गिड़ा पड़ी—मेम साहब, आज मैं आप से भीख मागती हूं उसी बख्शीश की जो आप मुझे अपने साहब की जान बचाने के लिये देना चाहती थीं। मुझे मेरी जमीन बख्शीश में दे दीजिये।

मिसेज हंट को कुछ तरस आया और उन्होंने हंट से शिफारिश की —'इन लोगों का घर छोड़ दो न डियर, क्लब कहीं और बनवा दो। आखिर इन लोगों का हम पर कितना बड़ा अहसान है।'

'डार्लिंग, वैसी अच्छी जगह और कहीं पर नहीं है। फिर तुम जानती हो कि सड़क बनाने के समय बीच में आने वाले उन पेड़ों को भी हमें काटना पड़ता है जिसके फल हमने खाये होते हैं।'

मिसेज हंट ने सिर झुका लिया और लज्जित भाव से बोलीं—'हम मजबूर हैं कि तुम्हारा कोई मदद नहीं कर सका।'

उपकार का पुरस्कार लेकर दोनों भारी कदमों से लौट आये। खेत में फावड़े चल रहे थे। पके हुए धान के पौधे कट-कट कर भूमि पर अनाथ बालक से लोट रहे थे। बृद्ध

से देखा न गया और वह दौड़ कर बीच में लेट गया और चिल्लाने लगा —हत्यारों ! पहले मेरे शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर डालो फिर मेरे खेत को हाथ लगाना।'

काम में बाधा पड़ गई लोग उसे पकड़ कर बाहर करते और वह फिर खेत में लेट जाता। उधर पहाड़ी को समतल करने के लिये डायनामायट लगाई जा रही थी। कुछ ही क्षणों में विस्फोट होगा और उसके दूसरे ही क्षण उसकी जीर्ण कुटिया पत्थरों के टुकड़ों से साथ हवा में उड़ कर बिखर जायेगी। मोनी भाग कर ऊपर झोपड़ी में खड़ी हो गयी।

हत्या के भय से लोगों ने हंट को सूचना देना ही उचित समझा। हंट ने आकर स्थिति को देखा फिर अपने कर्मचारियों पर बिगड़ उठा—'क्या तुम इतने आदमी एक बूढ़े आदमी और एक लड़की को पकड़ कर अलग नहीं कर सकते।'

आज्ञाकारी काले शिकारी कुत्ते अपने प्रभु की आज्ञा पर दौड़ पड़े। दस पांच आदमियों ने वृद्ध और मोनी को कस कर पकड़ लिया वे उनके पाश में तड़पड़ाते रहे, चीखते रहे, रोते रहे। खेत वीरान हो गया। डायनामाइट में आग लगा दी गयी। निर्दयता हंस पड़ी दिशायें रो उठीं और एक भीषण गर्जन के साथ हिमालय का कलेजा फट गया। कुटिया का जीर्ण कंकाल आकाश में बिखर कर पर्वत की रानी के जन्म की कहानी शून्य आकाश में लिख गया।

छतर मंजिल:—गोमती के किनारे छतर मंजिल नवाबी जमाने की सुन्दर पंचमंजली इमारत आज भी अपने गौरव को संजोये खड़ी है। आज उसमें सरकारी दफ्तर है तथा केन्द्रीय औषधि अनुसंधानशाला है।

लाल बारादरी:—छतर मंजिल के सामने ही प्रसिद्ध लाल बारादरी है। उसमें आज से कुछ काल पूर्व राज्य का संग्रहालय था। आजकल उसमें ललित कला अकादमी का कार्यालय है।

सिकन्दर बाग:—नवाबी जमाने का यह अत्यन्त खूबसूरत बाग गोमती के तट पर है और आजकल उसे राष्ट्रीय वनस्पति उद्यान में बदल दिया गया है। यह आरम्भ में बागवानी का केन्द्र था परन्तु अब इसका स्वरूप वानस्पतिक, पादप रासायनिक तथा पादप उद्योगों को उजागर करने का हो गया है। यहाँ नये पौधों को उगाने, संवर्धन तथा सुधार कार्य किया जाता है। पौधों की नयी नस्लें भी तैयार की जाती हैं। यहाँ देश के सभी भागों में होने वाले दुर्लभ वृक्षों तथा पौधों का बड़ा सुन्दर संग्रह है।

अजायबघर:—नवाबी समय के सुन्दर बनारसी बाग में यहां का प्रसिद्ध चिड़ियाघर है। देश-विदेश के सुन्दर एवं अद्भुत पशु पक्षियों को यहाँ लाकर रक्खा गया है। इस चिड़ियाघर की सबसे बड़ी विशेषता

यह है कि पशुपक्षियों के रहने के लिये उनकी सुविधानुसार प्राकृतिक वातावरण, कृत्रिम वन-पर्वत तालाब आदि बनाकर उन्हें रक्खा गया हैं।

इसी उद्यान में एक सुन्दर भवन में यहाँ का संग्रहालय है जिसमें प्राचीन काल की मूर्तियाँ, कलात्मक वस्तुयें, प्राचीन परिधान, वाद्ययंत्र एवं मृत पशु-पक्षी आदि रक्खे हैं। यहाँ मिस्र की एक ममी भी लाकर रक्खी गयी है जो कई सहस्त्र वर्ष पूर्व की बताई जाती है। संग्रहालय आधुनिक ढंग से सजाया गया है।

चारबाग स्टेशन:—लखनऊ का प्रमुख स्टेशन जिसे आमतौर पर चारबाग स्टेशन कहते हैं। अँग्रेजी शासन काल में बनी हुई इमारतों में अत्यन्त सुन्दर है। इसका ऊपरी भाग गुम्बद शैली का है और दूर से ही दर्शक को आकर्षित करता है।

विश्वविद्यालय:—गोमती के दूसरे तट के निकट ही यहाँ का विश्वविद्यालय है जो खुले सुन्दर स्थान में है। विश्वविद्यालय भवन के निर्माण में भी प्राचीन शाही इमारतों की शैली की झलक है।

हनुमान सेतु और हनुमान मंदिर:—पुराने मंकी ब्रिज का नवीनीकरण होने पर उसके निकट ही हनुमान मंदिर की स्थापना हुई है। इस मंदिर में पूरे साइज की हनुमान की संगमरमर की सुन्दर मूर्ति है। हनुमान जी अपने दोनों हाथों से अपना वक्ष चीर कर श्री राम-लक्ष्मण का दर्शन करा रहे हैं। मूर्ति दर्शनीय है।

रजि० नं०—आर० एन० 23344/72 पत्रालय रजि० नं०—एल-29

Printed at Bharatiya Jagat Press, 198, Tazikhana, Lucknow.